B.Ed.-E-42/B.Ed-SE-42

भौतिकीय विज्ञान का अध्यापन विज्ञान

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड – एक : भौतिकीय विज्ञान के आधार 3–52

इकाई 1 : भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति 7

इकाई 2 : भौतिकीय विज्ञान अधिगम, भौतिकीय विज्ञान शिक्षण–अधिगम का मनोविज्ञान, रचनावाद और सक्रियवाद 19

इकाई 3 : पाठ्यचर्या सुधार एवं भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उदेश्य एवं प्राप्य उद्देश्य 33

खण्ड –दो : भौतिकीय विज्ञान की शिक्षण रणनीतियाँ–I 51–86

इकाई 4 : भौतिकीय विज्ञान शिक्षण की अवधारणा 55

इकाई 5 : प्रदर्शन विधि एवं खोज विधि द्वारा अधिगम 63

इकाई 6 : भौतिकीय विज्ञान अधिगम में समूह अधिगम, समूह कार्य, सहकारी एवं सहयोगी रणनीतियाँ 71

खण्ड – तीन : भौतिकीय विज्ञान की शिक्षण रणनीतियाँ–II 87–136

इकाई 7 : भौतिकीय विज्ञान अधिगम में पाठ्य–सहगामी क्रियाएं एवं गैर–औपचारिक उपागम 91

इकाई 8 : भौतिकीय विज्ञान में अभिक्रमित अनुदेशन 107

इकाई 9 : भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम 117

खण्ड – चार : भौतिकीय विज्ञान अधिगम 'का' एवं 'के' लिए आकलन 137–182

इकाई 10 : शिक्षण में मापनीय उदेश्यों का निर्धारण, सामान्यीकरण, समस्या समाधान विधि एवं योजना विधि 141

इकाई 11 : उत्पाद और प्रक्रिया परिणामों के आकलन के लिए परीक्षण पदों का निर्माण, नैदानिक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण 161

इकाई 12 : इकाई परीक्षण का निर्माण, ब्लू प्रिंट, परीक्षण एवं पश्न पत्र निर्माण 171

खण्ड – पाँच : भौतिकीय विज्ञान में अधिगम संसाधन 183–232

इकाई 13 : अधिगम संसाधनः अर्थ, प्रकार, निर्माण और संसाधनों का उपयोग 187

इकाई 14 : पाठ्य–पुस्तक, जर्नल, हस्तपुस्तिका एवं शिक्षार्थी कार्य पुस्तिका 203

इकाई 15 : भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला, कक्षा में और कक्षा के बाहर भौतिकीय अधिगम 215

B.Ed.-E-42/B.Ed-SE-42

भौतिकीय विज्ञान का अध्यापन विज्ञान

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड – 1

भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति

इकाई – 1

भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति

इकाई – 2

भौतिकीय विज्ञान अधिगम, भौतिकीय विज्ञान शिक्षण–अधिगम का मनोविज्ञान, रचनावाद और सक्रियवाद

इकाई – 3

पाठ्यचर्या सुधार एवं भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य एवं प्राप्य उद्देश्य

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रोफेसर सीमा सिंह — उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज कुलपति

विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर पी० के० स्टालिन — निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय — प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर छत्रसाल सिंह — प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर के० एस० मिश्रा — पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर धनन्जय यादव — विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर मीनाक्षी सिंह — आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

डॉ० जी० के० द्विवेदी — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ० दिनेश सिंह — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ० सुरेन्द्र कुमार — सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ० दिलीप कुमार सिंह — सहायक आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, सी0एम0पी0डिग्री कॉलेज, प्रयागराज (इकाई 1,2,3,4,5,6,7,8,9,10,11,12,13,14,15)

सम्पादक

प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय — प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परिमापक

प्रोफेसर नागेन्द्र कुमार — आचार्य, शिक्षा संकाय, बी0एच0यू0 वाराणसी

समन्वयक

डॉ० दिनेश सिंह — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ० सुरेन्द्र कुमार — सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक

उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

ISBN: 978-81-963573-2-0

U. P. Rajarshi Tandon Open University, Prayagraj

©UPRTOU, 2023. Pedagogy of Biological Science is made available under a Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0

http://creativecommons.org/licences/by-sa/4.0

Published by: Uttar Pradesh Rajarshi Tandon Open University Prayagraj, Registrar by Vinay Kumar-2024

Printed by: Cygnus Information Solution Pvt.Ltd., Lodha Supremus Saki Vihar Road, Andheri East Mumbai

ETH-007

B.Ed-E-42/4
B.Ed-SE-42/4

खण्ड परिचय

भौतिकीय विज्ञान के आधार

प्रस्तुत खण्ड में भौतिकीय विज्ञान के आधार की चर्चा करेगें। प्रस्तुत खण्ड में भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति, भौतिकीय विज्ञान अधिगम, भौतिकीय विज्ञान शिक्षण–अधिगम का मनोविज्ञान और रचनात्मकता, पाठ्यक्रम सुधार एवं भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य का विवेचन करेगें। भौतिकीय विज्ञान के आधार की चर्चा तीन इकाईयों में विभाजित कर करेगें, जिनका विवरण इस प्रकार है–

इकाई–1 : प्रस्तुत इकाई में भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में भौतिकीय विज्ञान का अर्थ और परिभाषा, भौतिकीय विज्ञान का इतिहास, भौतिकीय विज्ञान की प्रमुख शाखाएं, भारत में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का इतिहास एवं भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई–2 : प्रस्तुत इकाई में भौतिकीय विज्ञान अधिगम, भौतिकीय विज्ञान शिक्षण–अधिगम का मनोविज्ञान और रचनात्मकता के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में भौतिकीय विज्ञान अधिगम, अधिगम की प्रकृति, अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक, शिक्षक से सम्बन्धित कारक, शिक्षार्थी से सम्बन्धित कारक, पाठ्यवस्तु से सम्बन्धित कारक, अधिगम–व्यवस्था से सम्बन्धित कारक, वातावरण से सम्बन्धित कारक, भौतिकीय विज्ञान शिक्षण–अधिगम का मनोविज्ञान, ज्ञान के निर्माण का अर्थ एवं परिभाषाएँ, ज्ञान के निर्माण की विशेषताएँ, अधिगम ज्ञान के निर्माण के रूप में रचनात्मकता या निर्मितवाद और निर्मितवादी अधिगम आधारित विज्ञान शिक्षण विधियाँ रचनात्मकता के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई–3 : प्रस्तुत इकाई में पाठ्यक्रम सुधार एवं भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में पाठ्यक्रम का अर्थ और परिभाषा, भौतिकीय विज्ञान का पाठ्यक्रम में स्थान, भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का महत्व, बौद्धिक मूल्य, सांस्कृतिक मूल्य, सौन्दर्यात्मक मूल्य, मनोवैज्ञानिक मूल्य, सामाजिक मूल्य, व्यावहारिक मूल्य, व्यावसायिक मूल्य, नैतिक मूल्य, लक्ष्य एवं उद्देश्य, कोठारी कमीशन एवं भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य, प्राथमिक स्कूल स्तर, उच्च प्राथमिक स्तर, निम्न माध्यमिक स्तर, उच्च माध्यमिक स्तर, वर्तमान संदर्भ में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य, ज्ञान सम्बन्धी उद्देश्य, वैज्ञानिक दृष्टिकोण सम्बन्धी उद्देश्य, रुचि सम्बन्धी उद्देश्य, प्रशंसात्मक सम्बन्धी उद्देश्य, समझ सम्बन्धी उद्देश्य और प्रयोग सम्बन्धी उद्देश्य के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई–1 भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 भौतिकीय विज्ञान का अर्थ और परिभाषा

1.3.1 भौतिकीय विज्ञान का अर्थ

1.3.2 भौतिकीय विज्ञान की परिभाषा

1.4 भौतिकीय विज्ञान का इतिहास

1.5 भौतिक विज्ञान की प्रमुख शाखाएं

1.5.1 परम्परागत प्राचीन भौतिकीय विज्ञान

1.5.2 आधुनिक भौतिकीय विज्ञान

1.6 भारत में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का इतिहास

1.7 भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति

1.8 सारांश

1.9 अभ्यास प्रश्न

1.10 चर्चा के बिन्दु

1.1 प्रस्तावना

भौतिकीय विज्ञान ऊर्जा विषयक विज्ञान है और इसमें ऊर्जा के रूपांतरण तथा उसके द्रव्य संबंधों की विवेचना की जाती है। इसके द्वारा प्राकृत जगत और उसकी भीतरी क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। स्थान, काल, गति, द्रव्य, विद्युत, प्रकाश, ऊष्मा तथा ध्वनि इत्यादि अनेक विषय इसकी परिधि में आते हैं। यह विज्ञान का एक प्रमुख भाग है। इसके सिद्धांत समूचे विज्ञान में मान्य हैं और विज्ञान के प्रत्येक अंग में लागू होते हैं।

प्रस्तुत इकाई में हम भौतिकीय विज्ञान का अर्थ और परिभाषा, भौतिकीय विज्ञान का इतिहास, भौतिकीय विज्ञान की प्रमुख शाखाएं, भारत में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का इतिहास एवं भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति के विभिन्न पहलुओं का वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति को समझने में सुविधा होगी।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेगें कि–

- भौतिकीय विज्ञान का अर्थ को जान सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान को परिभाषित कर सकेंगें।
- भौतिकीय विज्ञान के इतिहास को जान सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान की प्रमुख शाखाओं का वर्णन कर सकेंगे।
- भारतीय परिप्रेक्ष्य में भौतिकीय विज्ञान के शिक्षण के इतिहास को जान सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।

1.3 भौतिकीय विज्ञान का अर्थ और परिभाषा

1.3.1 भौतिकीय विज्ञान का अर्थ

'भौतिक विज्ञान' या 'भौतिकी' अंग्रेजी शब्द Physics का हिन्दी रूपान्तर है जो ग्रीक भाषा के शब्द फ्यूसिस (fusis) से बना है जिसका अर्थ होता है 'प्रकृति'। अतः विज्ञान की जिस शाखा में प्रकृति तथा प्राकृतिक घटनाओं का अध्ययन किया जाता है वही भौतिकीय विज्ञान है। परन्तु प्रकृति वास्तव में द्रव्य, ऊर्जा एवं उनकी अन्योन्यक्रियाओं की अभिव्यक्ति है। विषय–वस्तु की दृष्टि से हम भौतिकीय विज्ञान को इस प्रकार भी परिभाषित करते हैं– "द्रव्य, ऊर्जा तथा उनकी अन्योन्य क्रियाओं के वैज्ञानिक अध्ययन को भौतिकीय विज्ञान कहते हैं।" चूंकि सभी वस्तुएं द्रव्य और ऊर्जा से बनी हैं, अतः भौतिकीय विज्ञान में सभी पदार्थों का अध्ययन समाहित है। इस दृष्टि से भौतिकीय विज्ञान एक मूलभूत विज्ञान है।

जैसा की विदित है भौतिकीय विज्ञान की आधुनिक परिभाषा में, पदार्थ व ऊर्जा और उनके बीच संबंधों के अध्ययन को भौतिकीय विज्ञान कहा जाता है। पदार्थ उस वस्तु को कहा जाता है जिस में वजन हो और क्षेत्र को घेरे, उसे पदार्थ कहा जाता है। इसका मतलब यह हुआ कि पृथ्वी से लेकर धूल मिट्टी तक पदार्थ हैं। जिस किसी भी चीज में वजन नहीं होगा उसे पदार्थ नहीं कहा जा सकता है। पदार्थ को ना तो बनाया जा सकता है ना ही किसी प्रकार से बेकार किया जा सकता है, इसे सिर्फ एक अवस्था से दूसरी अवस्था में बदला जा सकता है। कार्य करने की क्षमता को ऊर्जा कहते हैं, ऊर्जा के बिना कोई भी कार्य संभव नहीं है। ऊर्जा को ना तो बनाया जा सकता है ना ही बेकार किया जा सकता है इसे सिर्फ एक अवस्था से दूसरे अवस्था में परिवर्तित किया जा सकता है।

न्यूटन और आइंस्टाइन को भौतिकीय विज्ञान का जनक माना जाता है। बल और विस्थापन के गुणन को कार्य या ऊर्जा कहते हैं। किसी भी वस्तु में बल लगाया जाए और उसका विस्थापन हो जाए तो कहा जाता है कि उर्जा के कारण इसमें गति आया, इस ज्ञान को न्यूटन ने अपने गति नियम में समझाया है। $E=MC^2$, में आइंस्टाइन ने साफ तौर पर बताया है पदार्थ, ऊर्जा में कैसे परिवर्तित होता है। दोनों भौतिकीय विज्ञान के जनकों के सम्प्रत्यों से साफ पता चलता है कि पदार्थ और ऊर्जा में संबंध हैं। आज के समय जो भौतिकीय विज्ञान हम पढ़ते हैं उसमें हमें पदार्थ और ऊर्जा अध्ययन करना होता है।

1.3.2 भौतिकीय विज्ञान की परिभाषा

विज्ञान कि वह शाखा जिसमे पदार्थ के भौतिक गुणों का अध्ययन किया जाता है तथा प्रकृति में उपस्थित विभिन्न प्रकार की उर्जाओं का अध्ययन सुव्यस्थित रूप से किया जाता हो, भौतिक विज्ञान कहलाता है।

भौतिक विज्ञान, विज्ञान की वह शाखा है जिसमे उर्जा के विभिन्न स्वरूपों तथा द्रव्य और उर्जा के विभिन्न क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। पहले यह समझा जाता था कि उर्जा का द्रव्य से कोई सम्बन्ध नही होता है, परन्तु आइन्स्टीन ने यह सिद्ध किया कि द्रव्य तथा उर्जा मूल रूप से एक ही राशि है। द्रव्य को उर्जा में तथा उर्जा को द्रव्य में परिवर्तित किया जा सकता है।

प्रकृति में होने वाली परिघटनाओं में से प्रत्येक घटना, कुछ विशेष नियमों के अंतर्गत होती है, इन नियमों को जानने और इनका अध्ययन करना ही भौतिक विज्ञान है।

भौतिक विज्ञान, विज्ञान की वह शाखा है जिसके अंतर्गत प्राकृतिक और ब्रम्हाण्ड में होने वाली घटनाओं का अध्ययन किया जाता है एवं इसमें उर्जा के विभिन्न स्वरूपों, द्रव्य, यांत्रिकी, प्रकाश, ध्वनि, नाभिक की संरचना, जड़त्व, गुरुत्वाकर्षण, वेग, त्वरण, चाल, समय, दूरी, बल, कार्य, शक्ति, उर्जा आदि का अध्ययन करते है।

1.4 भौतिकीय विज्ञान का इतिहास

भौतिकीय विज्ञान अथवा भौतिकी, प्रकृति विज्ञान की एक विशाल शाखा है। भौतिकीय विज्ञान को परिभाषित करना कठिन है। कुछ विद्वानों के मतानुसार यह ऊर्जा विषयक विज्ञान है और इसमें ऊर्जा के रूपांतरण तथा उसके द्रव्य संबन्धों की विवेचना की जाती है। इसके द्वारा प्राकृत जगत और उसकी आन्तरिक क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। स्थान, काल, गति, द्रव्य, विद्युत, प्रकाश, ऊष्मा तथा ध्वनि इत्यादि अनेक विषय इसकी परिधि में आते हैं। यह विज्ञान का एक प्रमुख विभाग है। इसके सिद्धांत समूचे विज्ञान में मान्य हैं और विज्ञान के प्रत्येक अंग में लागू होते हैं। इसका क्षेत्र विस्तृत है और इसकी सीमा निर्धारित करना अति दुष्कर है। सभी वैज्ञानिक विषय अल्पाधिक मात्रा में इसके अंतर्गत आ जाते हैं। विज्ञान की अन्य शाखायें या तो सीधे ही भौतिकीय विज्ञान पर आधारित हैं, अथवा इनके तथ्यों को इसके मूल सिद्धांतों से संबद्ध करने का प्रयत्न किया जाता है।

भौतिकीय विज्ञान का महत्व इसलिये भी अधिक है कि अभियांत्रिकी तथा शिल्प विज्ञान की जन्मदात्री होने के नाते यह इस युग के अखिल सामाजिक एवं आर्थिक विकास की मूल प्रेरक है। बहुत पहले इसको दर्शन शास्त्र का अंग मानकर नैचुरल फिलॉसोफी या प्राकृतिक दर्शनशास्त्र कहते थे, किंतु 1870 ईस्वी के लगभग इसको वर्तमान नाम भौतिकीय विज्ञान या फिजिक्स द्वारा संबोधित करने लगे। धीरे–धीरे यह विज्ञान उन्नति करता गया और इस समय तो इसके विकास की तीव्र गति देखकर, वर्तमान भौतिक विज्ञानियों को भी आश्चर्य हो रहा है। धीरे–धीरे इससे अनेक महत्वपूर्ण शाखाओं की उत्पत्ति हुई, जैसे रासायनिक भौतिकी, तारा भौतिकी, जीवभौतिकी, भूभौतिकी, नाभिकीय भौतिकी, आकाशीय भौतिकी इत्यादि।

भौतिकीय विज्ञान का मुख्य सिद्धांत ''उर्जा संरक्षण का नियम'' है। इसके अनुसार किसी भी द्रव्य–समुदाय की ऊर्जा की मात्रा स्थिर होती है। समुदाय की आंतरिक क्रियाओं द्वारा इस मात्रा को घटाना या बढ़ाना संभव नहीं। ऊर्जा के अनेक रूप होते हैं और उसका रूपांतरण हो सकता है, किंतु उसकी मात्रा में किसी प्रकार परिवर्तन करना संभव नहीं हो

सकता। आइंस्टाइन के सापेक्षिकता सिद्धांत के अनुसार द्रव्यमान भी उर्जा में बदला जा सकता है। इस प्रकार ऊर्जा संरक्षण और द्रव्यमान संरक्षण दोनों सिद्धांतों का समन्वय हो जाता है और इस सिद्धांत के द्वारा भौतिकी और रसायन एक दूसरे से संबद्ध हो जाते हैं।

भौतिकीय विज्ञान को मोटे रूप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। 1900 ईस्वी से पूर्व जो भौतिक ज्ञान अर्जित किया गया था और तत्संबंधी जो नियम तथा सिद्धांत प्रतिपादित किए गए थे, उनका समावेश परम्परागत भौतिकी में किया गया। उस समय की विचारधारा के प्रेरणास्त्रोत गैलिलियो (1564–1642 ईस्वीं) तथा न्यूटन (1642–1727) थे। परम्परागत भौतिकी को मुख्यतः यांत्रिकी (Machanics), ध्वनिकी (Echostatics), ऊष्मा (Heat), विद्युत चुंबकत्व (Magnetics) और प्रकाशिकी (Optics) में विभाजित किया जाता है। ये शाखायें इंजीनियरिंग तथा शिल्प विज्ञान की आधारशिलायें हैं और भौतिकी की प्रारंभिक शिक्षा इनसे ही शुरू की जाती है।

1900 ईस्वी के पश्चात अनेक क्रांतिकारी तथ्य ज्ञात हुए, जिनको परम्परागत भौतिकीय विज्ञान के ढाँचे में बैठाना कठिन है। इन नये तथ्यों के अध्ययन करने और उनकी गुत्थियों को सुलझाने में भौतिकी की जिस शाखा की उत्पत्ति हुई, उसको आधुनिक भौतिकी कहते हैं। आधुनिक भौतिकी का द्रव्यसंरचना से सीधा संबंध है। अणु, परमाणु, केंद्रक (Nucleus) तथा मूल कण इनके मुख्य विषय हैं। भौतिकीय विज्ञान की इस नवीन शाखा ने वैज्ञानिक विचारधारा को नवीन और क्रांतिकारी मोड़ दिया है तथा इससे समाजिक विज्ञान और दर्शनशास्त्र भी महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित हुए हैं।

भौतिकीय विज्ञान की सभी शाखाओं में भौतिकी के अनुप्रयोग दिखायी देते हैं। प्रौद्योगिकी तो अनुप्रयुक्त भौतिकी ही है। रेडियो, दुरदर्शन, बेतार संचार, आदि में भौतिकी के विद्युत–चुम्बकीय सिद्धान्तों का प्रयोग किया जाता है। बस, कार, स्कूटर आदि में प्रयुक्त किए जाने वाले अन्तःदहन इंजन, भौतिकी की एक शाखा, ऊष्मागतिकी के सिद्धान्तों पर आधारित है।

1.5 भौतिकीय विज्ञान की प्रमुख शाखाएं

भौतिकीय विज्ञान को मुख्यतः दो भागों में बांटा जा सकता है –

1. **परम्परागत भौतिकीय विज्ञान (Traditional Physical Science)** – 19वीं शताब्दी तक की भौतिकीय विज्ञान को परम्परागत भौतिकी माना जाता है। इसकी प्रमुख उपशाखाएं निम्नलिखित हैं :

   1. यांत्रिकि
   2. प्रकाशिकी
   3. ध्वनि एवं तरंग गति
   4. ऊष्मा एवं ऊष्मागतिकी
   5. विद्युत चुम्बकत्व

2. **आधुनिक भौतिकीय विज्ञान (Modern Physical Science) –** इसमें मुख्यतः बीसवीं शताब्दी से वर्तमान की भौतिकीय विज्ञान का अध्ययन किया जाता है। इसकी प्रमुख उपशाखाएं निम्नलिखित हैं :

   1. परमाणु भौतिकी
   2. नाभिकीय भौतिकी
   3. क्वाण्टम भौतिकी

4. सापेक्षिकता का सिद्धान्त
5. विश्वविज्ञान एवं अन्तरिक्ष अन्वेषण
6. मध्याकार भौतिकी

1.6 भारत में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का इतिहास

भारतवर्ष में प्राचीन समय से ही भौतिकीय विज्ञान शिक्षण की व्यवस्था मिलती है। नागार्जुन, आर्यभट्ट, सुश्रुत, धनवन्तरी तथा वराह मिहिर क्रमशः रसायन विज्ञान, ज्योतिष विज्ञान, आयुर्वेद, चिकित्सा विज्ञान एवं ज्योतिष विज्ञान के क्षेत्र में अत्यन्त प्रसिद्ध वैज्ञानिक हुए हैं। छठी शताब्दी में भी अनेक रसायनज्ञों तथा रसायन प्रक्रियाओं का प्रमाण सहित उल्लेख मिला है। नालन्दा विश्वविद्यालय में आयुर्वेद (चिकित्सा विज्ञान) का अध्ययन प्रत्येक छात्र के लिए अनिवार्य रखा गया था। आधुनिक समय में जगदीशचन्द्र बसु, वनस्पति विज्ञान के क्षेत्र में, डॉ0 सी0वी0 रमन एवं डॉ0 होमी जहांगीर भाभा, भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में, रामानुज गणित के क्षेत्र में तथा डॉ. हरगोविन्द खुराना जेनेटिक्स (Genetics) के क्षेत्र में अग्रणीय वैज्ञानिक हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व ही विज्ञान के महत्व को समझा गया और विज्ञान को शिक्षा के क्षेत्र में मुख्य स्थान देने पर बल दिया गया। 1944 के एजुकेशन एक्ट के अनुसार विज्ञान सम्बन्धी पाठ्य विषय को महत्व दिया गया।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त देश की उन्नति एवं रक्षा के लिए शिक्षा एवं भौतिकीय विज्ञान के महत्व को समझा गया और भौतिकीय विज्ञान शिक्षण पर बल दिया गया। इस दिशा में ब्रिटेन का अनुकरण ही मुख्य ध्येय रहा और विज्ञान शिक्षण की प्रगति बहुत धीमी गति से हुई। सन् 1952-54 में मुदालियर कमीशन ने सुझाव दिया कि सामान्य भौतिकीय विज्ञान को हाई स्कूल में एक अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाये जाने की व्यवस्था की जाए। सन् 1956 में तारादेवी (शिमला) में एक अखिल भारतीय गोष्ठी का आयोजन किया गया। इस गोष्ठी में प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर पर भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, आदर्श पाठ्यक्रम, वैज्ञानिक उपकरण, परीक्षा–पद्धति तथा 'विज्ञान–शिक्षण–प्रशिक्षण' आदि समस्याओं पर विचार–विमर्श करके अनेक सुझाव प्रस्तुत किए गए। इस गोष्ठी की सिफारिशों के आधार पर 'अखिल भारतीय विज्ञान–शिक्षण–संघ' की स्थापना की गई तथा कुछ शिक्षाविदों को भौतिकीय विज्ञान–शिक्षण–पद्धति से परिचित करवाने के लिए विदेशों में जाने की सुविधायें प्रदान की गयी। विद्यालयों को प्रयोगशाला हेतु अनुदान दिए गए। विभिन्न विद्यालयों में 'विज्ञान क्लब' स्थापित किए गए। कुछ राज्यों में 'विज्ञान–मन्दिरों' का निर्माण किया गया। 'विज्ञान–शिक्षक' नामक पत्रिका का प्रकाशन भी प्रारम्भ हुआ।

सन् 1964 में 'वैज्ञानिक प्रतिभा की खोज' (Science Talent Search) कार्यक्रम का प्रारम्भ 'शैक्षणिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण की राष्ट्रीय परिषद' द्वारा किया गया। इसी अवधि में 'नेशनल साइन्स फाउन्डेशन' ने ग्रीष्मकालीन प्रशिक्षण संस्थाओं की व्यवस्था की। सन् 1966 में कोठारी कमीशन ने विज्ञान–शिक्षण के क्षेत्र में नवीन दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया। इसके अनुसार ''हम विज्ञान को स्कूल पाठ्यक्रम में एक महत्वपूर्ण अंग बनाने हेतु आवश्यक बल देते हैं। अतएंव, हम इस पक्ष में हैं कि भौतिकीय विज्ञान एवं गणित को विद्यालय के प्रथम दस वर्षों में सामान्य शिक्षा के एक अंश के रूप में सभी छात्रों को आवश्यक आधार पर पढ़ाया जाए। इसके अतिरिक्त उच्च स्तर पर इन विषयों में विशेष कोर्स का प्रबन्ध किया जाए, विशेषकर उन छात्रों के लिए जो औसत योग्यता से ऊपर हैं। कोठारी कमीशन ने निम्नलिखित सुझाव दिए–

1. कक्षा एक से दस तक भौतिकीय विज्ञान और गणित की शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जाए।

2. प्रारम्भिक कक्षाओं में भौतिकीय विज्ञान की शिक्षा विद्यार्थियों के पर्यावरण से सम्बन्धित होनी चाहिए।

3. प्राइमरी की उच्च कक्षाओं में ज्ञान–प्राप्ति और तर्कसंगत चिन्तन पर विशेष बल दिया जाना चाहिए।

4. प्राइमरी कक्षाओं के लिए भौतिकीय विज्ञान–कक्ष और विज्ञान प्रयोगशाला की सुविधा प्रदान की जानी चाहिए।

5. निम्न प्राइमरी स्तर पर भौतिकीय विज्ञान–शिक्षण बौद्धिक नियन्त्रण के उद्देश्य से दिया जाए।

6. भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान एवं जीव विज्ञान के नवीन संप्रत्ययों पर बल दिया जाए और प्रयोगात्मक कार्य द्वारा शिक्षा दी जाए।

7. भौतिकीय विज्ञान–शिक्षण नवीनतम विधियों से किया जाए और विद्यार्थियों में अन्वेषण प्रवृति का विकास किया जाए।

8. ग्रामीण क्षेत्रों में भौतिकीय विज्ञान को कृषि से और नगरीय क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी से सम्बद्ध किया जाए।

9. भौतिकीय विज्ञान–शिक्षण के साथ सांस्कृतिक, आध्यात्मिक एवं नैतिक परम्पराओं को भी उचित महत्व दिया जाए।

10. उद्योगों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु भौतिकीय विज्ञान एवं गणित के स्नातकोत्तर पाठ्य विषयों के स्तर का उन्नयन एवं इस स्तर पर छात्रों की संख्या में वृद्धि की जाए।

11. विश्वविद्यालय स्तर पर अन्वेषण हेतु विशेष सुविधाओं की व्यवस्था की जाए।

बोध प्रश्न

प्रश्न 1: भौतिक विज्ञान किसे कहते हैं?

....

....

प्रश्न 2: भौतिक विज्ञान में किन वैज्ञानिकों को इसका जनक माना जाता है?

....

....

प्रश्न 3: उर्जा संरक्षण का नियम क्या है?

....

....

1.7 भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति

जैसे–जैसे भौतिकीय विज्ञान की प्रगति हुई है, विशेष रूप से पिछली चार सदियों में, वैसे–वैसे भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति के बारे में हमारे विचार भी विकसित हुए हैं। जब 16वीं तथा 17वीं शताब्दी में गैलीलियो, देकार्त, कैपलर और न्यूटन के खोज कार्यों के द्वारा आधुनिक भौतिकीय विज्ञान को आकार दिया जा रहा था, तभी फ्राँसिस बेकन उसे प्रतिपादित कर रहे थे, जिसे हम आज वैज्ञानिक पद्धति कहते हैं। बेकन के विचारों का सार यह है कि विज्ञान प्रकृति के पूर्वाग्रह रहित अवलोकनों से तर्कों तथा नियंत्रित प्रयोगों के आधार पर विकसित किया गया एक आगमनात्मक व्यापकीकरण (Inductive Generalisation) है। बेकन ने अपनी दूरदृष्टि से इस नई पद्धति की प्रकृति के क्रियाकलापों का न केवल पूर्वानुमान लगाने की, बल्कि उन्हें नियंत्रित करने की ताकत को भी पहचान लिया था।

बीसवीं सदी के आरम्भ में, भौतिकीय विज्ञान के दार्शनिकों के एक प्रभावशाली समूह ने इस वैज्ञानिक पद्धति की एक अधिक सटीक और मजबूत अभिव्यक्ति को प्रतिपादित करने की जिम्मेदारी उठाई। संक्षेप में, वे किसी वक्तव्य या कथन को तभी अर्थपूर्ण मानते थे जब वह या तो अपने–आप स्पष्ट और प्रमाणित हो या उसे पुष्टि की जा सकने वाले रूप में प्रस्तुत किया जा सके। सुविधा के लिए, हम 'परमाणु', 'जीन (आनुवांशिक इकाई)', 'संयोजकता' जैसे शब्दों का इस्तेमाल कर सकते हैं, परन्तु अन्ततः सभी वैज्ञानिक कथनों को ऐसे वक्तव्यों में बदलना सम्भव होना चाहिए जिनका प्रत्यक्ष अवलोकन किया जा सके। इस कड़े मापदण्ड के अनुसार, अर्थहीन काव्य से भले ही कोई हानि न हो, लेकिन एक पराभौतिक कथन अर्थहीन और हानिकारक, दोनों होता है, क्योंकि वह सत्य होने का दावा करता है। हालाँकि इस दर्शन, जो तार्किक निश्चयवाद (Logical Positivism) कहलाता है (और जो अपने बाद के कुछ नरम स्वरूप में तार्किक अनुभववाद–लाजिकल एम्पिरिसिज्म–कहलाया), के प्रस्तावकों को समस्त विज्ञान को इस प्रकार से व्यक्त कर पाने की अपनी महत्त्वाकांक्षा को साकार करने में सफलता नहीं मिल सकी।

कार्ल पॉपर के दर्शन के पीछे भी वैज्ञानिक पद्धति का विश्लेषण करने की यही भावना थी, परन्तु कई दृष्टियों से उसका दर्शन तार्किक निश्चयवाद से बहुत भिन्न था। पॉपर को प्रेरित करने वाली आकांक्षा विज्ञान और छद्म या नकली विज्ञान के बीच अन्तर करने की थी। वे वक्तव्यों को झूठा साबित करने के अपने मानदण्ड (Falsification Criterion) के लिए प्रसिद्ध हैं जो कहता है कि कोई सिद्धान्त तब तक वैज्ञानिक नहीं होता जब तक कि उसका खण्डन करने का कोई तरीका उपलब्ध न हो। अच्छे वैज्ञानिक सिद्धान्त ऐसे दुविधारहित पूर्वानुमान देते हैं, जिन्हें गलत भी सिद्ध किया जा सकता है। यदि किसी पूर्वानुमान की पुष्टि हो जाती है, तो आपने सिद्धान्त को प्रमाणित नहीं कर दिया होता है; न ही आपने केवल उसे अभी तक गलत सिद्ध नहीं किया होता है। यही वह मुद्दा है, जहाँ छद्म विज्ञान भिन्न होते हैं– वे ऐसे कोई सुस्पष्ट पूर्वानुमान व्यक्त नहीं करते जिनका परीक्षण किया जा सके और जिनमें किसी अवलोकन की सुविधा हो। पॉपर की दलील थी कि 'विज्ञान को जोखिम उठाना चाहिए', साहसी पूर्वानुमान देना चाहिए और ऐसे समालोचनात्मक प्रयोग सुझाना चाहिए जिनमें किसी सिद्धान्त को गलत साबित कर सकने की सम्भावित क्षमता हो। पॉपर, आइंस्टीन के कार्य से बहुत प्रभावित थे। उनके विचार आमतौर पर वैज्ञानिकों के विचारों से मेल खाते हैं, इसलिए अक्सर उन्हें वैज्ञानिकों का दार्शनिक कहा जाता है।

इन प्रभावी विचारों की पैनी आलोचना करते हुए, 1950 के दशक के लगभग, क्वाइन ने तर्क दिया कि एक वैज्ञानिक सिद्धान्त आपस में जुड़ी ऐसी मान्यताओं और दावों का संजाल होता है जो समग्र रूप से अनुभव से सम्बन्धित होते हैं। परिणामस्वरूप, किसी

सिद्धान्त के प्रत्येक वक्तव्य को अलग–थलग करके उसका परीक्षण करना या उसे गलत साबित करना सम्भव नहीं है। उन्होंने अर्थ और परीक्षण के एक सर्वांगीण सिद्धान्त की माँग उठाई।

जो दार्शनिक विचारधाराएँ विज्ञान का तार्किक आधार तलाश रहीं थीं, उन्होंने खोज की पृष्ठभूमि (उसका वह अन्तर्दृष्टि वाला सृजनात्मक चरण जो एक विशेष सामाजिक परिवेश का अंग होता है) को उसके औचित्य के सन्दर्भ (उन सिद्धान्तों का समालोचनात्मक दार्शनिक परीक्षण जिनके सही होने का दावा किया जा रहा हो) से स्पष्ट रूप से अलग रखा। पहले वाले पहलू को मनोविज्ञान/समाजशास्त्र के क्षेत्र का हिस्सा माना गया। इस भेद ने विज्ञान की कार्यप्रणाली को बहुत हद तक उनके दायरे के बाहर रखा। दूसरे शब्दों में, उनका प्रयास वास्तविक वैज्ञानिक पद्धति को निरूपित करने के बजाय यह बताने का था कि उसे क्या होना चाहिए।

1960 के दशक के आसपास, थॉमस कुह्न की पुस्तक, 'The Structure of Scientific Revolution (वैज्ञानिक क्रान्तियों की संरचना)' ने विज्ञान की प्रकृति के बारे में और विज्ञान की प्रगति कैसे होती है, इसके बारे में हमारे विचारों में होने वाले बड़े रूपान्तर का सूत्रपात किया। विज्ञान के इतिहास में मील के पत्थर जैसी कुछ प्रमुख उपलब्धियों (जैसे कि कोपरनिकस की क्रान्ति) का विश्लेषण करते हुए, कुह्न इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि वैज्ञानिक आमतौर पर किसी खास परिप्रेक्ष्य में काम करते हैं; वे किसी बिन्दु तक रूढ़िवादी बने रहते हैं और कुछ विसंगतियों (प्रयोग से मतभेदों) के सामने आने पर भी अपने तब के सिद्धान्तों को नहीं छोड़ते परन्तु, जब विसंगतियाँ तीखी होती हैं और समय के साथ संचित होती जाती हैं, तब सामान्य विज्ञान में संकट उपस्थित हो जाता है और तत्कालीन परिप्रेक्ष्य पर सवाल उठाए जाने लगते हैं। उस संकट के दौरान तमाम तरह के वैकल्पिक विचार उभरने लगते हैं, जिनमें से कुछ सम्भावनाशील नए विचार एक नई आम सहमति को आकर्षित करने लगते हैं और ऐसा अक्सर कुछ प्रभावशाली प्रतिमानों के कारण होता है। इस तरह एक नया परिप्रेक्ष्य जन्म ले लेता है और सामान्य विज्ञान फिर लौट आता है, जिसमें वैज्ञानिक परिवर्तित परिप्रेक्ष्य के विस्तृत विवरणों और उसके उपयोगों को स्पष्ट करते हैं।

कुह्न के दर्शन की गौर करने लायक प्रमुख बात है कि परिप्रेक्ष्य का ऐसा परिवर्तन किसी विशुद्ध रूप से तार्किक प्रक्रिया द्वारा संचालित नहीं होता, इसमें वैज्ञानिक समुदाय के बीच बनी सामाजिक आम सहमति शामिल होती है। सामान्य विज्ञान में मौजूदा परिप्रेक्ष्य का अनुपालन हमारे कालेजों और स्नातकोत्तर शिक्षा संस्थानों में दिए गए प्रशिक्षण के द्वारा सुनिश्चित किया जाता है, पर सभी कुह्न से सहमत नहीं थे। वैज्ञानिक प्रगति के तार्किक आधार के महत्त्व को कम करने की कुह्न के विचारों में निहित प्रवृत्ति लाकोटोस को स्वीकार नहीं थी। उन्होंने अपने खुद के सिद्धान्त को प्रतिस्पर्धात्मक 'शोध कार्यक्रमों' की अवधारणा के आधार पर विकसित किया।

फेयराबेन्ड ने इस विचार को ही सिरे से खारिज कर दिया कि विज्ञान के विकसित होने के तरीके में कोई सुस्पष्ट कार्यप्रणाली होती है। उनके दर्शन का सार अक्सर इस ध्यान खींचने वाली उक्ति से व्यक्त किया जाता है कि 'कुछ भी चलता है'। उनकी प्रसिद्ध किताब 'Against Method (पद्धति के खिलाफ)' विज्ञान में सृजनात्मकता के होने का उल्लास मनाती है और कल्पना की स्वतंत्रता की वकालत करती है। इस प्रकार जहाँ कुह्न की दृष्टि से विज्ञान में निहित अव्यवस्था लाकोटोस को खतरनाक लगी, वहीं फेयराबेन्ड ने बिल्कुल विपरीत कारण– उसके अनुसार वैज्ञानिक प्रगति के व्यवस्थित और यांत्रिक होने की कुह्न की धारणा– को आधार बनाकर कुह्न की आलोचना की। कुह्न की रूपरेखा में सामान्य विज्ञान की बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका थी, क्योंकि वह एक स्वीकृत परिप्रेक्ष्य में गहराई तक जाती है, जिसके कारण उन विसंगतियों को खोजना सम्भव हो पाता है, जिनके

परिणामस्वरूप अन्ततः वह परिप्रेक्ष्य बदलता है। दूसरी ओर, फेयराबेन्ड सामान्य विज्ञान की दिमाग को कुंठित करने वाली बँधे–बँधाए ढर्रे की दैनिक गतिविधियों की आलोचना करते हैं। वे जोर देकर कहते हैं कि विज्ञान की प्रगति, कल्पना की ऐसी सृजनात्मक छलांगों के कारण होती है जो तत्कालीन विचारों को चुनौती देती हैं।

बोध प्रश्न

प्रश्न 4: भारत के किन्ही दो प्राचीन भौतिक वैज्ञानिकों के नाम बताइए?

....

....

प्रश्न 5: राष्ट्रीय प्रतिभा खोज कार्यक्रम कब और किस संस्था द्वारा प्रारम्भ हुआ?

....

....

प्रश्न 6: पुस्तक अगेन्स्ट मेथड किससे सम्बन्धित है और इसके लेखक कौन है?

....

....

कुह्न के सिद्धान्त के जो भी और गुण हों, पर वह निश्चित रूप से 20वीं सदी के उत्तरार्ध में विज्ञान के दर्शन में एक समाजशास्त्रीय आयाम का समावेश करने के लिए जिम्मेदार था। दरअसल विज्ञान के सामान्य दर्शन को कुछ समाजशास्त्री अप्रासांगिक मानते थे। वे कहते थे कि हम विज्ञान की प्रकृति को केवल उस कार्यप्रणाली की समीक्षात्मक और विस्तृत जाँच–पड़ताल के द्वारा ही समझ सकते हैं जिसे वास्तव में वैज्ञानिक अपने कार्य में अपनाते हैं। यह नया बदलाव विज्ञान की प्रकृति पर चल रही बहस को कई अलग–अलग दिशाओं में ले गया है, जिनका हम पर्याप्त रूप से यहाँ वर्णन नहीं कर सकते। लेकिन अब हमारे पास निश्चित रूप से उन सामाजिक–सांस्कृ–तिक आदर्शों के बारे में एक बेहतर दृ ष्टिकोण है जो विज्ञान को विकसित होने में सक्षम बनाते हैं। उदाहरण के लिए, यह स्पष्ट दिखाई देता है कि विज्ञान की ऐसी मजबूत सामाजिक संस्थाओं का गठन (यूरोप में वैज्ञानिकों के संघ, जैसे कि रॉयल सोसायटी), जो खुले और लोकतांत्रिक विचार–विमर्श, शोध कार्यों की हमपेशा लोगों द्वारा समीक्षा और वैज्ञानिक नियमों के सामुदायिक स्वामित्व आदि आदर्शों का पालन करती थीं, विज्ञान की प्रगति के लिए उतना ही महत्त्वपूर्ण था जितना कि अलग–अलग वैज्ञानिकों का कौशल था।

इन विचार–विमर्शों से धीरे–धीरे जो अन्र्तदृष्टियाँ निकली हैं, हम उन्हें सार रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं। पहली बात है कि विज्ञान केवल अवलोकन और प्रायोगिक जानकारी के आधार पर तार्किक विधि से हासिल किया गया ज्ञान नहीं होता, बल्कि उसमें अक्सर ऐसे कल्पनाशील और क्रान्तिकारी नए विचार भी शामिल रहते हैं जो जरूरी नहीं कि उपलब्ध प्रत्यक्ष जानकारी से सूझे हों। उदाहरण के लिए, विज्ञान के कुछ सबसे सफल सिद्धान्तों का उद्‌भव सरलता, समरूपता और एकीकरण की प्रेरणा के सामान्य विचारों से हुआ है। दूसरी बात है कि हालाँकि प्रकृति के अवलोकन अक्सर विज्ञान के प्रारम्भिक बिन्दु होते हैं, परन्तु सभी अवलोकन निष्पक्ष नहीं होते– वे 'सिद्धान्त से लदे हुए' होते हैं; सिद्धान्त स्पष्ट रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से हमारा मार्गदर्शन करते हैं कि हमें कहाँ जाना है और क्या प्रयोग करना या अवलोकन करना है (जरूरी नहीं कि इससे विज्ञान की वस्तुपरकता का महत्त्व कम होता हो)।

तीसरी बात है कि अवलोकन और प्रायोगिक जानकारी सही सिद्धान्त को पूरी तरह निर्धारित नहीं करते; उनकी कई अलग–अलग सिद्धान्तों के साथ संगति हो सकती है। चौथी बात है कि विज्ञान पूर्ण रूप से एक संज्ञानात्मक व्यवहार नहीं होता, हालाँकि यह निश्चित रूप से प्रकृति के आनुभविक तथ्यों द्वारा सीमित होता है, पर इसमें वैज्ञानिकों के बीच बनने वाली कोई सामाजिक आम सहमति भी शामिल रहती है। इसे अपनी प्रगति के लिए सहारा देने वाले सामाजिक–सांस्कृतिक आदर्शों तथा परिस्थितियों की भी जरूरत होती है। पाँचवीं बात है कि विज्ञान, प्रौद्योगिकी तथा समाज आपस में जटिल तरीकों से गुँथे रहते हैं और वे परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं तथा प्रभावित होते हैं। इस आखिरी बात से यह बात भी निकलती है कि वैज्ञानिक कार्यप्रणाली में सम्भावित भूलों और प्रौद्योगिकी के बगैर, समीक्षा के तथा अविवेकी उपयोग के हानिकारक परिणामों के प्रति हमें सजग रहना भी बेहद जरूरी है।

1.8 सारांश

विज्ञान की जिस शाखा में प्रकृति तथा प्राकृतिक घटनाओं का अध्ययन किया जाता है वही भौतिकीय विज्ञान है। द्रव्य, ऊर्जा तथा उनकी अन्योन्य क्रियाओं के वैज्ञानिक अध्ययन को भौतिकीय विज्ञान कहते हैं। स्थान, काल, गति, द्रव्य, विद्युत, प्रकाश, ऊष्मा तथा ध्वनि इत्यादि अनेक विषय इसकी परिधि में आते हैं। यह विज्ञान का एक प्रमुख विभाग है। इसके सिद्धांत समूचे विज्ञान में मान्य हैं और विज्ञान के प्रत्येक अंग में लागू होते हैं। इसका क्षेत्र विस्तृत है और इसकी सीमा निर्धारित करना अति दुष्कर है। भौतिकीय विज्ञान के अंतर्गत दो मुख्य विषय आते है प्रथम चिरसम्मत भौतिकीय विज्ञान जिसमें यांत्रिकि, प्रकाशिकी, ध्वनि एवं तरंग गति, ऊष्मा एवं ऊष्मागतिकी, विद्युत चुम्बकत्व और द्वितीय आधुनिक भौतिकीय विज्ञान जिसमें परमाणु भौतिकी, नाभिकीय भौतिकी, क्वाण्टम भौतिकी, सापेक्षिकता का सिद्धान्त, विश्वविज्ञान एवं अन्तरिक्ष अन्वेषण, मध्याकार भौतिकी सम्मिलित हैं। भारतवर्ष में प्राचीन समय से ही भौतिकीय विज्ञान शिक्षण की व्यवस्था मिलती है। नागार्जुन, आर्यभट्ट, सुश्रुत, धनवन्तरी तथा वराह मिहिर क्रमशः रसायन विज्ञान, ज्योतिष विज्ञान, आयुर्वेद, चिकित्सा विज्ञान एवं ज्योतिष विज्ञान के क्षेत्र मे अत्यन्त प्रसिद्ध वैज्ञानिक हुए हैं। छठी शताब्दी में भी अनेक रसायनज्ञों तथा रसायन प्रक्रियाओं का प्रमाण सहित उल्लेख मिला है। नालन्दा विश्वविद्यालय में आयुर्वेद (चिकित्सा विज्ञान) का अध्ययन प्रत्येक छात्र के लिए अनिवार्य रखा गया था। आधुनिक समय में जगदीशचन्द्र बसु, वनस्पति विज्ञान के क्षेत्र में, डॉ0 सी0वी0 रमन एवं डॉ0 होमी जहांगीर भाभा, भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में, रामानुज गणित के क्षेत्र में तथा डॉ. हरगोविन्द खुराना जेनेटिक्स के क्षेत्र में अग्रणीय वैज्ञानिक हैं।

1.9 अभ्यास प्रश्न

1. भौतिकीय विज्ञान का अर्थ को स्पष्ट कीजिए?
2. भौतिकीय विज्ञान को परिभाषित कीजिए?
3. भौतिकीय विज्ञान के इतिहास का विवेचन कीजिए?
4. भौतिकीय विज्ञान की प्रमुख शाखाओं का वर्णन कीजिए?
5. भारतीय परिप्रेक्ष्य में भौतिकीय विज्ञान के शिक्षण के इतिहास का वर्णन कीजिए?
6. भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति का विस्तार से वर्णन कीजिए?

1.10 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान की वर्तमान समय में प्रासंगिकता पर चर्चा करेगें।
2. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान के इतिहास पर चर्चा करेंगें।
3. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति पर चर्चा करेंगें।

इकाई–2 भौतिकीय विज्ञान अधिगम, भौतिकीय विज्ञान शिक्षण–अधिगम का मनोविज्ञान रचनावाद और सक्रियवाद

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 भौतिकीय विज्ञान अधिगम

2.4 अधिगम की प्रकृति

2.5 अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक

2.5.1 शिक्षक से सम्बंधित कारक

2.5.2 शिक्षार्थी से सम्बंधित कारक

2.5.3 पाठ्य वस्तु से सम्बंधित कारक

2.5.4 अधिगम–व्यवस्था से सम्बंधित कारक

2.5.5 वातावरण से सम्बंधित कारक

2.6 भौतिकीय विज्ञान शिक्षण–अधिगम का मनोविज्ञान

2.6.1 ज्ञान के निर्माण का अर्थ एवं परिभाषाएँ

2.6.2 ज्ञान के निर्माण की विशेषताएँ

2.6.3 अधिगम ज्ञान के निर्माण के रूप में

2.7 रचनात्मकता या निर्मितवाद

2.7.1 निर्मितवादी अधिगम आधारित विज्ञान शिक्षण विधियाँ

2.8 सारांश

2.9 अभ्यास प्रश्न

2.10 चर्चा के बिन्दु

2.1 प्रस्तावना

अधिगम एक व्यापक सतत् एवं जीवन पर्यन्त चलने वाली महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। मनुष्य जन्म के उपरांत ही सीखना प्रारंभ कर देता है और जीवन भर कुछ न कुछ सीखता रहता है। धीरे–धीरे वह अपने को वातावरण से समायोजित करने का प्रयत्न करता है। इस समायोजन के दौरान वह अपने अनुभवों से अधिक लाभ उठाने का प्रयास करता है। इस प्रक्रिया को मनोविज्ञान में सीखना कहते हैं।

प्रस्तुत इकाई में हम भौतिकीय विज्ञान अधिगम, अधिगम की प्रकृति, अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक, शिक्षक से सम्बन्धित कारक, शिक्षार्थी से सम्बन्धित कारक, पाठ्य वस्तु से सम्बन्धित कारक, अधिगम–व्यवस्था से सम्बन्धित कारक, वातावरण से सम्बन्धित कारक, भौतिकीय विज्ञान शिक्षण–अधिगम का मनोविज्ञान, ज्ञान के निर्माण का अर्थ एवं परिभाषाएँ, ज्ञान के निर्माण की विशेषताएँ, अधिगम ज्ञान के निर्माण के रूप में और रचनात्मकता के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको भौतिकीय विज्ञान अधिगम, भौतिकीय विज्ञान शिक्षण–अधिगम का मनोविज्ञान और रचनात्मकता को समझने में सुविधा होगी।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेगें कि–

- भौतिकीय विज्ञान अधिगम को परिभाषित कर सकेंगे।
- अधिगम की प्रकृति को जान सकेंगे।
- अधिगम को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों का वर्णन कर सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान शिक्षण–अधिगम के मनोविज्ञान को समझ सकेंगे।
- रचनात्मकता को परिभाषित कर सकेंगे।
- रचनात्मकता का वर्णन कर सकेंगे।

2.3 भौतिकीय विज्ञान अधिगम

सामान्य अर्थ में ''अधिगम'' व्यवहार में परिवर्तन को कहा जाता है। परन्तु सभी तरह के व्यवहार में हुए परिवर्तन को अधिगम नहीं कहा जाता है। व्यवहार में परिवर्तन थकान, दवा खाने से, बीमारी, परिपक्वता आदि से भी होता है। मनोविज्ञान में अधिगम से तात्पर्य सिर्फ उन्हीं परिवर्तनों से होता है जो अभ्यास या अनुभूति के फलस्वरूप होते है। वास्तव में अधिगम ही मनुष्यों और जानवरों में विभेद करता है। मनुष्य जन्म के बाद से ही अधिगम आरम्भ कर देता है और जीवन भर कुछ न कुछ सीखता रहता है। अधिगम व्यवहार में वैसे परिवर्तन को कहा जाता है जिसका उद्देश्य व्यक्ति को समायोजन करने में मदद करना होता है। इस प्रकार हमारा सम्पूर्ण जीवन ही सीखने का परिणाम है।

स्किनर के अनुसार ''सीखना व्यवहार में उत्तरोतर सामन्जस्य की प्रक्रिया है''

मॉर्गन किंग, विस्ज तथा स्कॉलर के अनुसार ''अधिगम अभ्यास या अनुभति के परिणामस्वरूप व्यवहार में होने वाले अपेक्षाकृत स्थायी परिवर्तन को कहा जाता है।''

वुडवर्थ के अनुसार ''नवीन ज्ञान और नवीन प्रतिक्रियाओं को प्राप्त करने की प्रक्रिया अधिगम की प्रक्रिया है।''

गेट्स के अनुसार ''अनुभव के द्वारा व्यवहार में रूपान्तर लाना ही अधिगम है।''

क्रो व क्रो के अनुसार ''अधिगम आदतों, ज्ञान और अभिवृतियों का अर्जन है।'

ऊपर दी गई परिभाषाओं एवं अनेक अन्य मनोवैज्ञानिकों द्वारा दी गयी परिभाषाओं का यदि संयुक्त विश्लेषण किया जाए तो हम निम्नांकित निष्कर्ष पर पहुँचते है।

1. अधिगम व्यवहार में स्थायी परिवर्तन को कहा जाता है।

2. व्यवहार में परिवर्तन अभ्यास या अनुभूति के फलस्वरूप होता है।

3. व्यक्ति एवं वातारवरण के बीच क्रिया–प्रतिक्रिया के फलस्वरूप अधिगम या सीखना होता है ।

उदाहरणार्थ– शिशु के सामने दीपक ले जाने पर वह स्वाभाविक रूप से उसकी लौ को पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाता है किन्तु लौ हाथ में लगते ही उसे जलन का अनुभव होता है और वह हाथ खीच लेता है। पुनः जब कभी उसके सामने दीपक लाया जाता है तब वह अपने अनुभव के आधार पर अबकी बार लौ पकड़ने के लिए हाथ नही बढ़ाता है वरन् वह उससे दूर भागने का प्रयास करता है। इस प्रकार अनुभव के आधार पर उसके स्वाभाविक व्यवहार में परिवर्तन हो जाता है मनोविज्ञान में इस प्रकार के स्वाभाविक व्यवहार में होने वाले प्रगतिशील परिवर्तन को ही सीखना कहते है।

2.4 अधिगम की प्रकृति

1. अधिगम द्वारा व्यक्ति नये अनुभवों, व्यवहारों तथा तथ्यों प्रत्ययों तथा सिद्धान्तों को अर्जित करता है।

2. अधिगम मानव की एक प्रवृति है।

3. अधिगम मानसिक क्षमताओं के विकास की एक प्रक्रिया है।

4. अधिगम सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों प्रकार की होती है।

5. अधिगम एक सतत् प्रक्रिया है।

6. अधिगम एक सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है।

7. अधिगम एक विवेकपूर्ण क्रिया है।

8. अधिगम एक समायोजन की प्रक्रिया है।

9. अधिगम एक समस्या समाधान की प्रक्रिया है।

10. अधिगम का अपना एक रूवरूप होता है।

11. अधिगम एक खोज की प्रक्रिया है।

2.5 अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक

2.5.1 शिक्षक से सम्बंधित कारक

1. विषय का ज्ञान– अध्यापक को अपने विषय का पूर्ण ज्ञान है तो वह आत्मविश्वास के साथ छात्रों को नवीन ज्ञान देने में सक्षम होगा तथा उसका शिक्षण प्रभावी होगा।

2. शिक्षक का व्यवहार– अध्यापक के व्यवहार में सहानुभूति सहयोग, समानता शिक्षण कला में निपुणता, मृदुभाषी, संयत आदि गुण है तो छात्र कक्षा वातावरण में सहज रूप से सब कुछ सीख सकेगा।

3. मनोविज्ञान का ज्ञान– अध्यापक को बाल विकास प्रक्रिया, वंशानुक्रम, व्यक्तिगत विभेद, प्रेरणा सीखने के सिद्धान्त आदि का ज्ञान अतिआवश्यक है, आधुनिक शिक्षा में मनोविज्ञान की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

4. शिक्षण विधि– प्रत्येक अध्यापक का पढ़ाने का तरीका भिन्न होता है शिक्षण विधि जितनी अधिक वैज्ञानिक एवं प्रभावशाली होगी उतनी सीखने की प्रक्रिया सरल एवं लाभप्रद होगी।

5. व्यक्तिगत भेदों का ज्ञान– अध्यापक को तीन प्रकार के छात्रों का सामना करना पड़ता है–मेधावी, सामान्य तथा पिछड़े हुए बालक इन्हीं के अनुरूप शिक्षण व्यवस्था करनी होती है व्यक्तिगत भेद छात्र को समझने में अध्यापक का सहयोग करते है।

6. वैयक्तिक– छात्र जाने अनजाने शिक्षक के व्यवहार से प्रभावित हो बहुत सी बातें सीख लेते हैं इस दृष्टि से एक अध्यापक को आत्मविश्वासी, दृढ़इच्छा शक्ति, कर्तव्यनिष्ठ निरोगी, श्रेष्ठ रूचियों एवं अभिरूचियों वाला होना चाहिए।

7. बाल केन्द्रित शिक्षा– आधुनिक युग में शिक्षक के लिए यह आवश्यक है कि वह जो भी ज्ञान छात्रों को प्रदान करे वह उसकी रूचियों, क्षमताओं एवं स्तर के अनुकूल होना चाहिए।

8. समय–सारणी– समय सारणी बनाते समय मौसम बालकों की योग्यता, रूचि एवं व्यक्तिगत विभेदों पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

9. पाठ्य सहभागी क्रियायें– शिक्षा में मनोविज्ञान के योगदान के रूप में आज पाठ्यक्रम में अनेक महत्वपूर्ण सहभागी क्रियाओं को स्थान दिया जाता है जैसे वाद–विवाद, निबन्ध, लेख कहानी, कविता, अन्ताक्षरी, भ्रमण, छात्रसंघ, खेलकूद, अभिनय, संगीत आदि।

10. अनुशासन– मनौविज्ञानिक परीक्षण यह सिद्ध करते हैं छात्र अपराध करने पर दण्ड से डरता नहीं इसका यह अर्थ नहीं कि छात्र को मनमानी करने दी जाए उसे अपराध के अनुकूल दण्ड दिया जाए।

2.5.2 शिक्षार्थी से सम्बंधित कारक

1. बालक– बालक शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का आधार है इसलिए उसके अभाव में अधिगम की कल्पना नहीं की जा सकती।

2. सीखने की इच्छा– बालकों में सीखने के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न की जाए जिससे बाल कठिन तथ्यों को भी आसानी से समझ सके।

3. शैक्षिक पृष्ठभूमि– छात्र की एक विषय में शैक्षिक योग्यता सामान्य से अधिक है तो छात्र उस विषय में नया ज्ञान सुगमता से सीख लेगा।

4. शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य– सीखने से पहले बालक का स्वस्थ्य रहना जरूरी है क्योंकि किसी भी प्रकार की मानसिक विकृति, शारीरिक रूग्णता तथा मानसिक तनाव का प्रत्यक्ष प्रभाव बालकों के अधिगम पर प्रतिकूल पड़ता है। अस्वस्थ्य बालक शीघ्र थक जाते है।

5. परिपक्वता– बहुत सी चाजें बालक तभी सीख पाता है। जब उसमें परिपक्वता आ जाती है चाहें हम उसे कितना भी प्रशिक्षण दें।

6. अभिप्रेरणा– अभिप्रेरणा उत्पन्न करने के लिए यह आवश्यक है कि बालक को उसका लक्ष्य स्पष्ट कर दिया जाये किसी नये कार्य को सीखने के लिए प्रेरित नही किया जाता तो वह उस क्रिया में रूचि नही लेगा।

7. सीखने वाले की अभिवृति– सीखने वाले की किसी कार्य की नकारात्मक या सकारात्मक अभिवृति उस कार्य की प्रगति पर निर्भर करती हैं।

8. सीखने का समय तथा अवधि– छात्र किसी कार्य को देर तक करता है तो उसे थकान हो जाती है, थकान होने से अधिगम प्रक्रिया में शिथिलता आ जाती है।

9. बुद्धि– बालक की तीव्र या मन्द बुद्धि किसी कार्य को सीखने में सरलता या बाधा उत्पन्न करना है।

10. अधिगम प्रक्रिया– यह सच है कि बालक किसी भी कार्य को अपने ढ़ंग से सीखता है चाहे प्रक्रिया किसी भी ढ़ंग से क्यों न सम्पादित की जाये।

2.5.3 पाठ्य वस्तु से सम्बंधिक कारक

1. विषय–वस्तु की प्रकृति– निर्भर करता है कि सिखायी जाने वाली वस्तु सरल है या कठिल तो बालक को सीखने में सरलता या कठिनाई का अनुभव होगा।

2. विषय वस्तु का आकार– विस्तृत विषय वस्तु से वह शीघ्र ही ऊब जाता है व छोटे पाठों को वह जल्दी ही ग्रहण कर लेता है।

3. विषय वस्तु का क्रम– विषय वस्तु को छात्रों के समक्ष प्रस्तुत करने का क्रम सीखने की प्रक्रिया को पर्याप्त रूप से प्रभावित करता है अर्थात् क्रम 'सरल से कठिन की ओर होना चाहिए'।

4. उदाहरण प्रस्तुतीकरण– पढ़ाते समय शिक्षकों को बालक के दैनिक जीवन से सम्बन्धित उदाहरणों का प्रयोग करने से प्रत्ययों का स्पष्टीकरण आसानी से हो जाता है।

5. भाषा–शैली– विषय वस्तु को सरल भाषा में बालकों के समक्ष प्रस्तुत किया जाए तो वह सरलता से उसे सीख लेता है।

6. दृश्य–श्रृव्य सामग्री– कठिन से कठिन पाठ्यवस्तु को भी दृश्य श्रव्य सामग्री के उपयोग से सरल व सुगम बनाया जा सकता है।

7. रूचिकर विषय वस्तु– शिक्षक को अपनी सूझ–बूझ से विषय वस्तु को रोचक बनाने के प्रयास करना चाहिए जिससे बालक खूब मन लगाकर सीखते है। ।

8. विषय वस्तु की उद्देश्यपूर्णता– विषय वस्तु बालकों को पढ़ाने से पूर्व अध्यापक को उससे जुड़े उद्देश्यों एवं उपयोगिता को स्पष्ट करना चाहिए क्योंकि उपयोगी वस्तु बालक जल्दी सीखता है।

9. विभिन्न विषयों का कठिनाई स्तर– प्रत्येक विषय की प्रकृति अनूठी होती है उसी आधार पर बालक उसमें रूचि व अरूचि दिखाता है व उसी आधार पर सीखता है।

2.5.4 अधिगम–व्यवस्था से सम्बंधित कारक

1. सम्पूर्ण बनाम खण्ड विधि– इसकी मुख्य विशेषता यह है कि इससे विद्यार्थी अपनी स्मरण शक्ति बढ़ा सकता है।

2. उप–विषय बनाम सकेन्द्रीय विधि– बालक की मानसिक स्तर और आयु के अनुसार उपविषय पढ़ाये जाते है व उसी कक्षा में पूर्ण कर दिए जाते है। सकेन्द्रीय विधि में उपविषय को उसी कक्षा में समाप्त नही किए जाते बल्कि आयु व स्तर बढ़ने के अनुसार उस विषय को पुनः पढ़ाया जाता है।

3. संकलित बनाम वितरित विधि– संकलित विधि में सम्पूर्ण विषय वस्तु को एक ही सत्र में समाप्त कर दिए जाता है। जबकि वितरित विधि में विषय वस्तु अंतराल देकर समाप्त की जाती है।

4. आयोजित बनाम प्रासांगिक विधि– इस विधि का सिद्धान्त यह है कि ज्ञान एक ईकाई है इसके भिन्न–भिन्न अंग नही है ज्ञान ईकाई के रूप में दिया जाना चाहिए अतः विद्यार्थी ज्ञान के सभी अंगों से परिचित हो सकेगा।

5. सक्रिय बनाम निष्क्रिय विधि– सक्रिय विधि के अंतर्गत विद्यार्थी पाठ को जोर–जोर से या धीरे–धीरे बोल कर याद करता है जबकि निष्क्रिय विधि के अंतर्गत विद्यार्थी पाठ को मन ही मन पढ़कर याद करता है दोनों विधि अपने आप में महत्वपूर्ण है विद्यार्थी अपनी अभिवृति के अनुरूप नवीन ज्ञान को सीखने में इनमें से किसी एक का चयन करता है।

2.5.5 वातावरण से सम्बंधित कारक

1. वंशानुक्रम– बालक में अस्सी प्रतिशत योग्यताएं एवं क्षमताएं उसके वंशानुक्रम की ही देन है। रॉस ''बालक जो कुछ भी है ओर जिस रूप में विकसित होता है, वह वंशक्रम की ही देन है। व्यक्ति का जीवन सुखमय या दुखमय होना भी उसके वंशक्रम से प्राप्त गुणों पर निर्भर करता है।

2. सामाजिक वंशक्रम का ज्ञान– बालक पूर्वजों के आदर्शो से बहुत कुछ सीखता है तथा उनके चरित्र को अपना आदर्श मानकर तदनुसार कार्य करके महान बनने का प्रयास करता है।

3. वातावरण का प्रभाव– बालक के लिए वातावरण का उचित होना वंशानुक्रम के विकास के लिए एक अनिवार्य शर्त है। अतः व्यक्ति वंशानुक्रम की आधारभूत मान्यताओं को विकसित करने के लिए वातावरण को उपयोगी बनाने में विश्वास करता है।

4. व्यक्तित्व का विकास– वंशानुक्रम तथा वातावरण के ज्ञान से व्यक्ति मानवीय मूल्यों के विकास में रूचि लेने लगता है। वंशानुक्रम के प्रति आस्था व्यक्ति के सांवेगिक तथा सामाजिक विकास में विशेष योग देती हैं तथा सामाजिक व्यक्तित्व समाज के लिए उपयोगी सिद्ध होता है।

5. शिक्षा के अनौपचारिक साधन– बालक शिक्षा दो प्रकार के साधनों द्वारा शिक्षा प्राप्त करता है औपचारिक तथा अनौपचानिक दोनों ही प्रकार के साधनों का बालको के अधिगम पर गहन प्रभाव पड़ता है।

6. परिवार का वातावरण– परिवार के वातावरण का प्रभाव बच्चों की अधिगम प्रक्रिया पर पड़ता है यदि परिवार में कलह होती है तो बालक के मस्तिष्क पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है वो उदास खिन्न रहने लगते है।

7. कक्षा का भौतिक वातावरण– कक्षा में छात्रों को भौतिक वातावरण जैसे–प्रकाश, वायु, कोलाहल आदि की समुचित व्यवस्था नही मिलती है तो ऐसी स्थिति में छात्रों का मन अधिगम नहीं लगता है।

8. मनोवैज्ञानिक वातावरण– छात्रों में एक दूसरे के प्रति सहयोग और सहानुभूति की भावना है उनमें आपस में मधुर सम्बन्ध है तो सीखने की प्रक्रिया सूचारू रूप से आगे बढ़ती हैं।

9. सामाजिक एवं सांस्कृतिक वातावरण– सांस्कृतिक वातावरण वह है जो व्यक्ति द्वारा निर्मित या प्रभावित उन समस्त नियमों, विचारों, विश्वासों एवं भौतिक वस्तुओं की पूर्णता से है, जो जीवन को चारो ओर से घेरे रहते है। सामाजिक वातावरण वह है, जो रीतिरिवाज मान्यताएँ, आदर्श मूल्य एवं स्वयं व्यक्ति की समाज में स्थिति आती है, जो व्यक्ति के अधिगम को प्रभावित करती हैं।

10. सम्पूर्ण परिस्थिति– विद्यालय का सम्पूर्ण व्यवहार परिवेश इस प्रकार से निर्मित किया जाता है जो विद्यार्थी को पूर्ण संतुष्टि प्रदान करे व शैक्षिक उपलब्धि स्तर को ऊँचा उठाने के साथ–साथ उसके मनोबल को बनाये रखें। सम्पूर्ण परिस्थिति का संतोषप्रद होना अधिगम की अनिवार्य शर्त है।

11.बोध प्रश्न

प्रश्न 7: अधिगम को परिभाषित कीजिये?

....

....

प्रश्न 8: अधिगम को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों के नाम बताइए?

....

....

प्रश्न 9: अधिगम को प्रभावित करने वाले शिक्षार्थी से सम्बन्धित कारकों का विवरण दीजिये?

....

....

2.6 भौतिकीय विज्ञान शिक्षण–अधिगम का मनोविज्ञान

शिक्षा मनोविज्ञान का संबंध अधिगम तथा शिक्षण दोनों से होता है। शिक्षण एवं अधिगम प्रक्रियाएं दोनों एक साथ होती हैं। शिक्षण का उद्देश्य अधिगम प्रक्रिया का संचालन करना है। शिक्षक अध्यापन करता है और छात्र सीखते हैं। शिक्षण का मुख्य कार्य अधिगम की समुचित परिस्थितियों को उत्पन्न करना होता है। जिससे छात्र अनुभव द्वारा क्रियाएं करते हैं और अधिगम करते हुए नवीन ज्ञान को प्राप्त करते हैं। शिक्षण की प्रभावशीलता के मूल्यांकन का मानदण्ड अधिगम होता है। शिक्षक जाने या अनजाने में अपने शिक्षण का अधिगम से संबंध स्थापित करता है और जब यह संबंध स्थापित हो जाता

है तो छात्र अधिगम के द्वारा अपने पूर्व ज्ञान में नवीन ज्ञान की प्राप्ति करते हैं। प्रभावशाली शिक्षण के लिए शिक्षक को शिक्षण–अधिगम संबंध का ज्ञान होना आवश्यक है।

बी.ओ. स्मिथ की यह अवधारणा है कि जहाँ शिक्षण किया जाएगा वहाँ अधिगम प्रक्रिया अवश्य होगी और जहाँ अधिगम होगा वहाँ नवीन ज्ञान की प्राप्ति अवश्य होगी क्योंकि शिक्षण अधिगम हेतु किया जाता है इसलिए शिक्षण–अधिगम अपने में पूर्ण है और इसके द्वारा छात्रों में नये ज्ञान का विकास किया जाता है।

थॉमस एफ. ग्रीन ने अपनी पुस्तक Activities of Teaching में शिक्षण के अर्थ का विवेचन करते हुए बताया है कि जहाँ शिक्षण हो वहाँ यह आवश्यक नहीं कि अधिगम भी हो, अर्थात् अधिगम हो भी सकता है और नहीं भी। इनके विचार स्मिथ से भिन्न हैं।

ग्रीन के अनुसार शिक्षण का उद्देश्य अधिगम होता हैं परंतु यह आवश्यक नहीं कि उसे प्राप्त कर ही ले। इन्होने इस कथन की पुष्टि हेतु कुछ तर्क दिये जैसे– डॉक्टर का इरादा मरीज को ठीक करना होता है परंतु यह आवश्यक नहीं कि सभी मरीज ठीक हो जाएं। इसी प्रकार शिक्षक का उद्देश्य होता है कि सभी छात्र शिक्षण अधिगम द्वारा ज्ञान प्राप्त कर सीखें और परीक्षा में सफल हों किन्तु यह आवश्यक नहीं होता है कि सभी विद्यार्थी परीक्षा में सफल ही होंगे।

ग्रीन के अनुसार शिक्षण–अधिगम का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। यह कक्षा शिक्षण और शिक्षक तक ही सीमित नहीं है। जो भी अधिगम के लिए परिस्थितियाँ उत्पन्न करता है जिससे छात्र कुछ क्रियाएं करते हुए अपने अनुभव के द्वारा ज्ञान की प्राप्ति करते हैं, वह शिक्षक की भूमिका का निर्वाह करता है इस प्रकार माता–पिता, भाई–बहन, मित्र एवं अन्य परिवार एवं समाज के सदस्य भी बालक को सिखाते हैं। प्रकृति भी बालकों को स्वअनुभव से सिखाती है।

इस प्रकार अनुभवों एवं क्रियाओं से जो व्यवहार में परिवर्तन होते हैं उसे अधिगम कहते हैं। नवीन परिस्थितियों एवं क्रियाओं से जो अनुभव प्राप्त होते हैं उन्हे बालक के व्यवहार में परिवर्तन होता है और बालक नवीन ज्ञान को सृजन करता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सीखने की प्रक्रिया एक उच्च मानसिक प्रक्रिया है। इस मानसिक प्रक्रिया का ज्ञान के बोध का अध्ययन करने के लिए मनोवैज्ञानिकों द्वारा समय–समय पर अनेक प्रयोग किए गये हैं। ज्ञानात्मक क्षेत्र के अंतर्गत अधिगम में उन बातों को सीखा जाता है जिनका संबंध मानसिक क्रियाओं से अधिक होता है। मानसिक क्रियाओं के अंतर्गत चिंतन करना, तर्क शक्ति बढ़ाना, जानने एवं समझने का प्रयास करना एवं समस्या का समाधान करना आदि क्रियाएं सम्पन्न होती हैं जो संज्ञानात्मक क्षेत्र से जुड़ी होती हैं।

2.6.1 ज्ञान के निर्माण का अर्थ एवं परिभाषाएँ

ज्ञान का निर्माण ज्ञान के ग्राहिता से पूर्णतया भिन्न होता है। इसके अन्तर्गत विद्यार्थी प्राप्त ज्ञान को अपने अनुभवों द्वारा परिवर्तन करते हुए उसका प्रयोग करता है। वह ज्ञान में कुछ नई चीजों को वाद–विवाद, खोज, खुले एवं स्वतंत्र अधिगम के द्वारा से संबंध स्थापित करता है। यहाँ अधिगम से अभिप्राय वैयक्तिक ज्ञान के निर्माण से है। छात्र या अधिगमकर्ता अन्य छात्र अथवा सहायता प्राप्त करके ज्ञान का निर्माण करता है।

ज्ञान के निर्माण में निर्माणकर्ता विषय–वस्तु सम्बन्धित निम्नलिखित व्यवहार को सम्मिलित कर सकता है–

1. अवधारणाओं का अपना अर्थ

2. विचारों में वस्तुनिष्ठता

3. अधिगम परिणामों में विभिन्नता

4. सृजनात्मक परिणाम

5. विचारों में लचीलापन एवं स्वतंत्रता

6. छात्र अपने कार्यों की अन्य से तुलना

7. विनोदपूर्ण अधिगम

8. अन्तःकरण अभिप्रेरण की भूमिका

9. सामान्यतः गतिविधि आधारित शिक्षण

ज्ञान के अध्ययन को ज्ञान–मीमांसा कहा जाता है। अपनी अनुभूतियों को जब बालक अपने शब्दों में अभिव्यक्त करने लगता है और वस्तुओं को पहचानकर उसको उसके नाम से पुकारने लगता है तो हम कह सकते हैं कि बालक में समझ आ गई है। बालक अपने अनुभवों से ज्ञान तथा इसके अर्थों को उत्पन्न करता है। समझ के विकास का तात्पर्य विचारों, मनोवृत्तियों, कार्यों एवं सामाजिक मान्यताओं के अर्थ और प्रयोजन को समझना होता है। इस सिद्धांत के द्वारा यह दर्शाया जाता है कि कैसे शैक्षिक उपागमों को शिक्षण के पाठ्यक्रमों में रूपान्तरित किया जा सकता है तथा कैसे शिक्षा–शास्त्र को शिक्षक की प्रायोगिक रणनीतियों तथा क्रियाओं में विकसित किया जा सकता है।

प्रारंभ में बालक शब्दों का अर्थ तभी समझते हैं जब शब्दों का संबंध किसी वस्तु, विचार या अनुभव के साथ जोड़ा जाता है। जैसे– 'माँ' शब्द बालक के लिए आरंभ में ध्वनि के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता है, लेकिन जब 'माँ' शब्द का संबंध 'माता' से जुड़ जाता है, तब बालक 'माँ' का अर्थ समझता है। समझ का आधार वे उपयुक्त शैक्षिक अवसर या अनुभूतियाँ हैं, जिन्हें बालक शब्दों या वाक्यों में अभिव्यक्त करता है।

इसके अंतर्गत बालक सभी परिस्थितियों या उद्दीपनों के प्रति समान व्यवहार नहीं प्रकट करते हैं। जैसे– कोई वस्तु किसी बालक के लिए खेलने का साधन बन सकती है लेकिन दूसरे के लिए वह भय का कारण भी हो सकती है इसलिए बालक किसी भी उद्दीपन के प्रति कभी भी समान अर्थ की अभिव्यक्ति नहीं करता।

अतः बालक को यह सिखाना चाहिए कि वह किसी वस्तु की निजी व्याख्या पर ही आधारित न रहे बल्कि उसे दूसरों की दी गई व्याख्या और निष्कर्षों को भी जानना चाहिए।

इस प्रकार समझ का आधार प्रत्यय होता है। जब तक बालक में प्रत्ययों का निर्माण नहीं होगा, उसकी समझ का विकास भी नहीं होगा इसलिए बालकों के प्रत्ययों का समझना होगा।

श्रीमती आर.के. शर्मा एवं श्रीमती बरौलिया के अनुसार, "ज्ञान के निर्माण का आशय सूचनाओं का प्रबन्धन, संगठन एवं पुनःप्राप्ति की प्रक्रिया से है जिसमें विज्ञान, तकनीकी, दर्शन एवं सामाजिक व्यवस्थाओं से सम्बन्धित तथ्यों को सरलीकृत रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जिसमें सर्वांगीण विकास की प्रक्रिया में शिक्षक, शिक्षालय एवं शिक्षार्थी तीनों को ही सहायता मिलती है।"

प्रो. एस.के. दुबे के अनुसार, "ज्ञान के निर्माण का आशय सूचनाओं के संगठनात्मक एवं उपयोगी स्वरूप से है जिसके माध्यम से छात्रों को सर्वांगीण विकास हेतु ज्ञानात्मक सामग्री की उपलब्धता सरलता से होती है तथा छात्र स्वयं बिखरी हुई सूचनाओं एवं अधिगम

गतिविधियों को व्यवस्थित करके ज्ञान प्राप्त करते हैं और स्वयं के सर्वांगीण विकास को पथ प्रशस्त करते हैं।"

2.6.2 ज्ञान के निर्माण की विशेषताएँ

ज्ञान के निर्माण की प्रमुख विशेषताओं के बारे में विभिन्न विद्वानों, शिक्षाशास्त्रियों ने भिन्न–भिन्न विचार प्रकट किए हैं जो निम्नलिखित हैं–

1. सूचनाओं का संश्लेषण एवं विश्लेषण।
2. ज्ञान का निर्माण उद्देश्यपूर्णता के लिए।
3. ज्ञान का निर्माण विज्ञान सम्बन्धी सूचनाओं के रूप में।
4. ज्ञान का निर्माण एक बौद्धिक ज्ञान के रूप में।
5. ज्ञान का निर्माण एक व्यापक प्रक्रिया के रूप में।
6. ज्ञान का निर्माण पुस्तकालय व्यवस्था के रूप में।
7. ज्ञान का निर्माण एक दार्शनिक प्रक्रिया के रूप में।
8. ज्ञान का निर्माण तकनीकी सूचनाओं की प्रक्रिया के रूप में।
9. ज्ञान का निर्माण एक वर्गीकरण की प्रक्रिया के रूप में।
10. ज्ञान का निर्माण सूचनाओं के निर्धारण की प्रक्रिया के रूप में।
11. ज्ञान का निर्माण सूचनाओं के समन्वयन की प्रक्रिया के रूप में।
12. ज्ञान का निर्माण सूचनाओं की पुनःप्राप्ति की प्रक्रिया के रूप में।

2.6.3 अधिगम ज्ञान के निर्माण के रूप में

अधिगम की प्रक्रिया में प्रायः ज्ञान का प्रभावी समावेश होता है तथा ज्ञान का निर्माण, हस्तान्तरण एवं प्रतिग्रह अधिगम प्रक्रिया के ही अंग हैं। सर्वप्रथम ज्ञान के निर्माण की प्रक्रिया का मनुष्य के जीवन पर दो रूपों में प्रभाव पड़ता है। पहला जब व्यक्ति किसी अधिगम क्रिया को सम्पन्न करता है तो उसे ज्ञान की प्राप्ति होती है। उसमें नवीन तथ्यों के ज्ञान एवं सृजनात्मक योग्यता का विकास होता है। यद्यपि ज्ञान सृजन की प्रक्रिया जटिल होती है अतः यह छात्रों की विभिन्न योग्यताओं एवं क्षमताओं से प्रभावित होती है। प्रायः शिक्षक द्वारा कक्षा में शिक्षण प्रक्रिया द्वारा ज्ञान प्रदान किया जाता है परन्तु समस्त छात्रों में से कुछ छात्र सामान्य स्तर का सृजन तो कुछ में सृजन स्तर नगण्य रहता है।

अतः अधिगम के ज्ञान निर्माण के इस सिद्धांत के द्वारा यह सिद्ध होता है कि शिक्षक की शिक्षण विधि के अतिरिक्त छात्रों की सृजनात्मकता प्रायः बुद्धि–लब्धि तथा शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य एंव पर्यावरणीय कारकों से प्रभावित होता है। अध्यापक को यह आवश्यक रूप से समझ लेना चाहिए कि किस विधि के माध्यम से वह समस्त छात्रों में ज्ञान का विकास कर सकता है। शिक्षक के अथक प्रयास द्वारा छात्रों में ज्ञान सृजन की प्रक्रिया का विकास सम्भव हो जाता है जिसके लिए प्रमुख बिन्दु इस प्रकार हैं–

1. सर्वप्रथम शिक्षक को छात्रों की वैयक्तिक भिन्नता तथा उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षण करना चाहिए।

2. शिक्षक को प्रायः छात्रों की सहभागिता से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया सम्पन्न करनी चाहिए।

3. शिक्षका को छात्रों को विभिन्न पाठ्य–सहगामी क्रियाओं, जैसे– वाद–विवाद तथा भाषण आदि के अवसर उपलब्ध कराने चाहिए जिससे उनमें चिन्तन, तर्क एवं सृजन शक्ति का विकास हो सके।

4. छात्रों को प्रायः स्वतन्त्र रूप से ज्ञान प्रदान किया जाता है।

2.7 रचनावाद या निर्मितवाद और सक्रियवाद

विगत तीन दशकों में अधिगम एवं शिक्षण की प्रक्रिया एवं अर्थ के सोच में मूल परिवर्तन हुआ है। यह परिवर्तन व्यवहारवाद से लेकर निर्मितवाद तक है। जिसमें व्यवहार परिवर्तन को अधिगम का केन्द्र न मानकर मानसिक परिवर्तनों को अधिगम का केन्द्र माना गया है। निर्मितवाद में यह स्वीकारा गया है कि अधिगम एक सक्रिय प्रविधि है जिसका मुख्य आधार नवीन अनुभव होते हैं जो कक्षाकक्ष में छात्र को शिक्षक द्वारा उपलब्ध कराये जाते हैं।

अधिगम की यह नवीन संकल्पना (निर्मितवाद) संज्ञानात्मक सिद्धान्तों से प्रतिपादित हुई है। जिसको मस्तिष्क आधारित अधिगम शोध से बल मिला है। समय–समय के साथ इसमें परिवर्तन होते चले गये हैं। निर्मितवाद का अर्थ है व्यक्ति स्वयं ज्ञात निर्माण करें तथा एक नवीन अर्थ ढूंढने का प्रयास करें अर्थात नवीन अर्थ प्राप्त करना ही अधिगम है जो अनुभवों पर आधारित होता है।

निर्मितवाद अधिगम का दर्शन है। यह ज्ञान मीमांसा भी है जिसमें विषय–वस्तु की प्रकृति का अध्ययन किया जाता है। निर्मितवाद अधिगम के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अनुभवों पर चिन्तन करके उस संसार के बोध का निर्माण करते हैं जिसमें वो रह रहे हैं और क्रमशः सम्प्रत्ययात्मक परिवर्तन रहते हैं। निर्मितवाद एक अधिगम एक प्रविधि है जिसमें छात्र सक्रिय रहकर बाह्य वातावरण से अनुभवों द्वारा अर्थ ग्रहण करते हैं इस अर्थग्रहण करने को सीखना भी कहते हैं। निर्मितवाद अधिगम के सिद्धान्त हैं, यह जानने के भी सिद्धान्त हैं एक ज्ञान मीमांसा का सम्प्रत्यय है।

निर्मितवाद के अनुसार अधिगम एक स्वतन्त्र रूप से सम्पन्न की गयी क्रिया है जो एक स्थिति में सन्निहित है। छात्र सक्रिय होकर ही नवीन ज्ञान अर्जित कर सकता है और अपना मानसिक प्रतिमान विकसित करता है। जिनका प्रयोग अनुभवों को समझने में किया जाता है जिसको पूर्व ज्ञान आधार होता है। निर्मितवादी अधिगम प्रतिमान के अनुसार समस्त ज्ञान का निर्माण संज्ञानात्मक प्रविधियों का फल है जो मानव मस्तिष्क में होता है और जिसके प्रमुख सिद्धान्त निम्नलिखित है–

1. अधिगम सक्रिय प्रक्रिया है।

2. अधिगम एक सामाजिक प्रक्रिया भी है।

3. अधिगम सन्दर्भित है।

4. अधिगम में स्वयं चिन्तन/विवेचन महत्वपूर्ण है।

5. अधिगम में समय लगता है।

इस अध्याय में भौतिक विज्ञान शिक्षण में निर्मितवाद का प्रयोग करने के लिए आह्वान किया गया है जिससे विज्ञान शिक्षक ऐसा अधिगम वातावरण सृजन कर सके कि

छात्र स्वयं अनुभव के आधार पर ज्ञान का निर्माण कर सकें। निर्मितवाद अधिगम विभिन्न दार्शनिकों, शिक्षाविदों और शिक्षकों के योगदान पर आधारित रहा है। जिसमें जॉन डीवी, जीन पियाजे, प्रो. ब्रूनर, प्रो. वाइगोस्टिकी का महत्वपूर्ण योगदान है। प्रो. जीन पियाजे निर्मितवाद के पिता माने जाते हैं जिसका स्रोत संज्ञानात्मक मनोविज्ञान है। इनके अनुसार छात्र खोज विधि द्वारा स्वयं ज्ञान अर्जित करता है जिसमें वह तार्किक संरचनाओं का निर्माण करता है। इसको संज्ञानात्मक निर्मितवाद कहा गया है। वाइगोस्टिकी के अनुसार अधिगम का सामाजिक परिप्रेक्ष्य है जिसको सामाजिक निर्मितवाद कहा गया है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 10: शिक्षण की प्रक्रिया में कौन सीखता है?

....

....

प्रश्न 11: ज्ञान के अध्ययन को दर्शन में क्या कहा जाता है?

....

....

प्रश्न 12: रचनात्मकता या निर्मितवाद में क्या सीखा जाता है?

....

....

2.7.1 निर्मितवादी अधिगम आधारित विज्ञान शिक्षण विधियाँ

शिक्षाविदों ने निम्नलिखित विधियों को अपनाने का प्रयास किया है जैसे–

1. **संवाद (Conversation)** – सदियों से शिक्षण अधिगम में संवाद पर बल दिया गया है। दार्शनिक सुकरात द्वारा संवाद को महत्वपूर्ण माना गया है और इसका प्रभाव शिक्षण में प्रत्येक स्थान पर देखने को मिलता है। संवाद द्वारा छात्रों में यह स्पष्ट होता है कि इनमें तर्क और ज्ञान के आधार पर किसी दूसरे व्यक्ति से सीखने की क्षमता है या नहीं। छात्रों में समाज द्वारा चिन्तन विकसित किया गया है। जिससे उनका स्पष्ट, सुविचारित दृष्टिकोण विकसित हो सके।

2. **परिचर्चा (Discussion)** – इस प्रविधि में छात्र तर्क और सत्य के आधार पर अन्य साथियों से परिचर्या करते हैं और अपने दृष्टिकोण को सामने रखने का प्रयास करते हैं। परिचर्चा का आधार ज्ञान का होना है।

3. **विज्ञान अधिगम चक्र (Science Learning Cycle)** – विज्ञान में, अधिगम चक्र एक नियोजन, क्रिया और चिन्तन का मार्ग है और यह छात्रों की प्रकृति के अनुकूल है। यह विज्ञान अनुदेशन के लिए एक उत्तम प्रविधि है विज्ञान अधिगम चक्र मुख्यतः तीन पक्षों में विभाजित होता है।

4. **सहकारी एवं सहयोगी अधिगम (Cooperative and Collaborative Learning)** – सहयोगी अधिगम एक शिक्षण विधि है, जिसमें छात्र एक दल बनाकर प्रश्नों का उत्तर ढूँढने का प्रयास करते हैं अथवा एक अर्थपूर्ण प्रोजेक्ट विकसित करते हैं। सहकारी अधिगम एक विशिष्ट प्रकार का सहयोगी अधिगम है इस प्रविधि में छात्र सहाकारी वातावरण में मिलकर या दल के रूप में ज्ञान अर्जित

करने का प्रयास करते हैं। छात्र वैयक्तिक स्तर पर अपने कार्य के लिए उत्तरदायी हैं और दल के कार्य को सम्पूर्ण करने का प्रयास करते हैं। सहकारी अधिगम के लिए वातावरण बनाना होता है जो निम्न आवश्यकताओं पर निर्भर है– 1. छात्र अपने आप को सुरक्षित समझे किन्तु साथ में चुनौती का आभास हो, 2. छात्रों के दल छोटे होने चाहिए जिससे प्रत्येक छात्र को योगदान का अवसर मिले, 3. छात्र जिस प्रोजेक्ट पर कार्य कर रहे हैं उसे स्पष्ट परिभाषित करना चाहिए। सहयोगी अधिगम, रूढ़िवादी शिक्षण से इसलिए भिन्न है क्योंकि इसमें छात्र सहयोग से कार्य करते हैं। स्पर्धा से कार्य नहीं करते। इस विधि में छात्र सक्रियता और रचनात्मकता से ज्ञान अर्जित करने का प्रयास करते हैं और एक दूसरे से सीखने का प्रयास करते हैं।

2.8 सारांश

मनोविज्ञान में अधिगम से तात्पर्य सिर्फ उन्हीं परिवर्तनों से होता है जो अभयास या अनुभूति के फलस्वरूप होते हैं। सीखना व्यवहार में उत्तरोतर सामन्जस्य की प्रक्रिया है अनुभव के आधार पर उसके स्वाभाविक व्यवहार में परिवर्तन हो जाता है मनोविज्ञान में इस प्रकार के स्वाभाविक व्यवहार में होने प्रगतिशील परिवर्तन को ही सीखना कहते है। अधिगम एक प्रक्रिया है इस प्रक्रिया की सफलता केवल प्रभावशाली शिक्षण पर ही नहीं वरन् अनेक सामूहिक कारको पर निर्भर करती है। शिक्षार्थी, शिक्षक, पाठ्यवस्तु, अधिगम, व्यवस्था, वातावरण इत्यादि से सम्बधित अनेक कारक अधिगम की मात्रा स्वरूप एवं गति के निर्धारक के रूप में उत्तरदायी होते है। सीखने की प्रक्रिया एक उच्च मानसिक प्रक्रिया है। इस मानसिक प्रक्रिया का ज्ञान के बोध का अध्ययन करने के लिए मनोवैज्ञानिकों द्वारा समय–समय पर अनेक प्रयोग किय गये हैं। ज्ञानात्मक क्षेत्र के अंतर्गत अधिगम में उन बातों को सीखा जाता है जिनका संबंध मानसिक क्रियाओं से अधिक होता है। मानसिक क्रियाओं के अंतर्गत चिंतन करना, तर्क शक्ति बढ़ाना, जानने एवं समझने का प्रयास करना एवं समस्या का समाधान करना आदि क्रियायें सम्पन्न होती हैं जो संज्ञानात्मक क्षेत्र से जुड़ी होती हैं। अधिगम की यह नवीन संकल्पना (निर्मितवाद) संज्ञानात्मक सिद्धान्तों से प्रतिपादित हुई है जिसको मस्तिष्क आधारित अधिगम शोध से बल मिला है। निर्मितवाद का अर्थ है व्यक्ति स्वयं ज्ञान निर्माण करें तथा एक नवीन अर्थ ढूंढने का प्रयास करे अर्थात नवीन अर्थ प्राप्त करना ही अधिगम है जो अनुभवों पर आधारित होता है। निर्मितवादी अधिगम आधारित अनेक शिक्षण विधियाँ है, शिक्षाविदों ने निम्नलिखित विधियों को अपनाने का प्रयास किया है जैसे– संवाद, परिचर्चा, विज्ञान अधिगम चक्र, सहकारी एवं सहयोगी अधिगम।

2.9 अभ्यास प्रश्न

1. भौतिकीय विज्ञान अधिगम को परिभाषित कीजिए?
2. अधिगम की प्रकृति की विवेचना कीजिए?
3. अधिगम को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारको का वर्णन कीजिए?
4. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण–अधिगम के मनोविज्ञान को स्पष्ट कीजिए?
5. रचनात्मकता को परिभाषित कीजिए?
6. रचनात्मकता का वर्णन कीजिए?

2.10 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान अधिगम पर चर्चा करेगें।

2. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण–अधिगम के मनोविज्ञान पर चर्चा करेंगें।

3. छात्राध्यापक आपस में रचनात्मकता पर चर्चा करेंगें।

इकाई–3 पाठ्यचर्या सुधार एवं भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य एवं प्राप्य उद्देश्य

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 पाठ्यचर्या का अर्थ और परिभाषा

3.4 भौतिकीय विज्ञान का पाठ्यचर्या में स्थान

3.5 भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का महत्व

3.5.1 बौद्धिक मूल्य

3.5.2 सांस्कृतिक मूल्य

3.5.3 सौन्दर्यात्मक मूल्य

3.5.4 मनोवैज्ञानिक मूल्य

3.5.5 सामाजिक मूल्य

3.5.6 व्यावहारिक मूल्य

3.5.7 व्यावसायिक मूल्य

3.5.8 नैतिक मूल्य

3.6 लक्ष्य एवं उद्देश्य

3.7 कोठारी कमीशन एवं भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य

3.7.1 प्राथमिक स्कूल स्तर

3.7.2 उच्च प्राथमिक स्तर

3.7.3 निम्न माध्यमिक स्तर

3.7.4 उच्च माध्यमिक स्तर

3.8 वर्तमान संदर्भ में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य

3.8.1 ज्ञान सम्बंधी उद्देश्य

3.8.2 वैज्ञानिक दृष्टिकोण सम्बंधी उद्देश्य

3.8.3 रूचि सम्बंधी उद्देश्य

3.8.4 प्रशांसात्मक सम्बंधी उद्देश्य

3.8.5 समझ सम्बंधी उद्देश्य

3.8.6 प्रयोग सम्बंधी उद्देश्य

3.9 सारांश

3.10 अभ्यास प्रश्न

3.11 चर्चा के बिन्दु

3.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.1 प्रस्तावना

पाठ्यचर्या एक ऐसी धुरी है जिसके चारों तरफ कक्षा के विविध कार्यक्रम तथा विद्यालय के समस्त क्रियाकलाप विकसित किये जाते हैं। किसी भी विषय का अध्ययन करने के लिए यह जानना बहुत ही आवश्यक होता है, कि उस विषय का पाठ्यचर्या क्या है? क्योकि पाठ्यचर्या के आधार पर हम आगामी परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त करने की योजना बना सकते हैं। मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष तथा दैनिक जीवन की प्रत्येक क्रिया को सफल बनाने के उद्देश्य का विशेष महत्व होता है। बिना उद्देश्य के हम जीवन के किसी भी क्षेत्र में सफल नहीं हो सकते। शिक्षा के क्षेत्र मे भी यही बात है। इसका मात्र एक कारण यह है कि प्राकृतिक बालक तथा प्रगतिशील एवं विकसित समाज की आवश्यकताओं तथा आदर्शों के बीच एक गहरी खाई होती है इस खाई को पाटने के लिये केवल शिक्षा ही एक ऐसा साधन है जो किसी उद्देश्य के अनुसार समाज के बदलती हुई आवश्यकताओं तथा आदर्शों को दृष्टि में रखते हुए बालक की मूल प्रवृत्तियों का विकास इस प्रकार से कर सकते हैं की व्यक्ति तथा समाज दोनों ही विकसित होते रहें।

प्रस्तुत इकाई में हम पाठ्यचर्या का अर्थ और परिभाषा, भौतिकीय विज्ञान का पाठ्यचर्या में स्थान, भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का महत्व, बौद्धिक मूल्य, सांस्कृतिक मूल्य, सौन्दर्यात्मक मूल्य, मनोवैज्ञानिक मूल्य, सामाजिक मूल्य, व्यावहारिक मूल्य, व्यावसायिक मूल्य, नैतिक मूल्य, लक्ष्य एवं उद्देश्य, कोठारी कमीशन एवं भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य, प्राथमिक स्कूल स्तर, उच्च प्राथमिक स्तर, निम्न माध्यमिक स्तर, उच्च माध्यमिक स्तर, वर्तमान संदर्भ में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य, ज्ञान सम्बन्धी उद्देश्य, वैज्ञानिक दृष्टिकोण सम्बन्धी उद्देश्य, रुचि सम्बन्धी उद्देश्य, प्रशंसात्मक सम्बन्धी उद्देश्य, समझ सम्बन्धी उद्देश्य और प्रयोग सम्बन्धी उद्देश्य के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको पाठ्यचर्या सुधार एवं भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य को समझने में सुविधा होगी।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेगें कि–

- पाठ्यचर्या का अर्थ जान सकेंगे।
- पाठ्यचर्या को परिभाषित कर सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान का पाठ्यचर्या में स्थान के महत्व को निर्धारित कर सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का महत्व का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
- लक्ष्य एवं उद्देश्य में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।
- वर्तमान संदर्भ में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्यों का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।

3.3 पाठ्यचर्या का अर्थ और परिभाषा

शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति पाठ्यचर्या के द्वारा होती है। पाठ्यचर्या शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति का साधन है। पाठ्यचर्या में केवल विषयों का ज्ञान नहीं होता वरन् उसमें छात्र की सभी अनुभव निहित होता है। आदर्शवादी हार्न के अनुसार पाठ्यचर्या में सीखने के कार्यों से अधिक बातें आती है। इसमें व्यवसाय, उत्पादन, उपलब्धियाँ, अभ्यास, क्रिया आदि सम्मिलित होते हैं। पाठ्यचर्या उन सभी क्रियाकलापों का एक समूह है जिन्हें अध्यापक तथा छात्र एक साथ मिलकर शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रयास करते हैं। आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में पाठ्यचर्या का अत्यधिक विशिष्ट महत्व हैं। पाठ्यचर्या के आधार पर ही शिक्षा संस्थाओं में शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया का समुचित आयोजन सम्भव हो पाता है। पाठ्यचर्या का निर्माण मुख्य रूप से शिक्षा के उद्देश्यों पर आधारित होता है। इसलिए किसी भी स्तर की शिक्षा के पाठ्यचर्या का उस स्तर के लिए निर्धारित उद्देश्यों के अनुरूप होना आवश्यक है।

पाठ्यचर्या का अंग्रेजी पर्यावाची शब्द 'केरीकुलम' (Curriculum) है। केरीकुलम शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा से हुई है जिसका अर्थ है दौड़ का मैदान। पाठ्यचर्या का वह क्षेत्र मैदान है जिसका चक्कर लगाकर व्यक्ति अपने लक्ष्य को प्राप्त करता है। विस्तृत अर्थ में पाठ्यचर्या के अंतर्गत समस्त विद्यालयीय वातावरण आता है, जिसके अंतर्गत विद्यालय में प्राप्त सभी प्रकार के सम्पर्क, पाठन क्रिया कलाप एवं विषय सम्मिलित होते है। वास्तव में पाठ्यचर्या को बाल केन्द्रित, अनुभव केन्द्रित तथा क्रिया केन्द्रित होना चाहिए। इसे बालकों के प्राकृतिक वातावरण तथा सामाजिक जीवन से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होना चाहिए। देश की आवश्यकताओं तथा परिस्थितियों के अनुरूप शिक्षा को एक महत्वपूर्ण दायित्व का निर्वाह करना चाहिए।

3.4 भौतिकीय विज्ञान का पाठ्यचर्या में स्थान

विज्ञान शिक्षण के क्षेत्र में बहुत लंबी अवधि तक समन्वित दृष्टिकोण को मान्यता मिलती रही है। इसीलिए भौतिकीय विज्ञान विषय को साधारण विज्ञान के रूप में पढ़ाया जाता रहा है। भौतिकीय विज्ञान के विभिन्न उपविषयों से सामग्री लेकर साधारण भौतिकीय विज्ञान विषय का संगठन किया जाता रहा है। परन्तु पिछले कुछ दशकों में हुई वैज्ञानिक प्रगति और ज्ञान के विस्तृत भण्डार की खोज से इस बात को बल मिला है कि समन्वित दृष्टिकोण के स्थान पर भौतिकीय विज्ञान विषय की शाखाओं का विशिष्ट ज्ञान करवाया जाए। इसी आधार पर आज विद्यालयों में भौतिकीय विज्ञान से सम्बन्धित उपविषयों को अलग–अलग बांटकर पढ़ाने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। उच्च माध्यमिक स्तर पर भौतिकीय विज्ञान एवं जीव विज्ञान को अनिवार्य विषय के रूप में एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर पर वैकल्पिक विषय के रूप में पढ़ाया जा रहा है। इस प्रकार पाठ्यचर्या में भौतिकीय विज्ञान को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

आदिकाल से प्रकृति के विस्मय से अभिभूत मनुष्य की महत्वपूर्ण प्रतिक्रिया रही है–अपने भौतिकीय विज्ञान और जैविक पर्यावरण का ध्यान से निरीक्षण करना, उनमें अर्थपूर्ण संयोजनों (Patterns) और सम्बन्धों को खोजना, प्रकृति से काम लेने के लिए औजार बनाना, और संसार को समझने के लिए अवधारणाएँ बनाना। इन मानवीय प्रयासों की परिणति, आधुनिक भौतिकीय विज्ञान में हुई है।

भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का उदारवादी दृष्टिकोण इस विश्वास पर आधारित है कि भौतिकीय विज्ञान की शिक्षा के साथ–साथ विज्ञान के बारे में भी जानना जरूरी है। भौतिकीय विज्ञान के शिक्षकों को उस विषय के इतिहास और प्रकृति का भी कुछ ज्ञान

होना चाहिए जो वे पढ़ा रहे हैं। भौतिकीय विज्ञान को इतिहास और दर्शन के बोध से सम्पन्न दृष्टि से पढ़ाया जाना विद्यार्थियों में प्रकृति की समझ को जन्म देता है। उन्हें प्रकृति और भौतिकीय विज्ञान के सौन्दर्य का रस लेना सिखाता है। उनमें वैज्ञानिक जानकारी और क्रियाकलाप से उजागर होने वाले नीतिगत मुद्दों के प्रति चेतना जगाता है।

एन.सी.एफ. ने भारत में मौजूदा भौतिकीय विज्ञान–शिक्षण के जटिल परिदृश्य में स्पष्ट दिखाई देने वाले तीन महत्वपूर्ण मुद्दों को चिह्नित किया हैः

1. संविधान में घोषित समता और समानता का लक्ष्य हासिल करने के लिए भौतिकीय विज्ञान शिक्षण को अभी लम्बी दूरी तय करना है।

2. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण, अच्छी से अच्छी स्थितियों में भी, एक प्रकार की कुशलता तो विकसित करता है, परन्तु अनुसंधान करने और नया रचने की वृत्तियों को प्रोत्साहित नहीं करता।

3. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण की अधिकांश या शायद सभी समस्याओं की जड़ उस पर हावी परीक्षा प्रणाली है।

एन.सी.एफ. के अनुसार, भौतिकीय विज्ञान शिक्षण से सीखने वाला इस काबिल बनना चाहिए किः

1. जैसे–जैसे संसार को पहचानने की उसकी क्षमता बढ़े, वैसे–वैसे वह उससे जुड़े वैज्ञानिक तथ्यों और सिद्धान्तों को भी जाने और उनके विभिन्न उपयोगों से भी परिचित हों।

2. वह ऐसा कौशल हासिल कर सके और उन विधियों तथा प्रक्रियाओं को समझ सके, जिनके उपयोग से वैज्ञानिक ज्ञान का जन्म होता है और उसकी सत्यता की पुष्टि भी होती है।

3. उसमें भौतिकीय विज्ञान की ऐतिहासिक और विकासपरक दृष्टि का विकास हो, और वह भौतिकीय विज्ञान को एक सामाजिक अभिक्रम की तरह देख सके।

4. वह पूरे परिवेश (प्राकृतिक पर्यावरण, कृत्रिम रचनाओं और लोग) से जुड़ाव महसूस कर सके। इस परिवेश की समझ केवल स्थानीय न होकर वैश्विक हो। ताकि वह भौतिकीय विज्ञान, तकनीक और समाज के संगम से उपजने वाले मुद्दों का महत्व समझ सके।

5. वह संसार के कर्मक्षेत्र में उतर सकने के लिए जरूरी सैद्धान्तिक ज्ञान और व्यावहारिक तकनीकी कौशल हासिल कर ले।

6. उसकी सहज जिज्ञासा, सौन्दर्यबोध और रचनात्मकता को पोषण मिले।

7. वह ईमानदारी, निष्ठा, सहभागिता तथा जीवन और पर्यावरण की फिक्र जैसे मूल्यों को आत्मसात कर सके।

8. उसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित हो, अर्थात् उसकी दृष्टि तटस्थ और तथ्यात्मक हो, उसकी सोच स्वतंत्र हो। वह स्वयं भय और पूर्वाग्रहों से मुक्त हो।

एन.सी.एफ.–2005 में दिए गए वर्णन के अनुसार, वैज्ञानिक पद्धति आपस में सम्बन्धित कई गतिविधियों को मिलाकर बनती है। जैसे कि निरीक्षण, देखे गए तथ्यों में समानताओं और समरूपी संरचनाओं की खोज करना, अवधारणाएँ बनाना, स्थितियों के गुणात्मक और गणितीय प्रारूप गढ़ना, तार्किक ढंग से उनके निष्कर्ष निकालना, और प्रेक्षणों तथा नियंत्रित प्रयोगों के द्वारा सिद्धान्तों के सच–झूठ होने की पुष्टि करना, और इस तरह अन्त में प्राकृतिक संसार पर लागू होने वाले सिद्धान्तों, धारणाओं तथा नियमों पर पहुँचना। भौतिकीय विज्ञान के नियम अचल शाश्वत सत्यों की तरह नहीं देखे जाने चाहिए। यहाँ तक कि, सर्वाधिक स्थापित और सार्वभौमिक वैज्ञानिक नियम भी तात्कालिक ही माने जाने चाहिए जो नए प्रेक्षणों, प्रयोगों और विश्लेषणों के द्वारा संशोधित किए जा सकते हैं।

एन.सी.एफ. में पाठ्यचर्या को सीखने के विभिन्न चरणों के अनुरूप बनाया गया है। प्राथमिक स्तर पर जोर इस बात पर दिया गया है कि संसार (प्राकृतिक परिवेश,कृत्रिम रचनाएँ और लोग) के प्रति बच्चे के कौतूहल को बढ़ावा मिले। संसार को पहचानने की उसकी बुनियादी क्षमताओं जैसे निरीक्षण करना, वर्गीकरण करना और निष्कर्ष निकालना आदि के साथ–साथ उसमें अपने हाथ जैसे अंगों से काम लेने के कौशल का भी विकास हो। बच्चों के लिए विज्ञान की "भाषा" सीखना भी महत्वपूर्ण है। एन.सी.एफ. का सुझाव है कि भौतिकीय विज्ञान और सामाजिक विज्ञान को मिला कर अधिक व्यापक 'पर्यावरण–अध्ययन' विकसित करने का प्रयास जारी रहना चाहिए। इसका एक अन्य महत्वपूर्ण हिस्सा स्वास्थ्य भी हो।

बोध प्रश्न

प्रश्न 13: पाठ्यचर्या को परिभाषित कीजिये?

....

....

प्रश्न 14: वैज्ञानिक पद्धति कैसे बनती है?

....

....

प्रश्न 15: बालक के बुनियादी क्षमताएं कौन–कौन सी है?

....

....

उच्च प्राथमिक कक्षाओं के स्तर पर, बच्चे को इस प्रयास में संलग्न किया जाना चाहिए कि वह अपने परिचित अनुभवों के माध्यम से भौतिकीय विज्ञान के सिद्धान्तों को समझे। साथ ही खुद अपने हाथों से छोटी–छोटी तकनीकी इकाइयों और मॉड्यूलों की रचना करे। उदाहरण के लिए वजन उठाने के लिए पवनचक्की के एक प्रभावी मॉडल की कल्पना करके, उसका निर्माण करना। दूसरी ओर उसके पर्यावरण और स्वास्थ्य–सम्बन्धी ज्ञान का विस्तार भी जारी रहे। जिसमें गतिविधियों और सर्वेक्षणों के माध्यम से प्रजनन और यौन–स्वास्थ्य सम्बन्धी शिक्षा शामिल हो। भौतिकीय विज्ञान की अवधारणाओं तक मुख्य रूप से गतिविधियों और प्रयोगों के मार्ग से पहुँचना चाहिए। इस स्तर की भौतिकीय विज्ञान सामग्री और विषय को माध्यमिक भौतिकीय विज्ञान के हल्के रूप की तरह नहीं देखा

जाना चाहिए। सामूहिक गतिविधि, साथियों और शिक्षकों से चर्चा, सर्वेक्षण, आँकड़ों को व्यवस्थित ढंग से एकत्रित करना और उन्हें प्रदर्शनियों आदि के माध्यम से स्कूलों और मौहल्लों में दिखाना– ये सभी शिक्षण प्रक्रिया के महत्वपूर्ण अंग होना चाहिए।

3.5 भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का महत्व :

विद्यालय पाठ्यचर्या में भौतिकीय विज्ञान को सम्मिलित करने के उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त भौतिकीय विज्ञान के निम्नलिखित उपयोगी मूल्य हैं जो आधुनिक संसार में सफल एवं सन्तुष्ट जीवनयापन के लिए आवश्यक हैं–

3.5.1 बौद्धिक मूल्य

भौतिकीय विज्ञान व्यक्ति की मानसिक शक्तियों के पूर्ण विकास में सहायता प्रदान करता है। यह व्यक्ति को विचार और तर्क करने की विधियों से परिचित करवाता है। यह हमारी बुद्धि को तीक्ष्ण करता है और सत्य की खोज की ओर प्रेरित करता है। भौतिकीय विज्ञान व्यक्ति की कल्पना–शक्ति, निरीक्षण–शक्ति, अन्वेषण–शक्ति, एकाग्रता, चिन्तनशीलता एवं मौलिकता आदि मानसिक शक्तियों का समुचित विकास करता है। भौतिकीय विज्ञान संकीर्णता और रूढ़िवादिता की अपेक्षा तथ्यों और प्रयोगों के विश्लेषण पर आधारित सत्य पर बल देता है। भौतिकीय विज्ञान व्यक्ति को सही और गलत में भेद करना, सत्य को खोजना, तर्क करना, कल्पना करना और कल्पना को वास्तविकता में बदलने के लिए प्रयोग करना सिखाता है। क्या, क्यों, कैसे, कितना आदि से संबंधित प्रश्नों के समाधान ढूंढ़ने के लिए कुशाग्र बुद्धि एवं प्रशिक्षित मस्तिष्क का होना आवश्यक है और ऐसा भौतिकीय विज्ञान की सहायता से सही संभव है।

3.5.2 सांस्कृतिक मूल्य

भौतिकीय विज्ञान का सांस्कृतिक महत्व भी है। संस्कृति से अभिप्राय है किसी समाज या राष्ट्र की संपूर्ण जीवन पद्धति। ज्ञान, परम्पराएं, रीति–रिवाज, नैतिकताएं, कानून, पूजा–पद्धति, कला, दर्शन, साहित्य एवं लोगों की विचारधारा या दर्शन–ये सभी राष्ट्र की संस्कृति में सम्मिलित हैं। भौतिकीय विज्ञान हमारी सामाजिक परम्परा का एक विशिष्ट अंग है। इसका अपना ही साहित्य है और अपना ही रोमांच है। वैज्ञानिक आविष्कारों की कहानी, वैज्ञानिकों के प्रेरणादायक जीवन वृत्तांत तथा वैज्ञानिक उन्नति का इतिहास हमें मानव संस्कृति से परिचित करवाता है। भौतिकीय विज्ञान का अध्ययन हमें सभ्यता एवं संस्कृति से परिचित ही नहीं करवाता अपितु इसे संरक्षित रखने एवं अगली पीढ़ी तक पहुंचाने में भी योगदान देता है। भौतिकीय विज्ञान के क्षेत्रा में होने वाली नई खोजें संस्कृति के विकास में सहायता प्रदान करती है।

3.5.3 सौन्दर्यात्मक मूल्य

भौतिकीय विज्ञान के संप्रत्ययों से अपरिचित व्यक्तियों के लिए भौतिकीय विज्ञान एक रसहीन, जटिल एवं नीरस विषय है परन्तु भौतिकीय विज्ञान प्रेमियों के लिए भौतिकीय विज्ञान सुन्दरता है, कला है और सुख प्राप्ति का एक साधन है। भौतिकीय विज्ञान प्रकृति के रहस्यों की खोज करता है और प्रकृति की प्रत्येक वस्तु के अंतर्निहित सौन्दर्य से हमें

परिचित करवाता है। भौतिकीय विज्ञान के अध्ययन में सफलता मिलने के बाद असीम आनन्द की प्राप्ति होती है।

3.5.4 मनोवैज्ञानिक मूल्य

भौतिकीय विज्ञान की शिक्षा मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी उपयोगी है। 'करके सीखना' (Learning by doing), ठोस तथा सजीव नमूनों के निरीक्षण द्वारा सीखना आदि मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों को भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में प्रयोग किया जाता है। इससे विद्यार्थियों की रचनात्मक एवं निर्माणात्मक प्रवृत्तियों का विकास होता है। भौतिकीय विज्ञान व्यक्ति की जिज्ञासा को शांत करता है और उसकी स्वाभाविक रूचियों के विकास में सहायता प्रदान करता है। विभिन्न प्रयोगों को करने एवं परिणाम निकालने से विद्यार्थियों की अन्वेषणात्मक प्रवृत्तियों का विकास होता है और उन्हे आत्म–तुष्टि प्राप्त होती है। भौतिकीय विज्ञान संग्रहालय द्वारा उनकी संग्रह करने की प्रवृत्ति को उचित दिशा प्राप्त होती है।

3.5.5 सामाजिक मूल्य

भौतिकीय विज्ञान शिक्षा का सामाजिक महत्व है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह अकेला नहीं रह सकता। समाज में रहकर वह दूसरे व्यक्तियों के साथ अंतक्रिया करता है, समाज के नियमों का पालन करता है और समाज की उन्नति में अपना योगदान करता है। भौतिकीय विज्ञान व्यक्ति को इस दिशा में उपयोगी ज्ञान प्रदान करता है।

3.5.6 व्यावहारिक मूल्य

वर्तमान युग भौतिकीय विज्ञान का युग है। हमारे चारों ओर उपस्थित प्रत्येक वस्तु किसी न किसी रूप में भौतिकीय विज्ञान से सम्बन्धित है। भौतिकीय विज्ञान ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को किसी न किसी रूप में अपनी देन से अनुगृहीत किया है। भौतिकीय विज्ञान प्रदत्त विद्युत आविष्कारों ने जीवन को आलोकमय बना दिया है। आज मनुष्य ऋतुओं के प्रकोप से घबराता नहीं है। वह भयंकर गर्मी में घर को आसानी से ठंडा और ठिठुरती सर्दी में घर को सरलता से गर्म रख सकता है। उसे बिजली का बटन मात्र दबाने की आवश्यकता होती है कि पंखा, कूलर, हीटर, गीजर, कम्प्यूटर, रोबोट आदि उसकी इच्छा के अनुकूल काम करने लगते हैं। विद्युत और उसके आविष्कारों ने मानव जीवन को केवल प्रकाशित ही नहीं किया है, उसे सुख–सम्पन्न भी बनाया है और उसके व्यवसाय को भी बढ़ाया है।

3.5.7 व्यावसायिक मूल्य

आधुनिक युग भौतिकीय विज्ञान, तकनीकी एवं कम्प्यूटर का युग है। प्रत्येक व्यवसाय–बैंक, टेलिफोन, बिजली, डेयरी फार्मिंग, कम्प्यूटर, इंजीनियरिंग, उद्योग, भवन निर्माण, ऊर्जा परियोजनाएं अथवा पेट्रोलियम पदार्थों का दोहन आदि किसी न किसी रूप में भौतिकीय विज्ञान के सिद्धान्तों पर आधारित है। भौतिकीय विज्ञान व्यक्ति एवं बालक को सैद्धान्तिक एवं तकनीकी ज्ञान प्रदान करता है। इस ज्ञान की सहायता से वह जीवन में व्यवसाय का चुनाव अपनी क्षमताओं के अनुरूप कर सकता है। भौतिकीय विज्ञान के सूक्ष्म उपकरणों को चलाने के लिए जिन कौशलों की आवश्यकता होती है, उनका विकास भौतिकीय विज्ञान–शिक्षा द्वारा ही संभव है। इसके अतिरिक्त भौतिकीय विज्ञान अध्ययन में जिन रुचियों का विकास होता है, उन्हें व्यवसाय के रूप में अपना कर व्यक्ति स्वरोजगार की ओर उन्मुख हो सकता है। इस प्रकार भौतिकीय विज्ञान का व्यावसायिक महत्व है।

3.5.8 नैतिक मूल्य

नैतिक मूल्यों से अभिप्राय उन गुणों एवं सिद्धांतों से है जो व्यक्ति में मानवीयता का समावेश करें जिससे उसके चरित्र का निर्माण होता है। इनमें ईमानदारी, सत्यता, नैतिक स्थिरता, आत्म नियन्त्रण, आत्म निष्ठा, कर्मशीलता, करुणा, सहानुभूति, दया, पवित्रता, सादा जीवन–उच्च विचार, विनम्रता, आत्म–संयम, अच्छा आचरण आदि सम्मिलित हैं। भौतिकीय विज्ञान अंधविश्वासों एवं रूढ़ियों को दूर करता है और सत्य एवं तर्क की शिक्षा पर बल देता है। भौतिकीय विज्ञान में व्यक्तिगत मान्यताओं के लिए कोई स्थान नहीं होता। एक वैज्ञानिक तटस्थ भाव से सत्य का समर्थन करता है। वह निष्ठावान, कर्मशील एवं ईमानदार होता है। वह निरीक्षण एवं परीक्षण में सत्यता का निश्चय करके अपने कर्त्तव्य का पालन करता है। वह धोखाधड़ी, असत्य तथा अन्य बुराइयों से दूर रहता है। इस प्रकार भौतिकीय विज्ञान एवं भौतिकीय विज्ञान शिक्षा व्यक्ति में नैतिकता की भावना के विकास में सहायता करते हैं।

3.6 लक्ष्य एवं उद्देश्य

लक्ष्य (Aim or Goal) एक ऐसा शब्द है जिसमें विशिष्टता की कमी हेती है। शैक्षिक लक्ष्यों से अभिप्राय व्यापक लक्ष्यों से है जो शिक्षा द्वारा प्राप्त किए जाते हैं। कई बार ये उच्च आदर्शों का रूप धारण कर लेते हैं। ये राष्ट्र एवं समाज की आवश्यकताओं के अनुसार बदलते रहते हैं। इनका क्षेत्र असीमित होता है। जैसे–अज्ञानता का उन्मूलन, मोक्ष की प्राप्ति आदि। लक्ष्य प्रायः अस्पष्ट एवं अनिश्चित होते हैं इसलिए ये शिक्षण कार्य में शिक्षक को विशेष सहायता नहीं प्रदान करते और शिक्षक अपनी क्रियाओं को स्पष्ट रूप से निर्धारित नहीं कर पाता। वह अपनी शिक्षण विधियों और युक्तियों के बारे में असमंजस में रहता है। वर्तमान कक्षीय स्थितियों एवं शैक्षिक संरचना में शैक्षिक लक्ष्यों को प्राप्त करना लगभग असंभव प्रतीत होता है।

उद्देश्य से अभिप्राय उस बिन्दु अथवा अन्त से है जिसके लिए कोई कार्य किया जाता है। यह एक नियोजित परिवर्तन है जो उस क्रिया द्वारा लाया जाता है जिसे हम करने जा रहे हैं। शैक्षिक उद्देश्यों का सम्बन्ध उस पाठ्य वस्तु तथा मानसिक प्रक्रिया से है जो हम शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों में विकसित करना चाहते हैं। उद्देश्य निश्चित एवं विशिष्ट होते हैं। उद्देश्यों का क्षेत्रा सीमित होता है। ये संकुचित, सरल एवं स्पष्ट होते हैं और इन्हें एक निश्चित समय में प्राप्त किया जा सकता है। ये शिक्षक को व्यूह–रचनाओं और युक्तियों के चयन में दिशा प्रदान करते हैं तथा उसके कार्य में निश्चितता की स्थिति लाने में सहायक होते हैं। उद्देश्य लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए आधार के रूप में कार्य करते हैं। शिक्षण के लक्ष्य एवं उद्देश्य समाज एवं राष्ट्र की आवश्यकताओं के अनुरूप बदलते रहते हैं।

	लक्ष्य (Aims)	**उद्देश्य (Objectives)**
1	किसी उद्देश्य की ओर उन्मुख होना ही लक्ष्य है।	वे साध्य है जिनकी ओर कार्य निर्धारित होते है।
2	इनकी दृष्टि दार्शनिक होती है।	इनकी प्रकृति मनोवैज्ञानिक होती है।
3	इनका केन्द्र सम्पूर्ण समाज है।	इनका केन्द्र बालक है।

4	लक्ष्य व्यापक होते है क्योंकि ये सम्पूर्ण शिक्षा से सम्बन्धित होते है।	उद्देश्य सीमित होने के कारण कक्षा–कक्ष शिक्षण तक ही सीमित होते है।
5	इन्हे प्राप्त करने में बहुत समय लगता है।	इन्हे निश्चित अवधि एक कालांश में भी प्राप्त किया जा सकता है।
6	इनका मापन व मूल्यांकन कठिन है।	मापन व मूल्यांकन दोनो सरल है।
7	इनकी निर्धारित विधि या पाठ्यचर्या नहीं है।	इनमें पाठ्यचर्या व विधियां निश्चित होती है।
8	सैद्धान्तिक तथा अप्रत्यक्ष होते है।	कार्यात्मक तथा प्रत्यक्ष होते है।
9	सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था से सम्बन्धित होते है।	कक्षा–कक्ष से सम्बन्धित होते है।
10	सामान्य व व्यक्तिनिष्ठ होते है।	विशिष्ट तथा वस्तुनिष्ठ होते है।

3.7 कोठारी कमीशन एवं भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य

कोठारी कमीशन (1964-66) के अनुसार भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

3.7.1 प्राथमिक स्कूल स्तर

प्राथमिक स्कूलों में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का उद्देश्य भौतिक और जैविक पर्यावरण के मुख्य तथ्यों, अवधारणाओं, सिद्धान्तों और प्रक्रियाओं के बारे में उचित ज्ञान प्राप्त करना, होना चाहिए। इन विचारों को स्पष्ट करने के लिए आगमन और निगमन दोनों पद्धतियों का उपयोग करना चाहिए। लेकिन निगमन या वैज्ञानिक पद्धति के उपयोग पर अधिक बल देना चाहिए।

1. बालक को परिवेश से परिचित कराना तथा उसमें प्रकृति के प्रति प्रेम उत्पन्न करना।
2. भौतिक और सामाजिक परिवेश में भौतिकीय विज्ञान के उपयोगों का परिचय देना।
3. बालक में शारीरिक स्वच्छता तथा स्वस्थ जीवनयापन सम्बन्धी उपयोगी आदतें डालना।
4. बालक की निरीक्षण शक्ति (Observation Power) को विकसित करना।
5. बालकों की अन्वेषणात्मक और रचनात्मक प्रवृत्तियों के विकास के लिए अवसर प्रदान करना।
6. वैज्ञानिक भाषा को समझने के लिए रोमन संख्यांक (Numerals) और वर्णमाला (Alphabets) का ज्ञान कराना।
7. व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित महत्वपूर्ण बातों की जानकारी देना।

8. बालकों में स्वच्छ एवं क्रमबद्ध रीति से कार्य करने की आदत डालना।
9. मानचित्र, चार्टों, लेखाचित्र (Graphs) तथा सांख्यिकी तालिकाओं (Statistical tables) आदि को पढ़ने की कुशलता उत्पन्न करना।
10. बालकों को भौतिकीय विज्ञान के महान आविष्कारकों की जीवनगाथा और आविष्कारों की कहानी पढ़ने के लिए प्रेरित करना।

3.7.2 उच्च प्राथमिक स्तर

पांचवीं से लेकर सातवीं कक्षा तक भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिए।

1. छात्रों को अपने परिवेश में व्याप्त भौतिकीय विज्ञान के प्रभाव को समझने में सहायता करना और उनमें वैज्ञानिक अभिरुचि को विकसित करना।
2. छात्रों को भौतिकीय विज्ञान सम्बन्धी मूलभूत तथ्यों, नियमों और सिद्धान्तों का ज्ञान कराना।
3. विद्यार्थियों में तर्कपूर्ण और सुनियोजित ढंग से सोचने की आदत डालना।
4. विद्यार्थियों में वैज्ञानिक अभिवृत्ति (Attitude) का विकास करना।
5. भौतिकीय विज्ञान के अध्ययन द्वारा विद्यार्थियों के मस्तिष्क को अनुशासित (Disciplined) करने की अपेक्षा रखना।
6. छात्रों में प्रस्तुत तथ्यों के आधार पर उचित निष्कर्ष निकालने की योग्यता और आदत विकसित करना।
7. छात्रों को आगामी कक्षाओं में भौतिकीय विज्ञान के अध्ययन के लिये आवश्यक पृष्ठभूमि प्रदान करना।
8. छात्रों को भौतिकीय विज्ञान के विकास के ऐतिहासिक क्रम से परिचित कराकर भौतिकीय विज्ञान की प्रगति और विकास को समझने में मदद करना।

3.7.3 निम्न माध्यमिक स्तर

आठवीं कक्षा से दसवीं कक्षा तक भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिए–

1. विद्यार्थियों को विषय के (पिछली कक्षाओं से अधिक) गहन एवं सूक्ष्म ज्ञान की जानकारी देना।
2. उनमें प्रयोग सम्बन्धी कुशलता उत्पन्न कर भौतिकीय विज्ञान के उपयोगों को समझने की योग्यता विकसित करना।
3. विद्यार्थियों की अन्वेषणात्मक एचं रचनात्मक शक्तियों को पनपने के उचित अवसर प्रदान करना।
4. विद्यार्थियों को भौतिकीय विज्ञान के विशेष उच्च पाठ्यचर्या को पढ़ने के लिये आधार प्रदान करना।

5. विद्यार्थियों को दैनिक जीवन में आवश्यक सभी प्रकार के वैज्ञानिक ज्ञान एवं कौशल से युक्त करना।

6. भौतिकीय विज्ञान की रोचक क्रियाओं को रुचिकर क्रियाओं (Hobbies) के रूप में अपनाने की आदत डालना।

7. छात्रों में भौतिकीय विज्ञान के योगदान के प्रति अपूर्व आस्था उत्पन्न करना।

बोध प्रश्न

प्रश्न 16: उद्देश्य किसे कहते है?

....

....

प्रश्न 17: सर्वप्रथम किस आयोग ने भौतिक विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य निर्धारित किये?

....

....

प्रश्न 18: बालक में निरीक्षण शक्ति विकसित करना किस स्तर का उद्देश्य है?

....

....

3.7.4 उच्च माध्यमिक स्तर

11वीं और 12वीं कक्षा में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिएं–

1. भौतिकीय विज्ञान के ज्ञान के विशेष पक्षों (Specializations) में प्रवीणता अर्जित करना।

2. विद्यार्थियों को अपने–अपने विशेष विषयों (Specializations) की नवीन धारणाओं और विचारों से परिचित कराते रहना।

3. भौतिकीय विज्ञान की पढ़ाई द्वारा विद्यार्थियों को किसी विशेष व्यवसाय अथवा उससे सम्बन्धित पाठ्यचर्या के अध्ययन के लिये तैयार करना।

4. विद्यार्थियों को अपने चुने हुये भौतिकीय विज्ञान के विशेष विषयों का स्वतन्त्र रूप से अध्ययन और मनन करने के लिए प्रेरित करना।

5. संदर्भ ग्रन्थों तथा विशेषज्ञ पत्रिकाओं आदि का अध्ययन कर नवीनतम वैज्ञानिक खोजों को समझने और स्वयं कुछ ऐसा कर सकने की प्रेरणा और अवसर प्रदान करना।

3.8 वर्तमान संदर्भ में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य

पिछले कुछ दशकों में हुई वैज्ञानिक उन्नति एवं शैक्षिक तकनीकी के विकास से भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्यों में लगातार परिवर्तन आता रहा है। आधुनिक समय में हमारे विद्यालयों में भौतिकीय विज्ञान–शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिए।

3.8.1 ज्ञान सम्बंधी उद्देश्य

ज्ञान किसी भी विषय की शिक्षा का प्रथम एवं आधारभूत उद्देश्य होता है। भौतिकीय विज्ञान के क्षेत्र में भी ज्ञान–प्राप्ति का उचित महत्व है क्योंकि ज्ञान के आधार पर ही ज्ञानात्मक पक्ष से संबंधित उच्चतर उद्देश्यों जैसे–समझ, प्रयोग, संश्लेषण, विश्लेषण तथा मूल्यांकन की प्राप्ति की जा सकती है। ज्ञान उद्देश्य में निम्नलिखित बिन्दु सम्मिलित होते हैं–

1. वैज्ञानिक नामावली (Scientific terms), शब्द संकेत (Symbols) सूत्रों (Formulae) आदि की जानकारी प्राप्त करके वैज्ञानिक भाषा को सीखना।
2. भौतिक–विज्ञान सम्बन्धी परिभाषाओं, नियमों, तथ्यों, संप्रत्ययों और प्रक्रियाओं को पहचानना।
3. अपने आसपास के परिवेश से सम्बन्धित आवश्यक वैज्ञानिक जानकारी होना।
4. प्रकृति के रहस्यों एवं प्राकृतिक घटनाओं की जानकारी होना।
5. वैज्ञानिक साहित्य से सम्बन्धित मूलभूत तथ्यों की जानकारी होना।
6. व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक शाखाओं के परस्पर संबंध की जानकारी होना।
7. व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य से संबंधित ज्ञान होना।
8. वैज्ञानिक उन्नति तथा समाज पर इसके प्रभाव से अवगत होना।
9. भौतिक विज्ञान संबंधी परिभाषाओं, तथ्यों, संप्रत्ययों, नियमों और प्रक्रियाओं का प्रत्यास्मरण करना।

3.8.2 वैज्ञानिक दृष्टिकोण सम्बंधी उद्देश्य

वैज्ञानिक दृष्टिकोण में उदार–मनोवृत्ति (Open Mindedness), शुद्ध ज्ञान की इच्छा, वैज्ञानिक प्रक्रिया में विश्वास आदि गुण सम्मिलित हैं। विद्यार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास से अभिप्राय विद्यार्थियों में निम्नलिखित योग्याताओं के विकास से है–

1. प्रमाणिक ज्ञान से समस्या का समाधान करना।
2. प्रमाणिक तथ्यों एवं प्रमाणों के आधार पर निर्णय लेना।
3. अन्धविश्वासों की अपेक्षा परिणाम की सत्यता को परखने की इच्छा रखना।
4. प्रत्येक घटना के कारण को जानने की इच्छा रखना।
5. अपने निर्णयों पर फिर से विचार करने को तैयार रहना।

6. नए विचारों का स्वागत करना–उदार मनोवृत्ति।

7. किसी भी सुनी व पढ़ी हुई बात को परीक्षण तथा प्रयोग की कसौटी पर जांचने के बाद मानना।

8. वैज्ञानिक सामग्री के संकलन में ईमानदारी से काम लेना।

9. प्रत्येक कार्य को धैर्यपूर्वक करना।

10. मानव कल्याण के लिए वैज्ञानिक प्रयोगों का समर्थन करना।

3.8.3 रूचि सम्बंधी उद्देश्य

आज भौतिकीय विज्ञान हमारे जीवन एवं परिवेश का एक अभिन्न अंग है। भौतिकीय विज्ञान शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों में उनके परिवेश के प्रति रुचि जागृत की जा सकती है जिससे उनमें जिज्ञासु एवं रचनात्मक प्रवृत्तियां विकसित हो सकें।

1. विद्यार्थियों में वैज्ञानिक साहित्य के अध्ययन में रुचि उत्पन्न करना।

2. दैनिक जीवन में उपयोगी वस्तुओं जैसे–साबुन, डिटर्जेंट पाउडर, मंजन, स्याही आदि के निर्माण में रुचि लेना।

3. वैज्ञानिक महत्व के स्थानों के भ्रमण में रुचि रखना।

4. वैज्ञानिक खिलौनों, मॉडल, स्वयं–निर्मित उपकरणों आदि के निर्माण में रुचि लेना।

5. भौतिकीय विज्ञान क्लब तथा भौतिकीय विज्ञान मेलों में सक्रियता से भाग लेना।

6. वैज्ञानिक रूचियां (Scientific Hobbies) अपनाना।

7. भौतिकीय विज्ञान से सम्बन्धित तर्क–प्रतियोगिताओं (Debates), वाक् प्रतियोगिताओं, सेमिनार आदि में भाग लेना।

8. भौतिकीय विज्ञान–प्रायोजन पर कार्य करना।

3.8.4 प्रशांसात्मक सम्बंधी उद्देश्य

भौतिकीय विज्ञान के इतिहास, आधुनिक आविष्कार, वैज्ञानिकों के जीवन चरित्र एवं कार्यों आदि की शिक्षा द्वारा विद्यार्थियों में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के प्रति प्रशंसात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न किया जा सकता है। इससे विद्यार्थियों में निम्नलिखित योग्यताओं का विकास किया जा सकता है।

1. मानव सभ्यता के विकास में भौतिक भौतिकीय विज्ञान की देन की सराहना करना।

2. भौतिक भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति पर विजय पाने के साधन के रूप में प्रशंसा करना।

3. आधुनिक जीवन में भौतिकीय विज्ञान के प्रभावों की सराहना करना।

4. वैज्ञानिक आविष्कारों की कहानियों को पढ़कर प्रेरणा प्राप्त करना।

5. महान वैज्ञानिकों के प्रति आदर एवं सम्मान की भावना प्रदर्शित करना।

6. अपने परिवेश में होने वाली प्रक्रियाओं में निहित वैज्ञानिक नियमों, सिद्धान्तों आदि को जानने में आनन्द अनुभव करना।

3.8.5 समझ सम्बंधी उद्देश्य

किसी विषय का ज्ञान समझ में तब परिवर्तित होता है जब उसे सही परिपेक्ष्य में पढ़ाया जाता है। भौतिकीय विज्ञान के समझ उद्देश्य विद्यार्थियों में निम्नलिखित योग्यताएं विकसित करने से संबंधित होते हैं–

1. भौतिकीय विज्ञान के संप्रत्ययों/नियमों/प्रक्रियाओं आदि की दृष्टान्त सहित व्याख्या करना।
2. प्रतीकों, फार्मूलों का शब्द संकेतों में अनुवाद करना।
3. भौतिकीय विज्ञान के तथ्यों और सिद्धान्तों में भेद करना।
4. चार्ट, ग्राफ, आरेख एवं आंकड़ों की व्याख्या करना।
5. भौतिकीय विज्ञान से सम्बन्धित संप्रत्ययों, पदार्थों आदि का वर्गीकरण करना।
6. भौतिकीय विज्ञान के विभिन्न तथ्यों, संप्रत्ययों, सिद्धान्तों, प्रक्रियाओं आदि के सम्बन्ध को पहचानना।
7. भौतिकीय विज्ञान के नियमों, सिद्धान्तों आदि की पुष्टि करना।

3.8.6 प्रयोग सम्बंधी उद्देश्य

प्रयोग स्तर के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए ज्ञान एवं समझ उद्देश्य आधार के रूप में कार्य करते हैं। इसके अन्तर्गत विद्यार्थी का अपने ज्ञान एवं समझ का उपयोग अपने दैनिक जीवन में, नई एवं अपरिचित परिस्थितियों में कर पाना सम्मिलित होता है।

1. स्थिति का विश्लेषण करना।
2. परिकल्पना का निर्माण एवं परीक्षण करना।
3. भौतिकीय विज्ञान की प्रक्रियाओं, सिद्धान्तों आदि के कारण एवं प्रभाव में सम्बन्ध स्थापित करना।
4. भौतिकीय विज्ञान के सिद्धान्तों का अपने परिवेश को समझने और समस्याओं के समाधान में उपयोग करना।
5. किसी तथ्य अथवा प्रक्रिया के निरीक्षण के आधार पर निष्कर्ष निकालना।
6. दिये गए प्रदत्तों (data) के आधार पर वैज्ञानिक प्रक्रिया का अनुमान लगाना।

3.9 सारांश

पाठ्यचर्या के अंतर्गत समस्त विद्यालयी वातावरण आता है, जिसके अंतर्गत विद्यालय में प्राप्त सभी प्रकार के सम्पर्क, पाठन क्रिया कलाप एवं विषय सम्मिलित होते है।

आज विद्यालयों में भौतिकीय विज्ञान से सम्बन्धित उपविषयों को अलग–अलग बांटकर पढ़ाने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। उच्च माध्यमिक स्तर पर भौतिकीय विज्ञान एवं जीव विज्ञान को अनिवार्य विषय के रूप में एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर पर वैकल्पिक विषय के रूप में पढ़ाया जा रहा है। इस प्रकार पाठ्यचर्या में भौतिकीय विज्ञान को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का अनन्य महत्व है। भौतिकीय विज्ञान के अध्ययन से छात्रों में बौद्धिक मूल्य, सांस्कृतिक मूल्य, सौन्दर्यात्मक मूल्य, मनोवैज्ञानिक मूल्य, सामाजिक मूल्य, व्यावहारिक मूल्य, व्यावसायिक मूल्य और नैतिक मूल्यों का विकास होता है। किसी उद्देश्य की ओर उन्मुख होना ही लक्ष्य है जबकि उद्देश्य साध्य है जिनकी ओर कार्य निर्धारित होते है। प्रस्तुत अध्याय में कोठारी कमीशन एवं भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य, प्राथमिक स्कूल स्तर, उच्च प्राथमिक स्तर, निम्न माध्यमिक स्तर, उच्च माध्यमिक स्तर, वर्तमान संदर्भ में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य, ज्ञान सम्बन्धी उद्देश्य, वैज्ञानिक दृष्टिकोण सम्बन्धी उद्देश्य, रुचि सम्बन्धी उद्देश्य, प्रशंसात्मक सम्बन्धी उद्देश्य, समझ सम्बन्धी उद्देश्य और प्रयोग सम्बन्धी उद्देश्य के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

3.10 अभ्यास प्रश्न

1. पाठ्यचर्या का अर्थ को स्पष्ट कीजिए?
2. पाठ्यचर्या को परिभाषित कीजिए?
3. भौतिकीय विज्ञान का पाठ्यचर्या में स्थान के महत्व को निर्धारित कीजिए?
4. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का महत्व का विस्तार से वर्णन कीजिए?
5. लक्ष्य एवं उद्देश्य में अंतर स्पष्ट कीजिए?
6. वर्तमान संदर्भ में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के उद्देश्यों का विस्तार से वर्णन कीजिए?

3.11 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान का पाठ्यचर्या में स्थान के महत्व पर चर्चा करेगें।
2. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का महत्व पर चर्चा करेगें।
3. छात्राध्यापक आपस में लक्ष्य एवं उद्देश्य पर चर्चा करेगें।

3.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. द्रव्य, ऊर्जा तथा उनकी अन्योन्य क्रियाओं के वैज्ञानिक अध्ययन को भौतिकीय विज्ञान कहते हैं।
2. न्यूटन और आइंस्टाइन को भौतिकीय विज्ञान का जनक माना जाता है।
3. भौतिकीय विज्ञान का मुख्य सिद्धांत ''उर्जा संरक्षण का नियम'' है। इसके अनुसार किसी भी द्रव्य समुदाय की ऊर्जा की मात्रा स्थिर होती है। समुदाय की आंतरिक क्रियाओं द्वारा इस मात्रा को घटाना या बढ़ाना संभव नहीं।

4. भारतवर्ष में प्राचीन समय से ही भौतिकीय विज्ञान शिक्षण की व्यवस्था मिलती है। नागार्जुन, आर्यभट्ट, सुश्रुत, धनवन्तरी तथा वराह मिहिर क्रमशः रसायन विज्ञान, ज्योतिष विज्ञान, आयुर्वेद, चिकित्सा विज्ञान एवं ज्योतिष विज्ञान के क्षेत्र में अत्यन्त प्रसिद्ध वैज्ञानिक हुए हैं।

5. सन् 1964 में 'वैज्ञानिक प्रतिभा की खोज' (Science Talent Search) कार्यक्रम का प्रारम्भ 'शैक्षणिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण की राष्ट्रीय परिषद्' द्वारा किया गया।

6. पुस्तक अगेन्स्ट मेथड भौतिक विज्ञान से सम्बंधित है और इसके लेखक का नाम फेयराबेन्ड है।

7. अधिगम अभ्यास या अनुभति के परिणामस्वरूप व्यवहार में होने वाले अपेक्षाकृत स्थायी परिवर्तन कहा जाता है।

8. अधिगम को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों में शिक्षार्थी, शिक्षक, पाठ्यवस्तु, अधिगम, व्यवस्था, वातावरण इत्यादि से सम्बन्धित अनेक कारक अधिगम की मात्रा स्वरूप एवं गति के निर्धारक के रूप में उत्तरदायी होते है।

9. अधिगम को प्रभावित करने वाले शिक्षार्थी से सम्बन्धित कारकों में बालक, सीखने की इच्छा, शैक्षिक पृष्ठभूमि, शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य, परिपक्वता, अभिप्रेरणा, सीखने वाले की अभिवृत्ति, सीखने का समय तथा अवधि, बुद्धि, अधिगम प्रक्रिया इत्यादि कारक निर्धारक के रूप में उत्तरदायी होते है।

10. शिक्षक शिक्षण कार्य करता है और छात्र सीखते हैं।

11. ज्ञान के अध्ययन को ज्ञान–मीमांसा कहा जाता है।

12. निर्मितवाद अधिगम का दर्शन है। यह ज्ञान मीमांसा भी है जिसमें विषय–वस्तु की प्रकृति का अध्ययन किया जाता है।

13. पाठ्यचर्या का अंग्रेजी पर्यावाची शब्द 'केरीकुलम' (Curriculum) है। केरीकुलम शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा से हुई है जिसका अर्थ है दौड़ का मैदान। पाठ्यचर्या का वह क्षेत्र मैदान है जिसका चक्कर लगाकर व्यक्ति अपने लक्ष्य को प्राप्त करता है।

14. एन.सी.एफ.–2005 में दिए गए वर्णन के अनुसार, वैज्ञानिक पद्धति आपस में सम्बन्धित कई गतिविधियों को मिलाकर बनती है।

15. बालक के बुनियादी क्षमताओं जैसे निरीक्षण करना, वर्गीकरण करना और निष्कर्ष निकालना आदि के साथ–साथ उसमें अपने हाथ जैसे अंगों से काम लेने के कौशल है।

16. उद्देश्य निश्चित एवं विशिष्ट होते हैं। उद्देश्यों का क्षेत्र सीमित होता है। ये संकुचित, सरल एवं स्पष्ट होते हैं और इन्हें एक निश्चित समय में प्राप्त किया जा सकता है।

17. कोठारी कमीशन (1964-66)।

18. प्राथमिक स्कूल स्तर पर।

संदर्भ ग्रंथ

- **एन.सी.ई.आर.टी. (2005).** *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2005, पाठ्यक्रम व पाठ्यपुस्तक का आधार पत्र,* एन.सी.ई.आर.टी.,नई दिल्ली।
- **एन.सी.ई.आर.टी. (2005).** *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण संस्थान परिषद्,* नई दिल्ली।
- **एन.सी.ई.आर.टी. (2012).** *सोर्सबुक ऑन एसेसमेंट फॉर क्लासेस 6–8 साइंस,* नई दिल्लीः सी.बी.एस.ई.।
- **एन.सी.ई.आर.टी. (2013).** *पेडागॉजी ऑफ साइंस टेक्स्ट बुक फॉर बी.एड. पार्ट–2,* नई दिल्लीः सी.बी.एस.ई.।
- **कोहली, वि.के. (2009).** *विज्ञान कैसे पढ़ाएं,* विवेक पब्लिशर्ज, अम्बाला।
- **कुमार, दीपक, (2016).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* ओसीन पब्लिकेशन वाराणसी।
- **भौतिक विज्ञान का शिक्षणशास्त्र (2011).** शिक्षक–शिक्षा विभाग, शिक्षा विद्या शाखा, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी।
- **पाठक, पी.डी. (2015).** *शिक्षा, समाज, पाठ्यचर्या और शिक्षार्थी,* श्री विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
- **पाल, हंसराज एवं पाल, राजेन्द्र (2006).** *पाठ्यचर्याः कल, आज और कल,* क्षिप्रा पब्लिकेशन, दिल्ली।
- **श्रीवास्तव, पी.सी. (2018).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
- **शर्मा, आर. ए. (2005).** *पाठ्यचर्या विकास,* इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ
- **शर्मा, आर.ए. (2008).** *शिक्षण अधिगम के मूल तत्व,* लायल बुक डिपो, मेरठ।
- **सी.बी.एस.ई. (2010).** *फॉरमेटिव एसेसमेंट मैनुअल फॉर टीचर्स क्लास –10 (साइंस),* नई दिल्लीः सी.बी.एस.ई.।
- **सी.बी.एस.ई. (2016).** *रिवाइज्ड फॉरमेटिव एसेसमेंट मैनुअल फॉर टीचर्स क्लास –9 (साइंस),* नई दिल्लीः सी.बी.एस.ई.।
- **सुन्द्रियाल, सुनीता (2019).** *टीचिंग ऑफ फिजिकल साइंस,* अग्रवाल पब्लिकेशन, कानपुर।
- **सूद, जे.के. (2017).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* अग्रवाल पब्लिकेशन, कानपुर।
- **नेगी, जे.एस. (2020).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* श्री विनोद पुस्तक मंदिर, वाराणसी।
- **आहूजा, राम (2004).** *सामाजिक अनुसंधान,* रावत पब्लिकशन, जयपुर।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

B.Ed.-E-42/B.Ed-SE-42

भौतिकीय विज्ञान का अध्यापन विज्ञान

खण्ड – 2

भौतिकीय विज्ञान की शिक्षण रणनीतियाँ–I

इकाई – 4 **55**

भौतिकीय विज्ञान शिक्षण की अवधारणा

इकाई – 5 **63**

प्रदर्शन विधि एवं खोज विधि द्वारा अधिगम

इकाई – 6 **71**

भौतिकीय विज्ञान अधिगम में समूह अधिगम, समूह कार्य, सहकारी एवं सहयोगी रणनीतियाँ

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रोफेसर सीमा सिंह	उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज कुलपति

विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर पी० के० स्टालिन	निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर छत्रसाल सिंह	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर के० एस० मिश्रा	पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर धनन्जय यादव	विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर मीनाक्षी सिंह	आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ० जी० के० द्विवेदी	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ० दिलीप कुमार सिंह	सहायक आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, सी0एम0पी0डिग्री कॉलेज, प्रयागराज (इकाई 1,2,3,4,5,6,7,8,9,10,11,12,13,14,15)

सम्पादक

प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परिमापक

प्रोफेसर नागेन्द्र कुमार	आचार्य, शिक्षा संकाय, बी0एच0यू0 वाराणसी

समन्वयक

डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक

कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

ISBN: 978-81-963573-2-0

Registrar, U. P. Rajarshi Tandon Open University, Prayagraj

©UPRTOU, 2023. Pedagogy of Biological Science is made available under a Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0

http://creativecommons.org/licences/by-sa/4.0

खण्ड परिचय

भौतिकीय विज्ञान की शिक्षण रणनीतिया–I

प्रस्तुत खण्ड में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण हेतु संव्यूहन की चर्चा करेगें। प्रस्तुत खण्ड में भौतकीय विज्ञान शिक्षण की अवधारणा, प्रदर्शन विधि एवं खोज विधि द्वारा अधिगम, भौतकीय विज्ञान में समूह अधिगम, समूह कार्य एवं सहयोगी अधिगम विधियों का विवेचन करेंगे। भौतिकीय विज्ञान शिक्षण हेतु संव्यूहन की चर्चा तीन इकाईयों में विभाजित कर करेंगे, जिनका विवरण इस प्रकार है–

इकाई–4 : प्रस्तुत इकाई में भौतकीय विज्ञान शिक्षण की अवधारणा के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण की अवधारणा, शिक्षण का क्षेत्र एवं प्रकृति, शिक्षण की विशेषताएँ, शिक्षण की आवश्यकता एवं महत्त्व, शिक्षण को प्रभावित करने वाले कारक, शिक्षा का उद्देश्य, व्यक्तिगत भिन्नताएँ, छात्रों का मनोशारीरिक स्तर, विषय वस्तु का स्वरूप व स्तर, कक्षा का वातावरण, शिक्षण क्रिया का नियोजन, शिक्षण की विशिष्टताएँ एवं योग्यताएँ, भौतिक सुविधाओं की उपलब्धता, बाल केन्द्रित शिक्षण–प्रविधि और मूल्यांकन प्रतिफल के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई–5 : प्रस्तुत इकाई में प्रदर्शन विधि एवं खोज विधि द्वारा अधिगम के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में प्रदर्शन विधि द्वारा अधिगम, प्रदर्शन शिक्षण विधि का क्रियान्वयन, प्रदर्शन शिक्षण विधि के दोष, खोज विधि द्वारा अधिगम, खोज विधि अथवा अन्वेषण विधि का अर्थ, खोज विधि का प्रबन्धन, खोज विधि से सीखने के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ, खोज विधि के लाभ और खोज विधि की सीमाएँ के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई–6 : प्रस्तुत इकाई में भौतिकीय विज्ञान में समूह अधिगम, समूह कार्य एवं सहयोगी अधिगम विधियाँ के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में भौतकीय विज्ञान में समूह अधिगम, समूह/सामूहिक चर्चा प्रविधि की विशेषताएँ, समूह/सामूहिक चर्चा प्रविधि के उद्देश्य, समूह/सामूहिक चर्चा प्रविधि की प्रक्रिया, समूह/सामूहिक चर्चा प्रविधि के समय ध्यान देने योग्य बातें, दल शिक्षण, दल शिक्षण की विशेषताएँ, दल शिक्षण के लाभ, दल शिक्षण की सीमाएँ, भौतिकीय विज्ञान में सहयोगी अधिगम विधियाँ, जिग्सॉ, सोचिए, जोड़े–बनाइए, साझा कीजिए (थिंक, पेयर, शेयर), तीन चरण साक्षात्कार, राउंड रोबिन, तीन–मिनट में पुनरीक्षण' संख्यांकित सिर एक साथ, टोली–जोड़ा–एकल (टीम पेयर सोलो), ज्ञानी को घेरों (सर्किल द सेज), सहभागी शिक्षण, सहभागी/सह–शिक्षण के

उद्देश्य, प्रभावी सहभागी/सह–शिक्षण के तरीके, सहभागी/सह–शिक्षण के लाभ और सहभागी/सह–शिक्षण की सीमाएँ के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई–4 भौतिकीय विज्ञान शिक्षण की अवधारणा

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 भौतिकीय विज्ञान शिक्षण की अवधारणा

4.4 शिक्षण का क्षेत्र एवं प्रकृति

4.5 शिक्षण की विशेषताएँ

4.6 शिक्षण की आवश्यकता करने वाला कारक

4.7 शिक्षण को प्रभावित करने वाले कारक

4.7.1 शिक्षा का उद्देश्य

4.7.2 व्यक्तिगत भिन्नताएँ

4.7.3 छात्रों का मनोशारीरिक स्तर

4.7.4 विषय वस्तु का स्वरूप व स्तर

4.7.5 कक्षा का वातावरण

4.7.6 शिक्षण क्रिया का नियोजन

4.7.7 शिक्षण की विशिष्टताएँ

4.7.8 भौतिक सुविधाओं की उपलब्धता

4.7.9 बाल केन्द्रिता एवं शिक्षण–प्रविधि

4.7.10 मूल्यांकन प्रतिपफल

4.8 सारांश

4.9 अभ्यास प्रश्न

4.10 चर्चा के बिन्दु

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में हम भौतिकीय विज्ञान शिक्षण की अवधारणा, शिक्षण का क्षेत्र एवं प्रकृति, शिक्षण की विशेषताएँ, शिक्षण की आवश्यकता एवं महत्त्व, शिक्षण को प्रभावित करने वाले कारक शिक्षा का उद्देश्य, व्यक्तिगत भिन्नताएँ, छात्रों का मनोशारीरिक स्तर, विषय वस्तु का स्वरूप व स्तर, कक्षा का वातावरण, शिक्षण क्रिया का नियोजन शिक्षण की विशिष्टताएँ एवं योग्यताएँ, भौतिक सुविधाओं की उपलब्धता, बाल केन्द्रित शिक्षण–प्रविधि और मूल्यांकन प्रतिफल के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको भौतकीय विज्ञान शिक्षण की अवधारणा को समझने में सुविधा होगी।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेगें कि–

- भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का अर्थ जान सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान शिक्षण को परिभाषित कर सकेंगे।
- शिक्षण का क्षेत्र एवं प्रकृति का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
- शिक्षण की विशेषताएँ का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
- शिक्षण की आवश्यकता एवं महत्त्व को निर्धारित कर सकेंगे।
- शिक्षण को प्रभावित करने वाले कारक का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।

4.3 भौतिकीय विज्ञान शिक्षण की अवधारणा

शिक्षण एक द्वि–मार्गीय प्रक्रिया है जिसके द्वारा विचारों का आदान–प्रदान होता है। शिक्षण का अर्थ है पढ़ाना, शिक्षा देना, ज्ञान देना। यह शिक्षक–शिक्षार्थी की उपस्थिति में सम्पन्न होने वाली अन्तः क्रिया है एवं इस अन्तः क्रिया का माध्यम पाठ्यवस्तु होती है। इस प्रक्रिया में शिक्षक–शिक्षार्थी को निर्धारित विषयों में पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति हेतु ज्ञान एवं कुशलता प्रदान करता है। शिक्षक एवं शिक्षार्थी की सफलता का मूल्यांकन इस तथ्य पर निर्भर करता है कि पाठ्यवस्तु के विषय में शिक्षक द्वार पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देने में शिक्षार्थी कितने योग्य हैं। शिक्षणशास्त्र (Pedagogy) शिक्षण के अध्ययन की कला है। शिक्षण कार्य वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक शिक्षक अपने छात्रों को ज्ञान एवं कौशल प्रदान करता है। ज्ञान एवं कौशल को प्रवाहित करने वाली कार्य प्रक्रिया एवं कला को शिक्षण कहते हैं। शिक्षण की कुछ महत्त्वपूर्ण परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं–

रायबर्न के अनुसार, ''शिक्षा में तीन केन्द्र बिन्दु होते है– शिक्षक, बालक एवं पाठ्यवस्तु। शिक्षण इन तीनों में स्थापित किया जाने वाला सम्बन्ध है।''

बर्टन के अनुसार, ''शिक्षण सीखने के लिए प्रेरणा, पथ प्रदर्शन, पथ निर्देशन एवं प्रोत्साहन है।''

ह्यू एवं डंकन के अनुसार, ''शिक्षण एक ऐसी विशिष्ट व्यावसायिक, विवेकपूर्ण तथा मानवीय क्रिया है जिसमें व्यक्ति सृजनात्मक एवं कल्पनात्मक रूप से स्वयं तथा स्वयं के ज्ञान के उपयोग अधिगम एवं दूसरों के कल्याण के समर्थन हेतु करता है।''

क्लार्क के अनुसार, ''शिक्षण प्रक्रिया बालकों के व्यवहार में परिवर्तन लाने हेतु निर्मित व प्रदर्शित की गई है।''

अतः शिक्षण की प्रक्रिया के उत्तम परिणाम प्राप्त करने के लिए शिक्षक, शिक्षार्थी एवं विषय तीनों पर ही ध्यान देना आवश्यक है। ये तीनों पक्ष एक दूसरे से सम्बन्धित होते हैं। इसलिए एक सफल शिक्षक को शिक्षण करते समय अपने लक्ष्य के साथ–साथ छात्र तथा विषय–वस्तु से अपने सम्बन्धों को भी ध्यान में रखना चाहिए। शिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण कार्य है व्यक्ति को सामाजिक चेतना में भाग लेने के योग्य बनाना। बालक अपने वातावरण के प्रति बुरी प्रतिक्रिया न करके केवल अच्छी प्रतिक्रिया ही करें, यह मात्र शिक्षण द्वारा ही सम्भव है। अच्छी प्रतिक्रिया करके ही उसका शारीरिक, सामाजिक और आध्यात्मिक विकास हो सकता है।

4.4 शिक्षण का क्षेत्र एवं प्रकृति

वर्तमान में कोई ऐसा क्षेत्र नहीं जहाँ शिक्षा के अभाव में कार्य किया जा सके। इसके आधार पर शिक्षण की प्रकृति निम्नलिखित है–

1. शिक्षण एक सोद्देश्य प्रक्रिया है।
2. शिक्षण एक अन्तः प्रक्रिया है।
3. इसकी प्रकृति कला एवं विज्ञान दोनों में है।
4. शिक्षण एक विकासात्मक प्रक्रिया है।
5. शिक्षण एक सामाजिक व्यावसायिक प्रक्रिया है।
6. शिक्षण निर्देशन की एक प्रक्रिया है।
7. शिक्षण एक त्रिध्रुवीय प्रक्रिया है।
8. शिक्षण में भाषा, सम्प्रेषण का कार्य करती है।
9. शिक्षण मनुष्य को समायोजन के योग्य बनाता है।
10. शिक्षण क्रियाशील बनाता है।

4.5 शिक्षण की विशेषताएँ

शिक्षण की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. शिक्षण वह माध्यम है जिसके द्वारा शिक्षार्थियों को विभिन्न विषयों का ज्ञान प्रदान किया जाता है। शिक्षण के द्वारा विद्यार्थी विभिन्न विषयों को सीखते हैं जिनकी आवश्यकता उनका सर्वांगीण विकास करने में होती है।

2. शिक्षण वह प्रक्रिया है जो संभवतः किसी भी परिवेश में हो सकती एवं इसके द्वारा विभिन्न प्रकार की सूचनाओं का संप्रेषण किया जाता है। यह ज्ञानार्जन का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत होती है।

3. शिक्षण द्वारा छात्रों में कौशल क्षमता का विकास किया जाता है।

4. शिक्षण व्यवहार परिवर्तन की एक प्रक्रिया है। शिक्षण के द्वारा शिक्षक–शिक्षार्थियों को विभिन्न प्राचीन एवं सामयिक सूचनाएँ देता है। शिक्षार्थियों को जैसी सूचनाएँ दी जाती हैं वे वैसा ही व्यवहार करने की ओर प्रेरित होते हैं।

5. शिक्षण का तात्पर्य शिक्षक–शिक्षार्थी तथा पाठ्यचर्या के मध्य एक अच्छा सम्बन्ध स्थापित करना है। शिक्षण, शिक्षक–शिक्षार्थी तथा विषय में सम्बन्ध स्थापित करता है। शिक्षण, शिक्षक एवं शिक्षार्थी के मध्य सामाजिक व जनतांत्रिक सम्बन्धों का निर्माण करता है तथा अन्तःक्रिया द्वारा ज्ञान का आदान–प्रदान करता है।

6. शिक्षण उदेश्यपूर्ण प्रक्रिया है जिसके द्वारा उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की पूर्ति की जा सकती है।

7. शिक्षण एक सामाजिक प्रक्रिया है क्योंकि यह शिक्षक व छात्रों के बीच में ही सम्पादित होती है। उत्तम शिक्षण के द्वारा व्यक्ति व समाज दोनों ही उन्नति करते हैं। उत्तम शिक्षण सहानुभूतिपूर्ण होता है।

8. शिक्षण विद्यार्थी को वातावरण से अनुकूलन करने में सहायता देती है। यह छात्र को संवेगात्मक स्थायित्व देने के साथ–साथ उसे वातावरण से सामंजस्य स्थापित करने के योग्य बनाता है।

9. शिक्षण एक व्यावसायिक प्रक्रिया है। इसको बहुत से व्यक्ति जीविकोपार्जन का साधन मानते हैं। यह छात्र में विभिन्न कौशल विकसित करते हुए उसे व्यवसाय विशेष के लिए निपुण बनाती है।

4.6 शिक्षण की आवश्यकता एवं महत्व

शिक्षण की आवश्यकता एवं महत्त्व को निम्नलिखित बिन्दुओं द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है–

1. शिक्षण एक कौशल युक्त प्रक्रिया है। शिक्षण का तात्पर्य ज्ञान प्रदान करना है।

2. छात्रों के व्यवहारों एवं मनोवृत्तियों में शिक्षण द्वारा परिवर्तन लाया जाता है।

3. वर्तमान तथा भावी जीवन की सफलता के लिए शिक्षण एक महत्त्वपूर्ण साधन के रूप में है।

4. अनुदेशन प्रारूप तैयार करने के लिए शिक्षण वैज्ञानिक आधार प्रदान करता है।

5. शिक्षण बालक का सर्वांगीण विकास करने के साथ–साथ उसे भावी जीवन के लिए तैयार करता है।

6. शिक्षण द्वारा छात्रों की सृजनात्मक शक्ति को विकसित किया जाता है जिसके द्वारा छात्र नवीन ज्ञान की खोज, नवीन चिन्तन तथा नवीन आविष्कार आदि करने के लिए तत्पर हो जाते हैं।

7. छात्रों के ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक पक्षों को विकसित करने में शिक्षण से सहायता मिलती है।

8. शिक्षण द्वारा छात्रों में शिक्षण प्रक्रिया के प्रति उत्सुकता जागृत की जाती है।

9. शिक्षण द्वारा अनुबन्ध, प्रशिक्षण, अनुदेशन तथा प्रतिपादन आदि विकसित किए जाते हैं।

10. शिक्षण द्वारा छात्रों में क्रियाशीलता, संगठन, समता एवं व्यवहारिक गुणों को विकसित किया जाता है।

11. शिक्षण का महत्त्व बालकों को मात्र ज्ञान प्रदान करने के कारण ही नहीं है, बल्कि शिक्षण द्वारा बालकों के संवेगों को प्रशिक्षित करके सामाजिक समायोजन में सहायता प्रदान के कारण भी इसका महत्त्व है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 1: शिक्षण किसे कहते हैं?

....
....
....

प्रश्न 2: शिक्षण कितनी ध्रुवीय प्रक्रिया है?

....
....
....

प्रश्न 3: शिक्षण द्वारा छात्रों में किसका विकास किया जाता है?

....
....
....

4.7 शिक्षण को प्रभावित करने वाले कारक

शिक्षण एक प्रकार की अन्तःक्रिया है जिसका उद्देश्य छात्रों में एक निश्चित व्यवहार सम्पादित करना है। शिक्षण प्रक्रिया अनेक कारकों द्वारा प्रभावित होती है। इन मुख्य कारकों में से कुछ प्रमुख कारक निम्नलिखित हैं–

4.7.1 शिक्षा का उद्देश्य

शिक्षा के उद्देश्य शिक्षण प्रक्रिया के स्वरूप तथा संरचना को प्रभावित करते है। शिक्षण के कुछ निश्चित अधिगम–उद्देश्य हैं, उदाहरण के लिए– कौशलात्मक (Skill), अनुप्रयोगात्मक (Application), ज्ञानात्मक (Cognitive), अवबोधात्मक (Understanding) तथा श्लाघात्मक (Appreciation) आदि। प्रत्येक उद्देश्य (कौशलात्मक या अवबोधात्मक) के लिए भिन्न प्रकार का शिक्षण होगा।

4.7.2 व्यक्तिगत भिन्नताएँ

व्यक्तिगत–भिन्नता का प्रभाव शिक्षण प्रक्रिया पर स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होता है। यदि किसी कक्षा के विद्यार्थी परस्पर एक–दूसरे से शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, रचनात्मक तथा संवेगात्मक रूप से पर्याप्त मात्रा में भिन्न हों तो निश्चय ही वहाँ पर अन्य प्रकार की शिक्षण की विधियाँ सफल होंगी क्योंकि प्रत्येक बालक का व्यक्तित्व भिन्न होता है साथ ही उसकी आवश्यकताएँ, रुचि, रूझान, योग्यता तथा क्षमता में भी पर्याप्त विभिन्नता पाई जाती है।

4.7.3 छात्रों का मनोशारीरिक स्तर

शिक्षण की प्रक्रिया पर विद्यार्थियों के मानसिक व शारीरिक स्तर का भी पूर्ण प्रभाव पड़ता है। विद्यार्थियों का शारीरिक एवं मानसिक स्तर जिस प्रकार का होगा, शिक्षण प्रक्रिया का स्वरूप भी उसी प्रकार का होगा।

4.7.4 विषय–वस्तु का स्वरूप व स्तर

विषय–वस्तु का प्रकार तथा स्वरूप भी शिक्षण की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। जिस तरह की शिक्षण की विषय–वस्तु होगी, उसी के अनुसार शिक्षण का स्वरूप परिवर्तित हो जाएगा। समस्त प्रकार के विषय अथवा किसी पृथक विषय की सम्पूर्ण विषय सामग्री एक ही प्रकार की शिक्षण क्रिया से विद्यार्थियों के सामने प्रस्तुत करने से प्रभावोत्पादक तथा लाभकर शिक्षण नहीं हो सकता है।

4.7.5 कक्षा का वातावरण

कक्षा–कक्ष की संरचना एवं परिवेश शिक्षण प्रक्रिया को पूर्ण रूप से प्रभावित करती है। यदि कक्षा अंधकारयुक्त, निर्वात तथा शोरगुल वाले स्थान पर है तो उचित शिक्षण करना अत्यधिक कठिन होगा। कक्षा तथा विद्यालय का सामाजिक तथा भौतिक वातावरण भी शिक्षण की प्रक्रिया पर पूर्ण प्रभाव डालता है।

4.7.6 शिक्षक क्रिया का नियोजन

शिक्षण क्रिया का नियोजन भी पूर्ण रूप से शिक्षण भी पूर्ण रूप से शिक्षण क्रिया को प्रभावित करता है। यदि शिक्षक बिना किसी योजना के शिक्षण की क्रियाओं का सम्पादन करता है तो उसकी शिक्षण क्रियाएँ कभी भी रोचक एवं प्रभावोत्पादक नहीं होंगी। बिना योजना के शिक्षण की क्रियाओं में किसी भी प्रकार की तारतम्यता नहीं पाई जाती है। पाठ की योजना में शिक्षक पाठ्य–वस्तु–विश्लेषण, अधिगम सामग्री, शिक्षण की विधि, शिक्षण के बिन्दु आदि की अवधारणा, आयोजन, व्यवस्था तथा स्पष्टता व रचना के बारे में चिन्तन–मनन कर लेता है।

4.7.7 शिक्षण की विशिष्टताएँ एवं योग्यताएँ

शिक्षक की शारीरिक, मानसिक, शैक्षिक योग्यताएँ एवं विशिष्टताएँ तथा कौशल, पात्रता, क्षमता एवं व्यक्तित्व गुण भी शिक्षण के स्वरूप को प्रभावित करते हैं। इन्हीं योग्यताओं व विशिष्टताओं पर प्रत्येक शिक्षक का शिक्षण भिन्न–भिन्न प्रकार का होता है। प्रशिक्षित एवं शैक्षिक नवाचारों में मनीषी या प्रबुद्ध शिक्षक का अध्यापन कार्य, अप्रशिक्षित शिक्षक की अपेक्षा अधिक निखरा हुआ होता है। शैक्षिक नवाचारों की प्रवीणता के उपयोग द्वारा शिक्षण प्रक्रिया को रोचक बनाया जा सकता है।

4.7.8 भौतिक सुविधाओं की उपलब्धता

विद्यालय में शिक्षक के पास उपलब्ध भौतिक वस्तुओं एवं विषयवस्तु आश्रय–युक्त अधिगम–वस्तु का शिक्षण प्रक्रिया पर पूर्ण प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। यदि किसी शिक्षक के पास उचित मात्रा में तथा अलग–अलग प्रकार के शैक्षिक साधन उपलब्ध हैं तो वह शिक्षक अन्य की अपेक्षा अधिक सरस व प्रभावोत्पादक रूप में शिक्षण कार्य पूर्ण कर सकेगा।

4.7.9 बाल–केन्द्रिता एवं शिक्षण–प्रविधि

शिक्षक द्वारा प्रयोग की जा रही शिक्षण की विधि तथा शिक्षण तकनीक द्वारा भी शिक्षण की प्रक्रिया प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होती है। पाठ के विकास में छात्र की उचित सक्रियता तथा निष्ठा एवं सहभागिता भी शिक्षण को प्रभावपूर्ण बनाने में योगदान प्रदान करती है। अतः शिक्षण प्रक्रिया में 'क्रिया पद्धति', 'खेल पद्धति' तथा 'करके सीखो' पद्धति अपनाई जाए।

4.7.10 मूल्यांकन प्रतिफल

पूर्व में निर्धारित उद्देश्य किस सीमा तथा राशि या मात्रा में प्राप्त हुए, इस दिशा में कहाँ तक सफलता तथा असफलता प्राप्त हुई, इस कार्य के लिए मूल्यांकन की विभिन्न प्रकार की विधियाँ तथा प्रविधियाँ प्रयोग में लाई जाती हैं। मूल्यांकन प्रतिफल या मूल्यांकन परिणामों को आधार पर शिक्षक समय–समय पर असफलताओं तथा कमियों का निराकरण करने के लिए परिस्थितियों के अनुसरण में वह अपनी शिक्षण–प्रक्रियाओं में आकर्षक व वांछनीय परिवर्तन करता है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 4: शिक्षण द्वारा किसकी पूर्ति की जा सकती है?

....

....

प्रश्न 5: शिक्षण द्वारा किन उद्देश्यों का विकास किया जाता है?

....

....

प्रश्न 6: शिक्षण में सीखने की किन पद्धतियों को अपनाया जाता है?

....

....

4.8 सारांश

शिक्षण का अर्थ है पढ़ाना, शिक्षा देना, ज्ञान देना। यह शिक्षक–शिक्षार्थी की उपस्थिति में सम्पन्न होने वाली अन्तः क्रिया है एवं इस अन्तः क्रिया का माध्यम पाठ्यवस्तु होती है। शिक्षक एवं शिक्षार्थी की सफलता का मूल्यांकन इस तथ्य पर निर्भर करता है कि पाठ्यवस्तु के विषय में शिक्षक द्वार पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देने में शिक्षार्थी कितने योग्य हैं। ज्ञान एवं कौशल को प्रवाहित करने वाली कार्य प्रक्रिया एवं कला को शिक्षण कहते हैं। शिक्षण की प्रक्रिया के उत्तम परिणाम प्राप्त करने के लिए शिक्षक, शिक्षार्थी एवं विषय तीनों पर ही ध्यान देना आवश्यक है। शिक्षण व्यवहार परिवर्तन की एक प्रक्रिया है। शिक्षण के द्वारा शिक्षक–शिक्षार्थियों को विभिन्न प्राचीन एवं सामयिक सूचनाएँ देता है। शिक्षार्थियों को जैसी सूचनाएँ दी जाती हैं वे वैसा ही व्यवहार करने की ओर प्रेरित होते हैं। शिक्षण एक प्रकार की अन्तःक्रिया है जिसका उद्देश्य छात्रों में एक निश्चित व्यवहार सम्पादित करना है। शिक्षण प्रक्रिया अनेक कारकों द्वारा प्रभावित होती है जैसे शिक्षा का उद्देश्य, व्यक्तिगत भिन्नताएँ, छात्रों का मनोशारीरिक स्तर, विषय वस्तु का स्वरूप व स्तर, कक्षा का वातावरण,

शिक्षण क्रिया का नियोजन शिक्षण की विशिष्टताएँ एवं योग्यताएँ, भौतिक सुविधाओं की उपलब्धता, बाल केन्द्रिता एवं शिक्षण–प्रविधि और मूल्यांकन प्रतिफल।

4.9 अभ्यास प्रश्न

1. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का अर्थ स्पष्ट कीजिए?
2. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण को परिभाषित कीजिए?
3. शिक्षण का क्षेत्र एवं प्रकृति का विस्तार से वर्णन कीजिए?
4. शिक्षण की विशेषताएँ का विस्तार से वर्णन कीजिए?
5. शिक्षण की आवश्यकता एवं महत्त्व को निर्धारित कीजिए?
6. शिक्षण को प्रभावित करने वाले कारक का विस्तार से वर्णन कीजिए?

4.10 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण पर चर्चा करेंगे।
2. छात्राध्यापक आपस में शिक्षण का क्षेत्र एवं प्रकृति पर चर्चा करेंगे।
3. छात्राध्यापक आपस में शिक्षण को प्रभावित करने वाले कारको पर चर्चा करेंगे।

इकाई–5 प्रदर्शन विधि एवं खोज विधि द्वारा अधिगम

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 प्रदर्शन विधि द्वारा अधिगम

3.1 प्रदर्शन शिक्षण विधि का क्रियान्वयन

3.2 प्रदर्शन शिक्षण विधि के दोष

5.4 खोज विधि द्वारा अधिगम

5.4.1 खोज विधि अथवा अन्वेषण विधि का अर्थ

5.4.2 खोज विधि का प्रबंधन

5.4.3 खोज विधि से सीखने के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ

5.4.4 खोज विधि के लाभ

5.4.5 खोज विधि की सीमाएँ

5.5 सारांश

5.6 अभ्यास प्रश्न

5.7 चर्चा के बिन्दु

5.1 प्रस्तावना

भौतिकीय विज्ञान में शिक्षण विधियों के अंतर्गत प्रदर्शन विधि का अत्यंत महत्व है। प्रदर्शन विधि में छात्र और शिक्षक दोनों सक्रिय रहते है, कक्षा में सैद्धांतिक भाग का विवेचन करने के साथ इस विधि द्वारा उसका सत्यापन करता है। शिक्षक पढ़ाते समय प्रयोग करता जाता है तथा छात्र प्रयोग प्रदर्शन का निरीक्षण करते हुए ज्ञान प्राप्त करते है। खोज विद्यार्थियों के सीखने में सहायता करने के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण कार्यनीति है। विज्ञान के प्रति सकारात्मक प्रवृत्तियों को प्रेरणा और प्रोत्साहन देने वाला भी है। खोज विधि द्वारा विद्यार्थियों में कौशल विकसित करना, उदाहरण के लिए एक कार्यविधि की योजना बनाना, मापना, प्रेक्षण करना और आँकड़े इकट्ठे करना, आँकड़ों को प्रस्तुत करना, अथवा आलोचनात्मक मूल्यांकन करना इत्यादि गुण विकसित होते हैं।

प्रस्तुत इकाई में हम प्रदर्शन विधि द्वारा अधिगम, प्रदर्शन शिक्षण विधि का क्रियान्वयन, प्रदर्शन शिक्षण विधि के दोष, खोज विधि द्वारा अधिगम, खोज विधि अथवा अन्वेषण विधि का अर्थ, खोज विधि का प्रबन्धन, खोज विधि से सीखने के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ, खोज विधि के लाभ और खोज विधि की सीमाएँ का विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको प्रदर्शन विधि एवं खोज विधि द्वारा अधिगम को समझने में सुविधा होगी।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेगें कि–

- प्रदर्शन विधि को परिभाषित कर सकेंगे।
- प्रदर्शन शिक्षण विधि का क्रियान्वयन कर सकेंगे।
- प्रदर्शन शिक्षण विधि के दोषो का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
- खोज विधि को परिभाषित कर सकेंगे।
- खोज विधि का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
- खोज विधि के गुणों एवं दोषों का वर्णन कर सकेंगे।

5.3 प्रदर्शन विधि द्वारा अधिगम

यह विधि छात्रों को वैज्ञानिक विधि का प्रशिक्षण प्रदान करती है। इस विधि में छात्र सक्रिय रहते है तथा प्रश्नोत्तरी के माध्यम से पाठ का विकास होता है। छात्रों की मानसिक तथा निरिक्षण शक्ति का विकास होता है। विषय वस्तु सरल, सरस, बोधगम्य तथा स्थायी हो जाती है। बालकों को भौतिक विषय के पाठों के अंतर्गत आए प्रयोग प्रदर्शन को स्वयं करके बच्चों को दिखाना चाहिए। छात्रों को भी यथा संभव प्रयोग करने तथा निरिक्षण करने का अवसर देना चाहिए। इस विधि से शिक्षण कराने पर करके सीखने के गुण का विकास होता है।

5.3.1 प्रदर्शन शिक्षण विधि का क्रियान्वयन

एक प्रदर्शन प्रयोग का प्रभावशाली ढंग से विकास करने के लिए अध्यापक को उसकी पर्याप्त रूप से तैयारी कर लेनी चाहिए और कक्षा परिस्थितियों के अनुसार उस प्रयोग की पहले पूर्वाभ्यास (Rehearsal) कर लेनी चाहिए। एक सफल प्रदर्शन–प्रयोग के लिए अध्यापक को निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए–

1. **उचित व्यवस्था (Appropriate Arrangement)** – प्रदर्शन प्रयोग से पूर्व की अध्यापक को यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि विद्यार्थियों को प्रत्येक उपकरण एवं प्रयोग अच्छी तरह दिखाई दे। यदि लैक्चर–गैलरी की व्यवस्था हो तो इस दिशा में कठिनाई कम होगी। परन्तु लैक्चर गैलरी न होने पर भी विद्यार्थी प्रत्येक वस्तु एवं क्रिया को उचित रूप से देख सकें, इसके लिए निम्नलिखित साधनों का उपयोग किया जाना चाहिए–

   (a) **मेज का उपयोग (Use of Table)–** अध्यापक किसी मेज अथवा आगे बैठने वाले विद्यार्थी की मेज पर प्रयोग कर सकता है जिसे विद्यार्थी मेज के चारों ओर खड़े होकर देख सकते हैं। जिन कक्षाओं में विद्यार्थियों की संख्या कम है, उन कक्षाओं में यह विधि उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

   (b) **दपर्ण का उपयोग (Use of Mirror)–** अध्यापक की मेज के उचित कोण पर एक दर्पण लगाना चाहिए जिसमें पड़ती हुई परछाई से सभी विद्यार्थी प्रत्येक वस्तु एवं क्रिया को स्पष्ट रूप से देख सकें। दर्पण के उपयोग से

पीछे बैठे हुए विद्यार्थी अपने स्थान पर बैठे हुए ही प्रयोग को भली भांति देख सकते हैं। बड़ी कक्षाओं में विशेष रूप से जहां, लैक्चर गैलरी नहीं होती, दर्पण का उपयोग, प्रयोग–प्रदर्शन को प्रभावशाली बनाने में सहायता करता है।

(c) **पर्याप्त प्रकाश (Sufficient Sunlight)–** अध्यापक को इस बात की व्यवस्था कर लेनी चाहिए कि प्रदर्शन मेज पर पर्याप्त प्रकाश हो। यदि आवश्यकता हो तो कृत्रिम प्रकाश अथवा अतिरिक्त प्रकाश सामाग्री का प्रयोग करना चाहिए। प्रदर्शन–मेज की पृष्ठ भूमि का भी ध्यान रखना चाहिए। उचित पृष्ठभूमि के अभाव में वस्तुएं स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं देती उदाहरण के लिए श्यामपट्ट के आगे काली चीज़े नहीं दिखानी चाहिए।

(d) **प्रदर्शन उपकरण (Demonstration Equipments)–** अध्यापक को प्रयत्न करना चाहिए कि प्रदर्शन उपकरण कक्षा के आकार एवं विद्यार्थियों की आवश्यकताओं क अनुरूप उचित आकार के हों जिससे विद्यार्थी उन्हें स्पष्ट रूप से देख सकें जैसे–छोटे बीकर, छोटे मापांकित सिलैण्डर के स्थान पर बड़ा बीकर, बड़ा सिलैण्डर आदि का उपयोग करना। परन्तु कुछ उपकरणों को बड़े आकार में दिखाना संभव नहीं होता जैसे–आपेक्षिक घनत्व बोतल (Specific Gravity Bottle)] कैपीलरी ट्यूब (Capillary tube) आदि। ऐसी स्थिति में अध्यापक विद्यार्थियों को प्रदर्शन मेज़ के निकट बुलाकर अथवा स्वयं विद्यार्थियों के बीच में जा कर विद्यार्थियों को उन्हें दिखा सकता है।

(e) **उपकरण क्रम (Arrangement of Equipments)–** उपकरण प्रदर्शन मेज़ पर उचित क्रम में व्यवस्थित होने चाहिए। जिन उपकरणों का प्रयोग किया जाना है, उन्हें मेज़ के बायीं ओर उसी क्रम में रखा जाना चाहिए, जिस क्रम में उन्हें प्रदर्शित किया जाना हैं। किसी उपकरण को प्रदर्शित अथवा उपयोग करने के पश्चात् उसे मेज़ पर दायीं ओर रख देना चाहिए। प्रदर्शन मेज़ पर उपकरणों का ढेर विद्यार्थियों को उलझन में डाल सकता है अतः अनावश्यक उपकरणों को प्रदर्शन मेज़ पर नहीं रखना चाहिए। केवल पाठ से सम्बन्धित उपकरण ही निश्चित क्रम में प्रदर्शन मेज़ पर रखे जाने चाहिए।

2. लक्ष्यों व उद्देश्यों का निर्धारण (Stipulation of Aims and Objectives) – अध्यापक को इस बात का स्पष्ट ज्ञान होना चाहिए कि प्रदर्शन किस प्रयोजन से किया जा रहा है। अध्यापक को प्रदर्शन के लक्ष्यों और प्राप्य उद्देश्यों से अच्छी तरह अवगत होना चाहिए। इन उद्देश्यों का निर्धारण अध्यापक को कक्षा में आने से पूर्व ही कर लेना चाहिए।

3. प्रदर्शन का पूर्व अभ्यास (Pre-rehersal of Demonstration) – प्रदर्शन को सफलतापूर्वक आयोजित करने के लिए प्रदर्शन–प्रयोग को पहले से ही कर के देख लेना चाहिए। प्रदर्शन के दौरान विद्यार्थियों को सबसे अधिक निराशा तब होती है जब उन्हें अध्यापक से यह सुनना पड़ता है कि 'इसे ऐसा होना था परन्तु यह हो नहीं सका'। इससे समय एवं शक्ति का अपव्यय तो होता ही है, अध्यापक अपने विद्यार्थियों का विश्वास भी खो सकता है। इस परिस्थिति में उपकरणों का अच्छा न होना, वस्तुएं शुद्ध न मिलना आदि इस प्रकार के बहाने भी अध्यापक द्वारा बनाए जाएं तो उनका कोई महत्व नहीं होता। ऐसी प्रत्येक परिस्थिति अध्यापक को अपने

बुद्धि कौशल का प्रयोग करने का अवसर प्रदान करती है। यह आवश्यक है कि अध्यापक प्रदर्शन से पूर्व उपकरणों तथा सामग्री की जांच कर ले।

प्रदर्शन का पूर्व अभ्यास भी अत्यधिक आवश्यक है। इससे अध्यापक में आत्मविश्वास विकसित होता है और यह प्रदर्शन प्रयोग को सफलतापूर्वक कर सकता है। अगर कक्षा में अचानक ही किसी कारणवश किसी प्रयोग से सम्बन्धित उपकरण में टूट फूट या कोई अन्य खराबी उत्पन्न हो जाए और प्रदर्शन करना संभव न हो तो अध्यापक को संयम एवं धैर्य रखना चाहिए। ऐसी अवस्था में अध्यापक को प्रयोग की असफलता को एक समस्या के रूप में विद्यार्थियो के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए–ऐसा क्यों हुआ? प्रयोग के दौरान क्या सावधानियाँ रखनी आवश्यक थी? आदि। इसके पश्चात् विद्यार्थियों को वास्तविकता से परिचित करवाकर प्रयोग की पुनरावृत्ति करनी चाहिए।

4. **विषय वस्तु से सम्बद्धता (Content-Relatedness)** – अध्यापक को विद्यार्थियों के पाठ्यक्रम में दिए गए प्रकरणों से संबंधित प्रयोग–प्रदर्शनों का आयोजन करना चाहिए। जो प्रकरण विद्यार्थियों को पढ़ाए जा रहे हों, प्रदर्शन उनसे संबंधित क्रम में होना चाहिए।

5. **विद्यार्थी–केन्द्रिता (Student-Centeredness)** – जिन प्रयोगों अथवा वस्तुओं का प्रदर्शन किया जाए वे विद्यार्थियों के स्तर के अनुरूप होने चाहिए। अध्यापक को यथासंभव प्रयत्न करना चाहिए कि विद्यार्थियों के परिवेश में उपस्थित वस्तुओं से संबंधित प्रयोग तथा सामग्री ही प्रदर्शन के लिए उपयोग की जाए। अध्यापक को प्रदर्शन में विद्यार्थियों की रुचि जागृत करनी चाहिए और प्रयत्न करना चाहिए कि प्रदर्शन के अंत तक उनकी रुचि बनी रहे। अध्यापक का प्रदर्शन करने का ढंग ऐसा होना चाहिए जैसे जादूगर अपना जादू दिखा रहा हो। उसे विभिन्न उद्दीपकों, सहायक सामग्री आदि का प्रयोग करके प्रदर्शन को रोचक बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। विद्यार्थियों को निष्क्रिय मूक श्रोता न बना कर प्रदर्शन में सहभागी बनने का अवसर दिया जाना चाहिए जिससे वे प्रदर्शन में पूर्ण रुचि ले सकें और उनमें प्रयोग सम्बन्धी कार्यकुशलता भी उत्पन्न हो सके।

6. **सकारात्मक दृष्टिकोण (Positive Attitude)** – प्रदर्शन–प्रयोग की सफलता के लिए अध्यापक का दृष्टिकोण सकारात्मक होना चाहिए। अध्यापक को विद्यार्थियों में अन्वेषणात्मक प्रवृत्तियों एवं उचित दृष्टिकोण का विकास करना चाहिए। प्रयोग के पश्चात् परिणाम विद्यार्थियों द्वारा विकसित करने चाहिए। प्रदर्शन करते समय पहले नियम या सिद्धान्त बना कर प्रयोग करने का विद्यार्थियों पर उचित प्रभाव नहीं पड़ता। अध्यापक को प्रयोग–प्रदर्शन के लिए आगमन–निगमन विधि का उपयोग करना चाहिए अर्थात् पहले उदाहरण, फिर प्रयोग या प्रदर्शन करके नियम प्रस्तुत करना चाहिए और उसके पश्चात् अन्य उदाहरण विद्यार्थियों से पूछे जाने चाहिए।

5.3.2 प्रदर्शन शिक्षण विधि के दोष

1. इस विधि से शिक्षण कराने पर सभी विद्यार्थियों को समान अवसर नहीं मिलते।
2. इस विधि में व्यक्तिगत समस्या के समाधान का अवसर छात्रों को नहीं मिलता।
3. प्रयोग करते समय कुछ विद्यार्थी निष्क्रिय बैठें रहते है।
4. कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या अधिक होने पर यह विधि प्रभावी नहीं रहती है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 7: सीखने की किस विधि में छात्र सक्रिय रहते है?

....

....

प्रश्न 8: शिक्षण की किस विधि में शिक्षक को पहले से पूर्वाभ्यास कर लेना चाहिए?

....

....

5.4 खोज विधि द्वारा अधिगम

खोज विधि पर सुकरात और रूसो के समय से चिन्तन किया जा रहा है। सुकरात ने खोज विधि को 'प्रश्न पूछकर' प्रयोग में लाने के लिए बल दिया और रूसो ने खोज विधि को व्यावहारिक समस्याओं का हल करके सीखने पर बल दिया है, जॉन डीवी ने अनुभव द्वारा, सहभागिता पर बल दिया है। जॉन डीवी की पुस्तक हाउ वी थिंक (How We Think) में स्पष्ट किया गया है कि निष्क्रिय अध्ययन का विकल्प समस्या समाधान विधि का प्रयोग करने से होता है। उन्होंने लिखा है कि खोज विधि की उपलब्धि ज्ञान है और आगे खोज का साधन है। उनके अनुसार व्याख्यान की निष्क्रियता के लिए खोज विधि एक महत्वपूर्ण विकल्प है।

सन् 1956 से प्रारम्भ हुए विज्ञान पाठ्यचर्या सुधार में अन्वेषण विधि के प्रयोग पर बल दिया गया है। पी. एस. सी. तथा बी. एस. सी. एस. जैसे प्रोजेक्ट अन्वेषण विधि पर बल देते हैं। ब्रिटेन में आर्मस्ट्रांग ने खोज द्वारा अधिगम को ह्यूरेस्टिक विधि का मुख्य बिन्दु माना है। प्रो. ब्रूनर, प्रो. शवाब आदि ने खोज विधि पर बल दिया है। भारतीय सन्दर्भ में खोज विधि का प्रयोग महत्वपूर्ण माना गया है और राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 ने इसको छात्र–केन्द्रित प्रविधि एवं क्रिया आधारित अधिगम कहा है।

5.4.1 खोज विधि अथवा अन्वेषण विधि का अर्थ

उपलब्ध साहित्य में खोज को अनेक पारिभाषिक शब्दों से सम्बोधित किया गया है, जैसे– 'अन्वेषण', 'समस्या समाधान', 'ह्यूरेस्टिक विधि' आदि। इन सब शब्दों में यह सामान्यतः वह प्रविधि है जिसमें छात्र किसी क्रिया द्वारा समस्या समाधान करता है।

खोज विधि में छात्र सक्रिय सहभागिता से स्वयं की योजना में पहल करता और प्रयोग करता है।

खोज विधि में व्यस्त रहने का अर्थ है–(अ) छात्र उस कार्य में प्रवेश करते हैं जो उनके लिए अपरिचित है, (ब) छात्र भौतिक तथ्य में निहित सिद्धान्त और सामान्यीकरण को, संकेत के आधार पर, बुद्धिमत्ता से अनुमान लगाते हैं तथा (स) प्रयोग करके परिणाम प्राप्त करते हैं।

वेबेस्टर शब्दकोश के आधार पर खोज का अर्थ है– 'खोज करना', 'पता लगाना' अथवा 'उघेरना'। इसी प्रकार अन्वेषण का अर्थ– ढूँढ़ निकालना', 'जाँचना' है। गेने (1963) के अनुसार अन्वेषण क्रियाओं का एक समूह है जो समस्या समाधान प्रविधिकी विशेषताओं से भरपूर है, जिसमें प्रत्येक नवीन तथ्य एक चिन्तन का विषय है।

केरिन एवं सूँड (1984) के अनुसार जब कोई नवीन सम्प्रत्यय अथवा सिद्धान्त की खोज में मानसिक प्रविधियों को प्रयोग में लाता है, उस समय खोज विधि प्रारम्भ हो जाती है। खोज संज्ञानात्मक प्रविधियाँ, जैसे– अवलोकन, वर्गीकरण, मापन, वर्णन करना, निष्कर्ष निकालना आदि है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 9: खोज विधि को किसने प्रतिपादित किया?

....

....

प्रश्न 10: पुस्तक 'हाउ वी थिंक' के लेखक कौन है?

....

....

प्रश्न 11: जान डीवी ने सीखने में किस पर बल दिया?

....

....

यह सत्य है कि खोज विधि की जड़ें सुकरात विधि, जॉन डीवी के विवेचनात्मक चिन्तन, आर्मस्ट्रांग के ह्यूरिस्टिक विधि (Heuristic Method) तथा प्रायोगिक कार्य में हैं। जोसेफ जे. शवाब का मत है कि अन्वेषण विधि में छात्र विज्ञान को क्रिया में देखता है अन्यथा वह विज्ञान को मात्र सुनता है।

5.4.2 खोज विधि का प्रबंधन

शिक्षक द्वारा खोज विधि प्रयोग के लिए आयोजन करना होगा, जिसमें छात्र वैयक्तिक तौर पर अथवा एक छोटे समूह में स्वयं को सम्मिलित करके निम्नलिखित क्रियाएँ करता है–

1. प्रश्नों का उत्तर देते हुए प्रक्रिया की रूपरेखा बनाता है।
2. आवश्यक सामग्री एकत्रित करता है।
3. प्रयोग करता है।
4. आँकड़े एकत्रित करता है।
5. आँकड़ों का विश्लेषण करता है।
6. निष्कर्ष प्राप्त करता है।
7. प्रतिवेदन लिखता है।

5.4.3 खोज विधि से सीखने के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ

खोज विधि से सीखने के लिए अधिगत वातावरण की आवश्यकता है, जैसे–

1. विद्यार्थी को स्वतन्त्रता।
2. विद्यार्थी को अनुकूल वातावरण देना।
3. आवश्यकतानुसार शिक्षक द्वारा मार्गदर्शन।
4. खोज विधि से लगातार सीखने को प्रोत्साहन देना।

जब शिक्षक खोज विधि को प्रयोग में लाने की सोचता है तो सर्वप्रथम उसे कक्षा, प्रयोगशाला तथा सामग्री के उचित प्रबन्धन को देखना होगा। कक्षा में छोटे समूह बनाकर कार्य किया जा सकता है। प्रयोगशाला में प्रोजेक्ट के लिए स्थान निर्धारित कर सकता है, जिसमें एक छात्र अथवा छात्रों का छोटा समूह प्रयोग कर सकता है।

5.4.4 खोज विधि के लाभ

प्रो. ब्रूनर ने खोज विधि के लाभ स्पष्ट किये हैं, जैसे–

1. खोज विधि विद्यार्थी की बौद्धिक क्षमता में वृद्धि करती है। इस विधि में विद्यार्थी स्व–अध्ययन करता है और मानसिक प्रविधियों का प्रयोग करता है।
2. खोज विधि आन्तरिक अभिप्रेरण आधारित है। विद्यार्थी को बाह्य अभिप्रेरण की आवश्यकता नहीं है। विद्यार्थी नवीन खोज की आशा में सीखने का प्रयास करता है और वह उसका अभिप्रेरण है।
3. खोज विधि से सीखने से विद्यार्थी अधिक समय तक नवीन ज्ञान को स्मरण रख सकता है। यह कहना उपयुक्त होगा कि विद्यार्थी स्मृति का संरक्षण अधिक समय तक कर सकता है।
4. इस विधि में विद्यार्थी–केन्द्रित, क्रिया आधारित शिक्षा है।
5. इस विधि से विद्यार्थी में अभिवृत्ति एवं मूल्यों का विकास होता है।
6. इस विधि से मौखिक कार्य कम होता है।

5.4.5 खोज विधि की सीमाएँ

सामान्यतः विज्ञान शिक्षक इस विधि में प्रशिक्षण प्राप्त किये हुए नहीं है।

5.6 सारांश

बालकों को भौतिक विषय के पाठों के अंतर्गत आए प्रयोग प्रदर्शन को स्वयं करके बच्चों को दिखाना चाहिए। इस विधि में छात्र सक्रिय रहते है तथा प्रश्नोत्तरी के माध्यम से पाठ का विकास होता है। छात्रों की मानसिक तथा निरीक्षण शक्ति का विकास होता है। विषय वस्तु सरल, सरस, बोधगम्य तथा स्थायी हो जाती है। शिक्षक पढ़ाते समय प्रयोग करता जाता है तथा छात्र प्रयोग प्रदर्शन का निरीक्षण करते हुए ज्ञान प्राप्त करते है। खोज विधि की उपलब्धि ज्ञान है और आगे खोज का साधन है। उनके अनुसार व्याख्यान की निष्क्रियता के लिए खोज विधि एक महत्वपूर्ण विकल्प है। खोज विधि द्वारा विद्यार्थियों में

कौशल विकसित करना, उदाहरण के लिए, एक कार्यविधि की योजना बनाना, मापना, प्रेक्षण करना और आँकड़े इकट्ठे करना, आँकड़ों को प्रस्तुत करना, अथवा आलोचनात्मक मूल्यांकन करना इत्यादि गुण विकसित होते हैं।

5.6 अभ्यास प्रश्न

1. प्रदर्शन विधि को परिभाषित कीजिए?
2. प्रदर्शन शिक्षण विधि का क्रियान्वयन कैसे करेंगे?
3. प्रदर्शन शिक्षण विधि के दोषों का विस्तार से वर्णन कीजिए?
4. खोज विधि को परिभाषित कीजिए?
5. खोज विधि का विस्तार से वर्णन कीजिए?
6. खोज विधि के गुणों एवं दोषों का वर्णन कीजिए?

5.7 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में प्रदर्शन शिक्षण विधि के क्रियान्वयन पर चर्चा करेगे।
2. छात्राध्यापक आपस में प्रदर्शन शिक्षण विधि के दोषो पर चर्चा करेंगे।
3. छात्राध्यापक आपस में खोज विधि पर चर्चा करेंगे।

इकाई–6 भौतिकीय विज्ञान अधिगम में समूह अधिगम, समूह कार्य, सहकारी एवं सहयोगी रणनीतियाँ

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 भौतिकीय विज्ञान में समूह अधिगम

6.3.1 समूह / सामूहिक चर्चा प्रविधि की विशेषताएँ

6.3.2 समूह / सामूहिक चर्चा प्रविधि के उद्देश्य

6.3.3 समूह / सामूहिक चर्चा प्रविधि की प्रक्रिया

6.3.4 समूह / सामूहिक चर्चा प्रविधि के समय ध्यान देने योग्य बातें

6.4 दल शिक्षण

6.4.1 दल शिक्षण की विशेषताएँ

6.4.2 दल शिक्षण के लाभ

6.4.3 दल शिक्षण की सीमाएँ

6.5 भौतिकीय विज्ञान में सहयोगी अधिगम विधियाँ

6.5.1 जिग्सॉ

6.5.2 सोचिए, जोड़े–बनाइए, साझा कीजिए (थिंक, पेयर, शेयर)

6.5.3 तीन चरण साक्षात्कार

6.5.4 राउंड रोबिन

6.5.5 तीन–मिनट में पुनरीक्षण

6.5.6 संख्यांकित सिर एक साथ

6.5.7 टोली–जोड़ा–एकल (टीम पेयर सोलो)

6.5.8 ज्ञानी को घेरो (सर्किल दे सेज)

6.6 सहभागी शिक्षण

6.6.1 सहभागी / सह–शिक्षण के उद्देश्य

6.6.2 प्रभावी सहभागी / सह–शिक्षण के तरीके

6.6.3 सहभागी / सह–शिक्षण के लाभ

6.6.4 सहभागी / सह–शिक्षण की समीएँ

6.7 सारांश

6.8 अभ्यास प्रश्न

6.9 चर्चा के बिन्दु

6.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.1 प्रस्तावना

एक पारंपरिक प्रतिस्पर्धी कक्षा से एक समूह कक्षा में परिवर्तन करने से छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि में महत्वपूर्ण रूप से वृद्धि होती है। कक्षा अध्ययन के दौरान जब छात्र शिक्षक के विवरण को समझने में सक्षम नहीं होते या पूर्ण रूप से नहीं समझ पाते या अध्यापक से प्रश्न पूछने में हिचकिचाते है तब समूह के अन्य सदस्यों द्वारा सरल शब्दों में व्याख्या करने पर वे अध्ययन सामग्री को सरलता से समझ सकते हैं। इस प्रकार समूह अधिगम द्वारा छात्रों की अधिगम के प्रति धारणा में सुधार आता है तथा उनमे अलगाव की भावना में कमी आती है। इसके आलावा समूह अधिगम से छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि में वृद्धि के द्वारा छात्रों में व्यक्तिगत मतभेदों में भी कमी आती है और सभी प्रकार के छात्रों को बेहतर प्रदर्शन करने के लिए सक्षम बनाता हैं।

प्रस्तुत इकाई में हम भौतिकीय विज्ञान में समूह अधिगम, समूह/सामूहिक चर्चा प्रविधि की विशेषताएँ, समूह/सामूहिक चर्चा प्रविधि के उद्‌देश्य, समूह/सामूहिक चर्चा प्रविधि की प्रक्रिया, समूह/सामूहिक चर्चा प्रविधि के समय ध्यान देने योग्य बातें, दल शिक्षण, दल शिक्षण की विशेषताएँ, दल शिक्षण के लाभ, दल शिक्षण की सीमाएँ, भौतिकीय विज्ञान में सहयोगी अधिगम विधियाँ, जिग्सॉ, सोचिए, जोड़े–बनाइए, साझा कीजिए (थिंक, पेयर, शेयर), तीन चरण साक्षात्कार, राउंड रोबिन, तीन–मिनट में पुनर्निरीक्षण' संख्यांकित सिर एक साथ, टोली–जोड़ा–एकल (टीम पेयर सोलो), ज्ञानी को घेरो (सर्किल द सेज), सहभागी शिक्षण, सहभागी/सह–शिक्षण के उद्‌देश्य, प्रभावी सहभागी/सह–शिक्षण के तरीके, सहभागी/सह–शिक्षण के लाभ और सहभागी/सह–शिक्षण की सीमाएँ के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको भौतिकीय विज्ञान में समूह अधिगम, समूह कार्य एवं सहयोगी अधिगम विधियों को समझने में सुविधा होगी।

6.2 उद्‌देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेगें कि–

- भौतिकीय विज्ञान में समूह अधिगम को परिभाषित कर सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान में समूह अधिगम का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
- दल शिक्षण के अर्थ को समझ सकेंगे।
- दल शिक्षण का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान में सहयोगी अधिगम के प्रकारों को जान सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान में सहयोगी अधिगम विधियों का वर्णन कर सकेंगे।

6.3 भौतिकीय विज्ञान में समूह अधिगम

समूह/सामूहिक चर्चा में बौद्धिक मनोरंजन किया जाता है। इसका आधुनिक अर्थ यह है कि 'वह सभा जिसमें एक प्रकरण पर वक्तागण अपने विचार प्रस्तुत करते हैं।' इसके अन्तर्गत एक क्रम में प्रकरण सम्बन्धी विचारों को प्रस्तुत करने का आयोजन किया जाता है। किसी विशिष्ट प्रकरण पर कोई भी व्यक्ति अपने विचारों को प्रस्तुत कर सकता है।

'सामूहिक चर्चा समिति का एक ऐसा समूह है जिसमें श्रोताओं को उत्तम विचारों से अवगत कराया जाता है। श्रोतागण प्रकरण सम्बन्धी सामान्य तैयारी में अपने कुशल विचारों को सम्मिलित करते हैं और नीति, मूल्यों एवं बोधगम्यता के सम्बन्ध में निर्णय लेते हैं।' सामूहिक चर्चा की प्रक्रिया में समस्या के विभिन्न पक्षों को समझना होता है। सामूहिक चर्चा किसी निर्णय पर नहीं पहुँचती है। श्रोतागण अपने निर्णय लेने में स्वतन्त्र होते हैं। सामूहिक चर्चा के अन्त में भी प्रकरण सम्बन्धी वाद–विवाद खुला रहता है। वक्ताओं एवं श्रोताओं में अन्तःप्रक्रिया नहीं होती है। इसमें अप्रत्यक्ष रूप से अन्तःप्रक्रिया होती है।

6.3.1 समूह/सामूहिक चर्चा प्रविधि की विशेषताएँ

सामूहिक चर्चा की विशेषताएँ निम्न हैं–

1. किसी प्रकरण एवं समस्या के विभिन्न पक्षों का व्यापक रूप में बोध होता है।
2. श्रोतागणों को निर्णय लेने की स्वतन्त्रता होती है तथा वक्ताओं को प्रकरण सम्बन्धी अपने विचारों को प्रस्तुत करने की स्वतन्त्रता दी जाती है।
3. उच्च कक्षाओं में विशिष्ट प्रकरणों तथा समस्याओं के सम्बन्ध में व्यापक जानकारी दी जाती है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 12: समूह अधिगम का क्या अर्थ है?

....

....

प्रश्न 13: समूह अधिगम को परिभाषित कीजिये?

....

....

प्रश्न 14: दल शिक्षण का प्रारम्भ कहाँ से किया गया?

....

....

4. समायोजन तथा सहयोग की भावनाओं का विकास किया जाता है।
5. मूल्यांकन तथा संश्लेषण की क्षमताओं का विकास किया जाता है।
6. प्रकरण या समस्या सम्बन्धी दोनों प्रकार के विरोधी तथा पक्षीय विचारों को सुनने तथा जानने का अवसर मिलता है।

6.3.2 समूह/सामूहिक चर्चा प्रविधि के उद्देश्य

सामूहिक चर्चा का आयोजन निम्नलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किया जाता है–

1. किसी तत्कालीन समस्या के विभिन्न पक्षों की जानकारी तथा उन्हें पहचानने की क्षमताओं का विकास करना।
2. किसी प्रकरण के विभिन्न पहलुओं को पहचानना और उन्हें बोधगम्य बनाना।
3. प्रकरण एवं समस्या सम्बन्धी निर्णय लेने की क्षमताओं का विकास करना।

4. विद्यार्थियों एवं भागीदारों में व्यापक दृष्टिकोण का विकास करना।
5. प्रकरण एवं समस्या सम्बन्धी शंकाओं एवं कठिनाइयों के समाधान एवं स्पष्टीकरण का अवसर देना।
6. सामूहिक चर्चा का प्रमुख उद्देश्य ज्ञानात्मक पक्ष के उच्च पक्षों का विकास करना है।

6.3.3 समूह / सामूहिक चर्चा प्रविधि की प्रक्रिया

सामूहिक चर्चा की व्यवस्था किसी विभाग, संस्था या संगठन द्वारा की जाती है। अनुदेश या व्यवस्थापक सामूहिक चर्चा प्रकरण या समस्या का निर्धारण करता है, वक्ताओं को आमन्त्रित करता हैं। सामूहिक चर्चा का स्थान एवं तिथियों व समय का निर्धारण करता है। समस्या के विभिन्न पक्षों की पहचान करके वक्तागण उन पर प्रपत्र तैयार करते हैं। प्रत्येक वक्ता के लिए समय भी निश्चित कर दिया जाता है। सभी वक्ताओं के प्रस्तुतीकरण के पश्चात् अध्यक्ष एक समीक्षा प्रस्तुत करता है। तत्पश्चात् समस्त प्रस्तुति का आलेख तैयार किया जाता है। इस प्रक्रिया के माध्यम से लिखित रूप से भी आख्या प्रस्तुत की जाती है और प्रपत्र के रूप में सभी श्रोताओं एवं वक्ताओं को वितरित कर दी जाती है। सामूहिक चर्चा में श्रोताओं को अन्तःप्रक्रिया का अवसर नहीं दिया जाता है अपितु वे वक्ताओं के प्रवचनों एवं विचारों को ध्यानपूर्वक सुनते हैं। जो वक्ता प्रकरण एवं समस्या के पक्ष में बोलता है, वह अध्यक्ष के एक ओर तथा विरोधी विचार वाला दूसरी ओर खड़ा होता है।

6.3.4 समूह / सामूहिक चर्चा प्रविधि के समय ध्यान देने योग्य बातें

सामूहिक चर्चा की व्यवस्था में तीन प्रकार की बातों का ध्यान रखना चाहिए–

1. प्रथम सावधानी अनुदेशक / व्यवस्थापक को यह रखनी चाहिए कि वक्ताओं ने अपने प्रवचनों को अच्छी प्रकार तैयार कर लिया है या नहीं। वे सामूहिक चर्चा की प्रक्रिया व प्रस्तुतीकरण के नियमों से भी भली–भाँति परिचित हैं या नहीं। इसके साथ ही साथ उसे अन्य वक्ताओं के विचारों की पुनरावृत्ति नहीं करनी चाहिए।
2. द्वितीय सावधानी यह रखनी चाहिए कि अध्यक्ष या अनुदेशक कार्य की एक रूपरेखा तैयार कर लें। इसके अन्तर्गत वक्ताओं के प्रवचनों को एक क्रम में व्यवस्थित करना होता है जिससे प्रकरण सम्बन्धी कोई महत्त्वपूर्ण विरोधी विचाराधारा छूट न जाए।
3. तृतीय सावधानी के अन्तर्गत प्रश्नों की परिस्थितियों की अवस्था का सावधानी से आयोजन करना चाहिए। साधारणतः सभी वक्ताओं को अन्त में प्रश्नों के स्पष्टीकरण के लिए अवसर देना चाहिए। कभी–कभी वातावरण में परिवर्तन लाने के लिए अध्यक्ष बालकों को प्रश्न पूछने का अवसर देता है।

6.4 दल शिक्षण

दल शिक्षण, कक्षा शिक्षण में सुधार के उद्देश्य से अमेरिका के हार्वर्ड विश्वविद्यालय में प्रारम्भ किया गया एक नवाचार (Innovation) है। दल शिक्षण अनमनीय (Unflexible) परम्परागत कक्षा शिक्षण को बदलने की प्रेरणास्वरूप जन्मी प्रणाली है।

दल शिक्षण, अंग्रेजी भाषा के दो शब्दों Team + Teaching से बना है जिसमें Team का हिन्दी अनुवाद 'दल' या 'समूह' या टोली तथा Teaching का हिन्दी अनुवाद 'शिक्षण' या 'अध्ययन' है।

दो या दो से अधिक शिक्षक सहयोगात्मक तरीके से विद्यार्थियों के समूह के लिए विषय–विशेष का शिक्षण करते है, उसे दल शिक्षण कहते है। शिक्षक अपने–अपने क्षेत्र विशेषज्ञ होते है। एक शिक्षक दल का नेता व शेष शिक्षक उसके निर्देशन पर कार्य करते हैं।

डेविड के अनुसार, ''दल शिक्षण संगठन का एक स्वरूप है जिसमें कई शिक्षक अपने स्रोतों, अभिरूचियों तथा योग्यताओं एवं दक्षताओं को एकत्रित करते है और छात्रों की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षकों की टोली द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। वे विद्यालय की सुविधाओं का समुचित उपयोग करते है।''

कार्लो आलसन के अनुसार, ''दल शिक्षण अनुदेशन परिस्थितियों को उत्पन्न करने की एक प्रविधि है जिसमें दो या दो से अधिक अध्यापक अपने कौशल तथा शिक्षण योजना का छात्रों के एक समूह के शिक्षण में सहयोग करते है जिसमें लचीली योजना प्रयोग में लायी जाती है जो किसी विशिष्ट अनुदेशन की आवश्यकतानुसार बदली भी जाती है।''

6.4.1 दल शिक्षण विशेषताएँ

1. सहकारिता की भावना पर आधारित हैं।
2. दो या दो से अधिक शिक्षक कार्य करते है।
3. यह शिक्षण में एक अभिनव प्रयोग हैं
4. इसकी योजना लचीली होती है।
5. रूचियो का समुचित ध्यान रखा जाता है।
6. छात्रों की आवश्यकता व उपलब्ध साधनों का समुचित ध्यान रख जाता है।
7. पूरे दल पर शिक्षण का सामूहिक दायित्व होता है।
8. छात्रों को अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्ति।
9. व्यावसायिक कुशलता में वृद्धि।
10. कक्षा पर नियंत्रण स्थापना सरल।

6.4.2 दल शिक्षण के लाभ

1. तत्कालीन समस्याओं का अन्तः अनुशासनिक अध्ययन।
2. मानवीय सम्बनधों की स्थापना।
3. लचीलापन।
4. शिक्षकों के ज्ञान में वृद्धि ।
5. छात्रों को विशेषज्ञों का लाभ।
6. स्वध्याय का विकास।
7. श्रव्य–दृष्य सामग्री का उचित प्रयोग।
8. वार्ता के अधिक व अनुकूल अवसर।

6.4.3 दल शिक्षण की सीमाएँ

1. आर्थिक भार अधिक।
2. स्वतन्त्र शिक्षण का हनन।
3. अनुसंधानो का अभाव।
4. सहयोग का अभाव।
5. समन्वय स्थापना में कठिनाई।
6. संरचना की अनमनीयता।

6.5 भौतिकीय विज्ञान में सहयोगी अधिगम विधियाँ

सहयोगी अधिगम विधियाँ अत्यधिक प्रचलन में हैं, क्योंकि यह स्थापित हो चुका है कि शिक्षार्थी सहयोग द्वारा बेहतर सीखते हैं। आज विद्यालयों में प्रतियोगात्मक वातावरण से सहयोगी वातावरण एक आमूलचूल परिवर्तन है। विश्व भर में सहयोगी अधिगम को गति मिली और कक्षा–कक्षों में इसका उपयोग किया जा रहा है। एक विज्ञान शिक्षक के रूप में आपको इन विधियों की जानकारी रखने की आवश्यकता है, ताकि आप इन्हें अपनी विज्ञान कक्षा में प्रभावशाली शिक्षण–अधिगम के लिए उपयोग में ला सकें। सामान्य शब्दों में, सहयोगी अधिगम अनुदेशन की एक विधि है, जिसमें शिक्षार्थियों को शिक्षक के मार्गदर्शन में एक सामान्य अधिगम उद्देश्य की प्राप्ति हेतु छोटे समूहों में कार्य करना होता है। सहयोगी अधिगम विधियाँ पारम्परिक समूह कार्य से भिन्न हैं क्योंकि इन विधियों में कुछ विशेष गुण हैं:

1. शिक्षार्थी आपसी अधिगम लक्ष्य की प्राप्ति हेतु एक टोली में एक–दूसरे पर सकारात्मक रूप से आश्रित रहते हैं।
2. शिक्षार्थी आमने–सामने परस्पर क्रिया में संलग्न होते हैं।
3. शिक्षार्थियों का आकलन व्यक्तिगत रूप से होता है और वे अधिगम लक्ष्यों की पूर्णता के लिए समान रूप से साझा करने और योगदान करने के लिए जबावदेह होते हैं।
4. शिक्षार्थी शिक्षण हेतु उपयुक्त सहभागी और अन्तर्वैयक्तिक काशलों का विकास करते हैं, ताकि वे एक–दूसरे को शिक्षित करें और सीखने के लिए प्रोत्साहित कर सकें।
5. शिक्षार्थी भावी शिक्षण हेतु समूह कार्यविधि की प्रभाविकता पर मुक्त चिंतन और आकलन करते हैं।

सहयोगी अधिगम विधियाँ विज्ञान शिक्षार्थियों के लिए निम्न प्रकार से सहायक हैं:

1. सहयोगी अधिगम शिक्षार्थियों को वैज्ञानिक प्रक्रियाओं के बारे में परीक्षण द्वारा, विचार साझा करके और सहपाठियों से सीखकर स्वयं की समझ का निर्माण करने में सहायता करता है। इसके परिणामस्वरूप विषय/शीर्षक के बारे में उनका ज्ञान सुदृढ़ बन जाता है।
2. सहयोगी अधिगम शिक्षार्थियों को विचार साझा करके, खोज करके, सुधार करके, स्वयं के विचारों पर प्रश्न करके, साथ ही दूसरों के नए विचारों पर प्रश्न करके सीखने के अवसर प्रदान करता है।

3. ये विधियाँ शिक्षार्थियों की सहभागिता और संलग्नता को प्रोत्साहित करती है। शिक्षार्थी स्वयं के अधिगम हेतु उत्तरदायित्व लेना आरंभ कर देते हैं और वे शिक्षक पर पूर्ण रूप से आश्रित नहीं रहते।

4. सहयोगी अधिगम द्वारा शिक्षार्थी अपने विचारों को सार्वजनिक करते हैं, क्योंकि वे इन्हें अन्य शिक्षार्थियों के साथ साझा करते हैं और दूसरों के विचारों से लाभान्वित होकर वे इन्हें परिमार्जित करते हैं।

5. कई सहयोगी अधिगम विधियाँ प्रचलन में हैं। आपके शिक्षण–अधिगम के सहजीकरण हेतु हम यहाँ कुछ महत्वपूर्ण विधियों की चर्चा करेंगे।

6.5.1 जिग्सों

जिग्सॉ (JIGSAW) एक महत्वपूर्ण और प्रचलित सामान्य सहयोगी अधिगम विधि है। इसमें शिक्षार्थी एक सामान्य सामूहिक लक्ष्य की प्राप्ति हेतु समूहों में कार्य करते हैं। विज्ञान के शिक्षण–अधिगम में यह विधि अन्वेषण, प्रयोग कार्य और परियोजना कार्य में उपयोगी है। जिग्सॉ में शिक्षार्थी अपनी विशेषज्ञता को समूह के अन्य सदस्यों के साथ साझा करते हैं और एक समूह कार्य को पूर्ण करने में योगदान करते हैं।

लर्निंग स्टेशन की भांति आवश्यकतानुसार विद्यार्थियों को अलग–अलग समूह में बिठाया जाता है। प्रत्येक समूह को किसी एक प्रकरण पर काम करने को कहा जाता है। समूह का प्रत्येक सदस्य उस प्रकरण पर अपनी मास्टरी हासिल करता है। अब एक नया समूह बनाया जाता है। इस समूह में प्रत्येक प्रकरण पर मास्टरी हासिल किए गए एक–एक सदस्य होते हैं। अब इस नए समूह के सदस्य अपने समूह के अन्य सदस्यों को अपने पूर्व समूह में मास्टरी हासिल किए गए प्रकरण से संबंधित बातें सिखाता है। इस प्रकार इस छोटे समूह में प्रत्येक सदस्य एक दूसरे को अपनी सीखी हुई बात को सिखाता है।

जिग्सॉ में शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण है। यहाँ शिक्षक एक सहजकर्त्ता की भूमिका अदा करता है, जो शिक्षार्थियों को शीर्षकों को पहचानने, समूह निर्माण में, क्रियाकलाप की प्रकृति की व्याख्या करने और एक ऐसा वातावरण निर्मित करने में जहाँ विचारों का मुक्त प्रवाह प्रोत्साहित किया जा सके, में सहायता पहुँचाता है। वह प्रत्येक समूह की प्रगति का पर्यवेक्षण करता है और उन्हें आपस में विचार साझा करने में सहायता करता है।

6.5.2 सोचिए, जोड़–बनाइए, साक्षा कीजिए (थिंक, पेयर, शेयर)

यह एक दूसरी सहयोगी अधिगम विधि है जो विज्ञान कक्षाओं में अक्सर उपयोग की जा रही है। शिक्षक की भूमिका एक सहजकर्ता की है परंतु सभी कार्य शिक्षार्थियों के द्वारा स्वयं ही पूर्ण करने होते हैं। सोचिए, जोड़े–बनाइए, साझा कीजिए विधि में तीन चरण हैं:

सोचिए	उजागर/उत्पन्न हुई समस्या/प्रश्न/मुद्दे पर शिक्षार्थियों से स्वतंत्र रूप से चिंतन करने के लिए कहा जाता है। शिक्षार्थी समस्या के बारे में बुद्धि शील–चिंतन सर्वेक्षण, विचारों का संकलन करते हैं और उस समस्या के बारे में स्वयं के विचारों का निर्माण करते हैं।

जोड़े बनाएँ	एक बार जब चिंतन पूरा हो जाता है, तो शिक्षार्थियों को अपने विचार एक–दूसरे के साथ साझा करने के लिए अपने सहपाठियों के साथ जोड़े बनाने के लिए कहा जाता है। इस चरण में जोड़े के दोनों शिक्षार्थी एक–दूसरे के विचारों को सावधानीपूर्वक सुनते हैं। वे प्रश्न करते हैं, तर्क करते हैं, चुनौती देते हैं और दोनों के विचारों को समझने के बाद एक निष्कर्ष पर पहुँचते हैं।
साझा कीजिए	शिक्षार्थियों से अपने विचारों को जोड़े के साथ पूरी कक्षा के सामने साझा करने के लिए कहा जाता है। एक जोड़े के रूप में विचारों का प्रस्तुतीकरण शिक्षार्थियों को अधिक आरामदायक और साथी–सहयोगी बनने में सहायता करता है। जोड़ों के द्वारा प्रस्तुत विचारों पर समूह को अपने विचारों के प्रदर्शन के लिए कहा जाता है। इस प्रकार शिक्षार्थियों के विचार अधिक परिष्कृत हो जाते हैं और वे बेहतर समाधान निकालने में समर्थ होते हैं।

सोचिए, जोड़े–बनाइए, साझा कीजिए, विधि का उपयोग करते समय आपसे अपेक्षा की जाती है कि एक शिक्षक के रूप में आप एक सहजकर्ता की भाँति कार्य करें और शिक्षार्थियों का जोड़े बनाने में, प्रत्येक चरण के लिए समय के आवंटन में, और अनुकूल अधिगम वातावरण में विचार साझा करने के दौरान कक्षाकक्ष चर्चा के संगठन में सहजीकरण करें। शिक्षार्थियों को चर्चा का सारांश निकालने में सहजीकृत करने के लिए आप उनके विचारों को श्यामपट्ट पर अभिलेखित कर सकते हैं। एक शिक्षक के रूप में आपको बहुत स्पष्ट करना होगा कि किस प्रकार के शीर्षक के लिए सोचिए, जोड़े–बनाइए, साझा कीजिए, विधि का उपयोग किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, इस विधि का उपयोग आप "मौसम", रासायनिक समीकरणों की रचना, प्राकृतिक घटना की व्याख्या करना या किसी आपदा जैसे भूकम्प, चक्रवात, आदि की व्याख्या करना जैसे शीर्षकों के लिए कर सकते हैं।

6.5.3 तीन चरण साक्षात्कार

यह एक विधि है जिसका उपयोग तब होता है जब शिक्षार्थी ऐसी समस्या पर कार्य कर रहे हों, जिसका कोई निश्चित उत्तर नहीं होता। इस विधि में तीन चरण सम्मिलित हैं:

1. **चरण-I:** शिक्षक कक्षा के सम्मुख मुद्दा/शीर्षक प्रस्तुत करता है। साथ ही उसके सम्बन्ध में उपलब्ध विभिन्न विचार/व्याख्याएँ भी प्रस्तुत करता है। वह प्रक्रिया को प्रारंभ करने के लिए कई प्रश्न पूछता है।

2. **चरण-II**: शिक्षार्थी जोड़े बनाते हैं। जोड़े का एक सदस्य साक्षात्कारकर्त्ता और दूसरा साक्षात्कार देने वाला बनता है। वे अपने सहपाठी का साक्षात्कार करते हैं और मुद्दों पर उसके अवलोकनों/विचारों को अभिलेखित करते हैं।

3. **चरण-III**: शिक्षार्थी अपने जोड़े में ही अपनी भूमिका बदल लेते हैं, अर्थात् साक्षात्कारकर्त्ता, साक्षात्कार देने वाला और साक्षात्कार देने वाला, साक्षात्कारकर्त्ता बन जाता है। दूसरे बार के इस साक्षात्कार के बाद प्रत्येक जोड़ा कक्षा के सम्मुख विचार प्रस्तुत करता है। कक्षा विचार पर चर्चा करती है, तर्क करती है और प्रश्न करती है ताकि पूरी कक्षा सर्वसहमत विचार तक पहुँच सकें।

6.5.4 राउंड रोबिन

इसे रैली–रोबिन के नाम से भी जाना जाता है। इस विधि में कक्षा को छोटे समूहों में विभाजित किया जाता है और एक शिक्षार्थी को अभिलेखक की भाँति कार्य करने का उत्तरदायित्व सौंपा जाता है। शिक्षक कई संभव उत्तरों के साथ प्रश्न पूछता है और अपने समूह में शिक्षार्थियों को उत्तरों के बारे में चिंतन करने के लिए कहा जाता है। टोली का प्रत्येक सदस्य अपने विचारों को राउंड रोबिन शैली में प्रस्तुत करता है और अभिलेखक प्रत्येक उत्तर को नोट करता है। समूह में सभी शिक्षार्थियों द्वारा अपने विचार प्रस्तुत करने के बाद, समूह का एक सदस्य (सामान्यतया वह, जो अभिलेखक का कार्य करता है) पूरी कक्षा में समूह के विचारों को प्रस्तुत करता है।

6.5.5 तीन–मिनट में पुनरीक्षण

यह विधि विज्ञान शिक्षकों द्वारा तब उपयोग में लाई जा सकती है जब वे कुछ जटिल प्रक्रियाओं के बारे में व्याख्या या चर्चा कर रहे हों। उदाहरण के लिए, यदि आप अपने जीव विज्ञान की कक्षा में श्वसन तंत्र की व्याख्या कर रहे हों तो आप अपनी चर्चा के बीच में कभी भी रुक सकते हैं और अपने शिक्षार्थियों से समूह बनाने को कहें और तीन मिनट के अंदर अभी तक जो भी चर्चा की गई है, उस पर पुनर्विचार करें। शिक्षार्थी अपने ही समूह में, चर्चा कर सकते हैं और अपनी शंकाओं के स्पष्टीकरण के लिए समूह के अन्य सदस्यों या दूसरे समूह या आपसे प्रश्न पूछ सकते हैं।

बोध प्रश्न

प्रश्न 15: दल शिक्षण को परिभाषित कीजिये?

....

....

प्रश्न 16: सहभागिक शिक्षण किसे कहते है?

....

....

प्रश्न 17: स्टेशन शिक्षण कहाँ प्रयुक्त होता है?

....

....

6.5.6 संख्यांकित सिर एक साथ

यह एक अन्य सहयोगी अधिगम विधि है जिसमें शिक्षार्थियों को छोटे समूहों में व्यवस्थित किया जाता है। समूह के प्रत्येक सदस्य को एक संख्या प्रदान की जाती है। जब शिक्षक कोई प्रश्न पूछता है तो समान संख्या वाले शिक्षार्थी एक साथ मिल जाते हैं और प्रश्न के संभव उत्तर पर चर्चा प्रारंभ कर देते हैं। वे समूहों में कार्य करते हैं। एक विशेष संख्या वाला शिक्षार्थी जो कि शिक्षक या समूह द्वारा सुझाया गया हो समूह का नेता बन जाता है और समूह के विचार को पूरी कक्षा के सम्मुख प्रस्तुत करता है। क्योंकि विशेष संख्याकित शिक्षार्थियों को एक साथ एकत्रित होना होता है, इसलिए यह रणनीति ”संख्यांकित सिरों को एक साथ रखना” के नाम से जानी जाती है।

6.5.7 टोली–जोड़ा–एकल (टीम पेयर सोलो)

इस विधि में एक समस्या की पहचान शिक्षार्थियों द्वारा की जाती है और कई बार छोटे समूहों में शिक्षक द्वारा आवंटित की जा सकती है। सभी शिक्षार्थी समस्या पर एक टोली की भाँति कार्य करते हैं। बाद में वे स्वयं को जोड़े के रूप में पुनर्समूहित करते हैं और उसी समस्या पर कार्य करते हैं तथा अंत में वे अकेले चिंतन आरंभ कर देते हैं। इस विधि का उपयोग तब किया जाता है जब आरंभ में समस्या एक शिक्षार्थी की व्यक्तिगत क्षमता से बाहर होती है। शिक्षार्थी समूहों में संभावित समाधानों को खोज करते हैं और उसके बाद जोड़े में चर्चा करते हैं और एक व्यक्ति के रूप में स्वयं प्रयोग करते हैं। विज्ञान शिक्षण में यह उपागम प्रयोगशाला में प्रयोगों के संचालन में बहुत उपयोगी है।

6.5.8 ज्ञानी को घेरो (सर्किल द सेज)

इस विधि का उपयोग तब किया जाता है जब एक विशिष्ट ज्ञान या सूचना बहुत कम शिक्षार्थियों के पास उपलब्ध होती है। उदाहरण के लिए, आपकी कक्षा के कुछ शिक्षार्थियों ने विज्ञान संग्रहालय या वन्य जीवन संग्रहालय का भ्रमण किया है। आप शिक्षार्थियों से कह सकते हैं कि कौन उन सब चीजों की व्याख्या कर सकते हैं जो उन्होंने संग्रहालय में देखे हैं। जो शिक्षार्थी अपने विचारों को साझा करने के लिए सहमत होते हैं, उन्हें ”सेज” या ”ज्ञानी” के रूप में अंकित किया जाएगा। बाकी कक्षा को छोटे–छोटे समूहों में विभाजित किया जाएगा और प्रत्येक समूह एक ज्ञानी अर्थात् शिक्षार्थी को परिवृत्त करेगा। ज्ञानी अपने चारों ओर के समूह को विस्तृत जानकारी प्रदान करेगा। जब शिक्षार्थी अपने समूह में वापस आएँगे, वे जो भी उन्होंने ज्ञानी से सीखा है, उसे साझा करेंगे और इस प्रकार विचारों को साझा करने से उनके ज्ञान में वृद्धि होगी।

6.6 सहभागी शिक्षण

सहभागी शिक्षण का सामान्य अर्थ शिक्षक एवं शिक्षार्थी की सहभागिता से लिया जाता है। शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षार्थी भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है, जितना कि शिक्षक। उदाहरण के लिए– एक शिक्षक कक्षा में पूर्ण तल्लीनता से शिक्षण कार्य कर रहा है। वह छात्रों से प्रश्न पूछकर, श्यामपट्ट पर लेखन करवाकर, पाठ को पढ़वाकर तथा पृष्ठ–पोषण प्रदान करके उनका सहयोग दे रहे हैं। शिक्षक प्रश्न पूछता है तो छात्र उत्तर देता है।

शिक्षक निर्देश देता है, छात्र पालन करता है। शिक्षक पाठ को अच्छी तरह से समझाने के लिए गतिविधि जैसे– फ्लैशकार्ड, चार्ट पेपर पर चित्रित चित्र, श्यामपट्ट पर

अभ्यास कार्य, नाटक मंचन आदि कराकर अपने शिक्षण को रोचक व सहभागिता से युक्त बनाता है।

प्रो. श्रीकृष्ण दुबे के अनुसार– ''सहभागी शिक्षण का आशय उस शिक्षण प्रक्रिया से है जिसमें शिक्षक एवं शिक्षार्थी की पूर्ण सहभागिता निश्चित होती है तथा सहभागिता द्वारा ही शिक्षण प्रक्रिया प्रभावशाली एवं उद्देश्यपूर्ण बनती है।''

आर.के. शर्मा के अनुसार– ''जिस शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षार्थी का सहयोग प्राप्त करके उसे यह अनुभव कराया जाता है कि वह इस शिक्षण प्रक्रिया का महत्त्वपूर्ण पक्ष है, सहभागी शिक्षण कहलाता है।''

6.6.1 सहभागी / सह–शिक्षण के उद्देश्य

सहभागी / सह–शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

1. शिक्षक एवं छात्र दोनों को रुचिकर एवं आनन्ददायी बनाना।
2. कक्षा के वातावरण को रुचिकर एवं आनन्ददायी बनाना।
3. छात्रों में चिन्तन, मनन, कल्पना, तर्क, जिज्ञासा आदि प्रवृत्तियों का विकास करना।
4. विषयवस्तु की प्रस्तुति को सरल एवं बोधगम्य बनाना।
5. छात्रों का चहुँमुखी विकास करना।
6. छात्रों की अन्तर्निहित शक्तियों का विकास करना।
7. छात्रों की आवश्यकतानुसार कक्षा अभ्यास का निर्धारण करना।
8. छात्रों को स्थायी ज्ञान प्रदान करना।
9. शिक्षकों की सुविधाओं, अधिगम एवं ज्ञान में समन्वय स्थापित करना।
10. सहयोग एवं सहकारिता की भावना विकसित करना।

6.6.2 प्रभावी सहभागी / सह–शिक्षण के तरीके

शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति होने के साथ शिक्षण के तरीकों को भी प्रभावी बनाने की आवश्यकता महसूस हुई। इसके लिए शिक्षक अधिक से अधिक समय कक्षा में शिक्षण कार्यों एवं सहायक कार्यों में संलग्न रहने लगे। एक सामान्य पाठ्यचर्या के अन्तर्गत सामान्य एवं विशिष्ट छात्र एक साथ शिक्षा ग्रहण करने लगे। इसके लिए शिक्षक एवं छात्र दोनों के लिए कुछ विशिष्ट प्रावधान किए गए जिनके द्वारा सह–शिक्षण को प्रभावी बनाया गया। इसके लिए विभिन्न विधियों एवं रणनीतियों को तैयार किया गया जो उसके उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक हुए। सह–शिक्षण को प्रभावी बनाने के लिए निम्नलिखित तरीकों को अपनाया गया–

1. **सहयोगात्मक सह–शिक्षण (Supportive Co-operative Teaching)** – इसके अन्तर्गत एक शिक्षक मुख्य भूमिका मे होता है जबकि अन्य शिक्षक छात्रों की सहायता के लिए क्रमानुसार अपने दायित्वों का निर्वहन करते हैं। इसके द्वारा जहाँ उनके शिक्षण–अधिगम में प्रभावी बदलाव आता है वहीं छात्र अपनी समस्याओं, जिज्ञासाओं एवं कमियों को स्वतन्त्र रूप से शिक्षक के समक्ष रखते हैं।

2. **समानान्तर सह–शिक्षण (Parallel Co-operative Teaching)** – इसके अन्तर्गत कक्षा के आधे छात्रों को एक शिक्षक तथा दूसरे आधे छात्रों को अन्य शिक्षक शिक्षण करता है परन्तु विशेष बात यह होती है कि दोनों ही शिक्षक एक ही विषय–वस्तु का शिक्षण एक समय में करते हैं। इसके द्वारा शिक्षक एवं छात्र अनुपात बना रहता है।

3. **पूरक सह–शिक्षण (Complementary Co-operative Teaching)** – पूरक सह–शिक्षण में सह–शिक्षण समूह का एक सदस्य पूरक के रूप में अन्य समूह को अनुदेशन प्रदान करता है। इसके द्वारा छूटे अथवा न समझ में आने वाले प्रकरणो को पूरक के रूप में एक शिक्षक पुनः शिक्षण कार्य करता है।

4. **स्टेशन शिक्षण (Station Teaching)** – सह–शिक्षण समूह को अनुदेशन के आधार पर विभाजित किया जाता है। प्रत्येक समूह को एक शिक्षक अनुदेशन देता है तथा यह प्रक्रिया चलती रहती है। स्टेशन शिक्षण के अन्तर्गत एक निश्चित समय निर्धारित रहता है तथा प्रत्येक स्टेशन पर निर्धारित समय खर्च किया जाता है अथवा समय के अनुसार शिक्षण किया जाता है।

5. **एक शिक्षक, एक निरीक्षण (One Teacher, One Observation)** – इसमें एक शिक्षक द्वारा शिक्षण कार्य किया जाता है तथा दूसरे शिक्षक के द्वारा कक्षा, शिक्षण एवं प्रदत्त सूचनाओं का निरीक्षण किया जाता है। इसके द्वारा त्रुटियों एवं शिक्षण में आवश्यकतानुसार सुधार किया जाता है।

6. **वैकल्पिक अथवा विभेदित सह–शिक्षण (Alternative or Differentiated Co-Teaching)** – वैकल्पिक अथवा विभेदित सह–शिक्षण, शिक्षण के दो विभिन्न उपागम प्रदान करता है। इसके द्वारा एक ही सूचना को दोनों उपागमों द्वारा प्रदान किया जाता है। इसमें अधिगम परिणाम सभी छात्रों का एक सा रहता है जबकि उपागम में अन्तर हो सकता है।

6.6.3 सहभागी / सह–शिक्षण के लाभ

सहभागी / सह–शिक्षण के लाभ निम्नलिखित हैं–

1. अधिगम के वैकल्पिक साधनों में बढ़ोत्तरी से सभी छात्रों को लाभ होता है। जैसे– छात्र–शिक्षक अनुपात में कमी, जिससे शिक्षक प्रत्येक छात्र पर अधिक ध्यान दे पाता है।
2. कार्यक्रम की तीव्रता एवं निरन्तरता में सुधार होता है। जैसे– शैक्षणिक रणनीतियाँ, जो विशिष्ट शिक्षा के लिए बनायी गईं थीं, सामान्य शिक्षा को उत्कृष्ट बनाने के लिए सुधार कर प्रयोग की जा सकती हैं। इन रणनीतियों को वृहद स्तर पर प्रयोग करने के लिए सामान्यीकरण कर प्रोत्साहित करना चाहिए।
3. दिव्यांग छात्रों की सीखने की कठिनाइयों को कम कर देता है। जैसे– विशिष्ट बालकों को समावेशी शिक्षा के माध्यम से सभी के साथ अधिगम करने के अवसर प्रदान करता है जिससे उनके सामाजिक कौशल में वृद्धि हो तथा वे भी समाज के सक्रिय सदस्य बनें।
4. शिक्षकों और सम्बन्धित सेवा कर्मियों के सहयोग में वृद्धि होती है, जैसे– जब समस्त शिक्षक और अन्य सेवा कर्मी एक साथ कार्य करते हैं उस समय वे अपने को अकेला नहीं अनुभव करते हैं तथा उनमें नई योग्यताओं का विकास भी होता है।

5. इससे विशिष्ट बालकों के आत्मसम्मान एवं आत्मविश्वास में सुधार होता है तथा उनके सामाजिक कौशल एवं सहकर्मी सम्बन्धों में भी सुधार होता है।

6. छात्रों की विभिन्न अवधारणाओं, विचारों को समझने में आने वाली कठिनाईयों को दूर करना।

6.6.4 सहभागी / सह–शिक्षण की सीमाएँ

सहभागी / सह–शिक्षण में जहाँ अनेक अच्छाइयाँ विद्यमान हैं, वहीं इसकी निम्नलिखित सीमाएँ भी हैं जो छात्रों के अधिगम को प्रभावित करती है–

1. सहभागी शिक्षण शिक्षकों को भिन्न–भिन्न शिक्षण शैलियों से परिचित कराता है जबकि छात्रों के अधिगम को कठिन कर देता है।

2. शिक्षकों को इसके लिए अत्यधिक योजना और तैयारी करनी होती है इसलिए शिक्षण के लिए पर्याप्त समय नहीं मिलता है।

3. शिक्षकों में आपसी मन–मुटाव तथा समन्वय का न होने के कारण शिक्षण कार्य में बाधा पहुँचती हैं।

4. विशिष्ट छात्रों तथा सामान्य छात्रों में सहयोग की कमी के कारण संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होने लगता है।

5. विशिष्ट बालकों की शिक्षा को लेकर शिक्षकों तथा अन्य कर्मचारियों का दृष्टिकोण पूर्वाग्राही होता है जिससे शिक्षण प्रभावित होता है।

6.7 सारांश

समूह अधिगम द्वारा छात्रों की अधिगम के प्रति धारणा में सुधार आता है तथा उनमे अलगाव की भावना में कमी आती है। समूह अधिगम में एक क्रम में प्रकरण सम्बन्धी विचारों को प्रस्तुत करने का आयोजन किया जाता है। किसी विशिष्ट प्रकरण पर कोई भी व्यक्ति अपने विचारों को प्रस्तुत कर सकता है। भौतिकीय विज्ञान में समूह अधिगम, सामूहिक चर्चा प्रविधि की विशेषताएँ, सामूहिक चर्चा प्रविधि के उद्देश्य, सामूहिक चर्चा प्रविधि की प्रक्रिया, सामूहिक चर्चा प्रविधि के समय ध्यान देने योग्य बातें, दल शिक्षण, दल शिक्षण की विशेषताएँ, दल शिक्षण के लाभ, दल शिक्षण की सीमाएँ, भौतिकीय विज्ञान में सहयोगी अधिगम विधियाँ, जिग्सॉ, सोचिए, जोड़े–बनाइए, साझा कीजिए (थिंक, पेयर, शेयर), तीन चरण साक्षात्कार, राउंड रोबिन, तीन–मिनट में पुनरीक्षण, संख्यांकित सिर एक साथ, टोली–जोड़ा–एकल (टीम पेयर सोलो), ज्ञानी को घेरो (सर्किल द सेज), सहभागी शिक्षण, सहभागी के उद्देश्य, प्रभावी सहभागी शिक्षण के तरीके, सहभागी शिक्षण के लाभ और सहभागी की सीमाएँ के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

6.8 अभ्यास प्रश्न

1. भौतकीय विज्ञान में समूह अधिगम को परिभाषित कीजिए?

2. भौतकीय विज्ञान में समूह अधिगम का विस्तार से वर्णन कीजिए?

3. दल शिक्षण के अर्थ को स्पष्ट कीजिए?

4. दल शिक्षण का विस्तार से वर्णन कीजिए?

5. भौतिकीय विज्ञान में सहयोगी अधिगम के प्रकारों का वर्णन कीजिए?

6. भौतिकीय विज्ञान में सहयोगी अधिगम विधियों का वर्णन कीजिए?

6.9 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में भौतकीय विज्ञान में समूह अधिगम पर चर्चा करेगें।

2. छात्राध्यापक आपस में दल शिक्षण पर चर्चा करेंगें।

3. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान में सहयोगी अधिगम के प्रकारों पर चर्चा करेंगें।

6.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. शिक्षण सीखने के लिए प्रेरणा, पथ प्रदर्शन, पथ निर्देशन एवं प्रोत्साहन है।

2. शिक्षण एक त्रिध्रुवीय प्रक्रिया है।

3. शिक्षण द्वारा छात्रों में कौशल क्षमता का विकास किया जाता है।

4. शिक्षण उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है जिसके द्वारा उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की पूर्ति की जा सकती है।

5. छात्रों के ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक पक्षों को विकसित करने में शिक्षण से सहायता मिलती है।

6. शिक्षण प्रक्रिया में 'क्रिया पद्धति', 'खेल पद्धति' तथा 'करके सीखो' पद्धति अपनाया जाता है।

7. प्रदर्शन विधि में छात्र सक्रिय रहते है तथा प्रश्नोत्तरी के माध्यम से पाठ का विकास होता है।

8. शिक्षण की प्रदर्शन विधि में शिक्षक को पहले से पूर्वाभ्यास कर लेना चाहिए।

9. खोज विधि को आर्मस्ट्रांग ने प्रतिपादित किया।

10. पुस्तक 'हाउ वी थिंक' के लेखक जॉन डीवी है।

11. जॉन डीवी ने सीखने में अनुभव द्वारा, सहभागिता पर बल दिया है।

12. समूह अधिगम का अर्थ है वह सभा जिसमें एक प्रकरण पर वक्तागण अपने विचार प्रस्तुत करते हैं।

13. समूह अधिगम ऐसा समूह है जिसमें श्रोताओं को उत्तम विचारों से अवगत कराया जाता है। श्रोतागण प्रकरण सम्बन्धी सामान्य तैयारी में अपने कुशल विचारों को सम्मिलित करते हैं और नीति, मूल्यों एवं बोधगम्यता के सम्बन्ध में निर्णय लेते हैं।'

14. दल शिक्षण का प्रारम्भ हार्वर्ड विश्वविद्यालय में प्रारम्भ किया गया।

15. दल शिक्षण संगठन का एक स्वरूप है जिसमें कई शिक्षक अपने स्त्रोतो, अभिरूचियों तथा योग्यताओं एवं दक्षताओं को एकत्रित करते है और छात्रों की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षकों की टोली द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। वे विद्यालय की सुविधाओं का समुचित उपयोग करते है।

16. सहभागी शिक्षण का आशय उस शिक्षण प्रक्रिया से है जिसमें शिक्षक एवं शिक्षार्थी की पूर्ण सहभागिता निश्चित होती है तथा सहभागिता द्वारा ही शिक्षण प्रक्रिया प्रभावशाली एवं उद्देश्यपूर्ण बनती है।

17. स्टेशन शिक्षण सहभागी शिक्षण प्रयुक्त होता है।

संदर्भ ग्रंथ

- **बहला, मुकुट बिहारी एवं अग्रवाल संजय (2011).** *सामान्य विज्ञान शिक्षण,* अग्रवाल पब्लिकेशनन्स, आगरा।
- **कुमार, दीपक, (2016).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* ओसीन पब्लिकेशन वाराणसी।
- **कुलश्रेष्ठ, एस. पी. (2009).** *शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार,* 9वाँ संस्करण, आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली।
- **मंगल, एस.के. (2002).** *भौतिक एवं जीव विज्ञान शिक्षण,* आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली।
- **मंगल, एस.के. (2008).** *साधारण विज्ञान शिक्षण,* आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली।
- **सिंह, बैस नेहरू (1999).** *शैक्षिक तकनीकी एवं कक्षा–कक्ष प्रबन्धन,* पाल पब्लिशर्ज, अमृतसर।
- **सिडाना, अशोक कुमार एवं सिडाना किरण (2002).** *विज्ञान शिक्षण, विषय वस्तु एवं शिक्षण विधियॉं,* विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
- **भौतिक विज्ञान का शिक्षणशास्त्र (2011).** शिक्षक–शिक्षा विभाग, शिक्षा विद्या शाखा, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी।
- **पुरोहित एवं जगदी□ा (1996).** *शिक्षण के लिए आयोजन,* हिन्दी ग्रन्थ अकादमी नई दिल्ली।
- **श्रीवास्तव, पी.सी. (2018).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
- **रायजादा, रमाकर (2011).** *सामाजिक विज्ञान शिक्षण इक्कीसवीं सदी के सन्दर्भ में,* प्रवाचक क्षेत्रिय शिक्षा संस्थान–भोपाल।

- **शर्मा, एच. एस. एवं शर्मा पी. के. (1991).** *विज्ञान शिक्षण,* राधा प्रकाशन मंदिर, आगरा।
- **शर्मा, नरेन्द्र कुमार (1992).** *विज्ञान शिक्षण,* साहित्यागार, धामाणी मार्केट की गली, चौड़ा रास्ता, जयपुर।
- **शर्मा, आर. के. एवं दुबे, एस. के. (2014).** *भाषायी समझ प्रारम्भिक साक्षरता एंव हिन्दी शिक्षण,* राधा प्रकाशन मन्दिर प्रा. लि. आगरा।
- **शर्मा, आर.सी. (2008).** *आधुनिक विज्ञान शिक्षण,* धनपत राय एंड सन्स, नई दिल्ली।
- **सक्सेना, राधारानी (2006).** *नवाचार शिक्षण पद्धतियाँ,* शिक्षण आयोजन, आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली।
- **सोनी, अनिता त्यागी एवं ओंकार सिंह (2007).** *जीव विज्ञान शिक्षण,* अरिहंत शिक्षा प्रकाशन, जयपुर।
- **सुन्द्रियाल, सुनीता (2019).** *टीचिंग ऑफ फिजिकल साइंस,* अग्रवाल पब्लिकेशन, कानपुर।
- **सूद, जे.के. (2010).** *विज्ञान शिक्षण,* अग्रवाल पब्लिकेशनन्स, आगरा।
- **सूद, जे.के. (2017).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* अग्रवाल पब्लिकेशन, कानपुर।
- **चौहान, रीता (2016).** *हिन्दी शिक्षण,* अग्रवाल पब्लिकेशनन्स, आगरा।
- **नेगी, जे.एस. (2020).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* श्री विनोद पुस्तक मंदिर, वाराणसी।
- **अग्रवाल, वी.पी. सिडाना, किरण एवं पारीक कल्पना (2006).** *विज्ञान शिक्षण,* शिक्षा प्रकाशन, जयपुर।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

B.Ed.-E-42/B.Ed-SE-42

भौतिकीय विज्ञान का अध्यापन विज्ञान

खण्ड – 3

भौतिकीय विज्ञान की शिक्षण रणनीतियाँ–II

इकाई – 7 91

भौतिकीय विज्ञान अधिगम में पाठ्य–सहगामी क्रियाएं एवं गैर–औपचारिक उपागम

इकाई – 8 107

भौतिकीय विज्ञान में अभिक्रमित अनुदेशन

इकाई – 9 117

भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नीवन उपागम

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रोफेसर सीमा सिंह	उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज कुलपति

विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर पी० के० स्टालिन	निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर छत्रसाल सिंह	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर के० एस० मिश्रा	पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर धनन्जय यादव	विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर मीनाक्षी सिंह	आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ० जी० के० द्विवेदी	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ० दिलीप कुमार सिंह	सहायक आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, सी0एम0पी0डिग्री कॉलेज, प्रयागराज (इकाई 1,2,3,4,5,6,7,8,9,10,11,12,13,14,15)

सम्पादक

प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परिमापक

प्रोफेसर नागेन्द्र कुमार	आचार्य, शिक्षा संकाय, बी0एच0यू0 वाराणसी

समन्वयक

डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक

कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

ISBN: 978-81-963573-2-0

Registrar, U. P. Rajarshi Tandon Open University, Prayagraj

©UPRTOU, 2023. Pedagogy of Biological Science is made available under a Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0

http://creativecommons.org/licences/by-sa/4.0

खण्ड परिचय

भौतिकीय विज्ञान की रणनीतियाँ–II

प्रस्तुत खण्ड में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण हेतु संव्यूहन की चर्चा करेगें। प्रस्तुत खण्ड में भौतिकीय विज्ञान अधिगम में पाठ्य–सहगामी क्रियाएं एवं गैर–औपचारिक शिक्षण अधिगम, भौतिकीय विज्ञान में अभिक्रमित अनुदेशन भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम का विवेचन करेगें। भौतिकीय विज्ञान शिक्षण हेतु संव्यूहन की चर्चा तीन इकाईयों में विभाजित कर करेगे, जिनका विवरण इस प्रकार है–

इकाई–7 : प्रस्तुत इकाई में भौतिकीय विज्ञान अधिगम में पाठ्य–सहगामी क्रियाएं एवं गैर–औपचारिक शिक्षण अधिगम के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में भौतिकीय विज्ञान अधिगम में पाठ्य–सहगामी क्रियाएं, भौतिकीय विज्ञान क्लब, भौतिकीय विज्ञान क्लब के उद्देश्य, भौतिकीय–विज्ञान क्लबों का संगठन, भौतिकीय विज्ञान मेला, भौतिकीय विज्ञान मेला के उद्देश्य, भौतिकीय विज्ञान मेलों का महत्व, भौतिकीय विज्ञान मेलों का आयोजन, भौतिकीय विज्ञान मेले के आयोजन संबंधी सुझाव, भौतिकीय विज्ञान भ्रमण, भौतिकीय विज्ञान भ्रमण के उद्देश्य, भौतिकीय विज्ञान भ्रमण का महत्व, भौतिकीय विज्ञान भ्रमण का आयोजन, भ्रमण के संभावित स्थल, भौतिकीय विज्ञान भ्रमणों के लिए सावधानियां, गैर–औपचारिक भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम, घरेलू उपलब्ध सामग्री द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम, बेकार सामग्री द्वारा शिक्षण अधिगम, स्थानीय संसाधन व स्थानीय परिवेश के भ्रमण आदि द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम, खेलों, पहेली, मिलान, प्रश्नोत्तरी, प्रतियोगिता आदि द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम, अभिनय एवम् कठपुतलियों द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम और विभिन्न क्षेत्रों में प्रोत्साहन प्रतियोगिता अथवा मेलों द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई–8 : प्रस्तुत इकाई में भौतिकीय विज्ञान में अभिक्रमित अनुदेशन के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में भौतिकीय विज्ञान में अभिक्रमित अनुदेशन, अभिक्रमित अनुदेशन के सिद्धांत, अभिक्रमित अनुदेशन के प्रकार, रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन, रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की संरचना, रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन के निर्माण की विभिन्न अवस्थाएं, रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की सीमाएं, शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन, शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन के दोष, मैथेटिक्स अभिक्रमित अनुदेशन, मैथेटिक्स अभिक्रमित अनुदेशन के दोष, स्वनिदेशित अभिक्रमित अनुदेशन और कम्प्यूटर आधारित अभिक्रमित अनुदेशन के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई–9 : प्रस्तुत इकाई में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम, केस स्टडी विधि, डाल्टन योजना, निगमनात्मक तथा आगमनात्मक, संश्लेषणात्मक तथा विश्लेषणात्मक, वस्तुविधि, दृष्टांत विधि, कथन विधि एवं व्याख्यान विधि, करके सीखना, शोध विधि, वर्धा योजना या बुनियादी तालीम, प्रश्नोत्तर विधि (सुकराती विधि), परिचर्चा विधि, सीखने के स्टेशन, ओपन स्पेस तकनीक, क्लोज टेस्ट, Wh-टेम्पलेट, क्रोनो–लॉग, माइन्ड मैप, वेब थीम, अभिनय, शैक्षिक खेल, श्लोक सूत्र ह्यूरेस्टिक विधि, खेल/गतिविधि प्रविधि और रुचिपूर्ण/आनन्ददायी शिक्षण के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई–7 भौतिकीय विज्ञान अधिगम में पाठ्य–सहगामी क्रियाएं एवं गैर–औपचारिक उपागम

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 भौतिकीय विज्ञान अधिगम में पाठ्य–सहगामी क्रियाएं

7.4 भौतिकीय विज्ञान क्लब

- 7.4.1 भौतिकीय विज्ञान क्लब
- 7.4.2 भौतिकीय–विज्ञान क्लबों का संगठन

7.5 भौतिकीय विज्ञान मेला

- 7.5.1 भौतिकीय विज्ञान मेला के उद्देश्य
- 7.5.2 भौतिकीय विज्ञान मेला का महत्व
- 7.5.3 भौतिकीय विज्ञान मेलों का आयोजन
- 7.5.4 भौतिकीय विज्ञान मेले के आयोजन संबंधी सुझाव

7.6 भौतिकीय विज्ञान भ्रमण

- 7.6.1 भौतिकीय विज्ञान भ्रमण के उद्देश्य
- 7.6.2 भौतिकीय विज्ञान भ्रमण का महत्व
- 7.6.3 भौतिकीय विज्ञान भ्रमण का आयोजन
- 7.6.4 भ्रमण के संभावित स्थल
- 7.6.5 भ्रमणों के दोष या हानियां
- 7.6.6 भौतिकीय विज्ञान भ्रमणों के लिए सावधानियां

7.7 गैर–औपचारिक भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम

- 7.7.1 घरेलू उपलब्ध सामग्री द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम
- 7.7.2 बेकार सामग्री द्वारा शिक्षण अधिगम
- 7.7.3 स्थानीय संसाधन व स्थानीय परिवेश के भ्रमण आदि द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम
- 7.7.4 खेलों, पहेली, मिलान, प्रश्नोत्तरी, प्रतियोगिता आदि द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम
- 7.7.5 अभिनय एवं कठपुतलियों द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम

7.7.6 विभिन्न क्षेत्रों में प्रोत्साहन प्रतियोगिता अथवा मेलों द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम

7.8 सारांश

7.9 अभ्यास प्रश्न

7.10 चर्चा के बिन्दु

7.1 प्रस्तावना

पाठ्यक्रम के अंतर्गत विद्यालय के विषयों के शिक्षण से छात्रों के ज्ञानात्मक पक्ष का विकास अधिक होता है। लेकिन भावात्मक और क्रियात्मक पक्षों का विकास नहीं हो पाता, इसलिए इन पक्षों के विकास के लिए पाठ्य सहगामी क्रियाओं का सहारा लिया जाता है। पाठ्य सहगामी क्रियाएं छात्रों को अच्छा नागरिक बनने का प्रशिक्षण देती हैं । ऐसी गतिविधियाँ विद्यार्थियों को स्कूल में व्यस्त रखती है। पाठ्य सहगामी क्रियाएं शिक्षण में श्रेष्ठ स्थान रखती है और विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास में पूरा–पूरा योगदान देती है। इनमें शामिल होकर छात्र अपने गुणों की क्षमता से आगे निकलकर विकास करता है। उनमें आत्मनिर्भरता आती है। वे किसी भी कार्य को पूर्ण करने के लिए सक्षम बनतें हैं।

प्रस्तुत इकाई में हम भौतिकीय विज्ञान अधिगम में पाठ्य–सहगामी क्रियाएं, भौतिकीय विज्ञान क्लब, भौतिकीय विज्ञान क्लब के उद्देश्य, भौतिकीय–विज्ञान क्लबों का संगठन, भौतिकीय विज्ञान मेला, भौतिकीय विज्ञान मेला के उद्देश्य, भौतिकीय विज्ञान मेला का महत्व, भौतिकीय विज्ञान मेलों का आयोजन, भौतिकीय विज्ञान मेले के आयोजन संबंधी सुझाव, भौतिकीय विज्ञान भ्रमण, भौतिकीय विज्ञान भ्रमण के उद्देश्य, भौतिकीय विज्ञान भ्रमण का महत्व, भौतिकीय विज्ञान भ्रमण का आयोजन, भ्रमण के संभावित स्थल, भौतिकीय विज्ञान भ्रमणों के लिए सावधानियां, गैर–औपचारिक भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम, घरेलू उपलब्ध सामग्री द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम, बेकार सामग्री द्वारा शिक्षण अधिगम, स्थानीय संसाधन व स्थानीय परिवेश के भ्रमण आदि द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम, खेलों, पहेली, मिलान, प्रश्नोत्तरी, प्रतियोगिता आदि द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम, अभिनय एवम् कठपुतलियों द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम और विभिन्न क्षेत्रों में प्रोत्साहन प्रतियोगिता अथवा मेलों द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको भौतिकीय विज्ञान अधिगम में पाठ्य–सहगामी क्रियाएं एवं गैर–औपचारिक शिक्षण अधिगम को समझने में सुविधा होगी।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेगें कि–

- पाठ्य–सहगामी क्रियाओं को परिभाषित कर सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान अधिगम में पाठ्य–सहगामी क्रियाओं का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान क्लब का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान मेला का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।

- भौतिकीय विज्ञान भ्रमण का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
- गैर–औपचारिक भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम विधियों को जान सकेंगे।
- गैर–औपचारिक भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम विधियों का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।

7.3 भौतिकीय विज्ञान अधिगम में पाठ्य–सहगामी क्रियाएं

पाठ्यक्रम के साथ जो भी सहायक क्रियाएं विद्यालय में विद्यार्थियों को उपलब्ध करवाई जाती हैं, उन्हें पाठ्य–सहगामी क्रियाएं कहा जाता है। पाठ्य–सहगामी क्रियाए विज्ञान शिक्षा की रीढ़ की हड्डी के समान हैं। इनके बिना पुस्तकों से प्राप्त शिक्षा को अधूरा समझा जाता है। विभिन्न पाठ्य–सहगामी क्रियाएं विज्ञान विषय की नीरसता और क्लिष्टता को दूर करके उसे अधिक सार्थक बनाती हैं और विद्यार्थियों की विज्ञान विषय में रुचि जागृत करती हैं।

भौतिक विज्ञान से सम्बन्धित पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भौतिकीय विज्ञान क्लब, भौतिकीय विज्ञान मेले, वैज्ञानिक रुचियां एवं भौतिकीय विज्ञान भ्रमण आदि सम्मिलित होती हैं। जिस प्रकार सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली में सहगामी क्रियाओं का विशेष महत्व है उसी प्रकार भौतिक–विज्ञान मे भी सहगामी क्रियाओं का विशेष महत्व होता है। इन्हीं सहगामी क्रियाओं में भौतिकीय विज्ञान क्लब, भौतिकीय विज्ञान मेले आदि शामिल है। भौतिकीय–विज्ञान में सहगामी क्रियाओं द्वारा विद्यार्थी को आगे बढ़ने का अवसर मिलता है तथा उसमें आत्म विश्वास पैदा होता है।

7.4 भौतिकीय विज्ञान क्लब

प्रत्येक विद्यार्थी की अपनी विशेषताएं होती है। सभी में व्यक्तिगत विभिन्नताओं के परिणाम स्वरूप विभिन्न योग्यताओं के विकास के लिए अवसरों की रचना करना अति आवश्यक है वरन व्यक्ति की ये विशेषताएं निरर्थक हो जाती है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए 'भौतिकीय विज्ञान क्लब' से उपयुक्त स्थान नहीं हो सकता। इन भौतिकीय विज्ञान क्लबों में विद्यार्थी की ओर व्यक्तिगत ध्यान दिया जा सकता है तथा 'करके सीखने' के सिद्धान्त का पालन भी संभव होता है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 1: पाठ्य सहगामी क्रिया को परिभाषित कीजिये?

....

....

प्रश्न 2: पाठ्य सहगामी क्रिया द्वारा किसका विकास किया जाता है?

....

....

प्रश्न 3: विज्ञान क्लब में कौन–कौन से पदाधिकारी सम्मिलित रहते है?

....

....

7.4.1 भौतिकीय विज्ञान क्लब के उद्देश्य

विद्यालयों में भौतिक विज्ञान क्लब के निर्माण के निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं।

1. वैज्ञानिक नेतृत्व तथा भौतिकीय विज्ञान में रुचि को विकसित करना।
2. भौतिक–विज्ञान सम्बन्धी कार्यों में दक्षता प्रदान करना तथा विद्यार्थियों में आत्म विश्वास जगाना।
3. भौतिकीय विज्ञान से सम्बन्धित व्यवसायों के प्रति विद्यार्थियों में उचित दृष्टिकोण का विकास करना।
4. भौतिकीय–विज्ञान सम्बन्धी समस्याओं को हल करने में सहायता प्रदान करना।
5. विद्यार्थियों को अपने घरों तथा घरों के समीप के स्थानों को स्वच्छ रखना सिखाना।
6. विद्यार्थियों में स्व–शासन का विचार जागृत करना।
7. नियमित समय सारणी में कई बार जटिल प्रयोगों को करना संभव नहीं होता ऐसे प्रयोगो को भौतिकीय विज्ञान–क्लबों के माध्यम से नियमित समय सारणी के अतिरिक्त करना।
8. विद्यार्थियों में भौतिकीय–विज्ञान संबंधी कार्यों का विकास करना।
9. भौतिकीय–विज्ञान सम्बन्धी विभिन्न समस्यात्मक परिस्थितियों में बुद्धि का स्वतन्त्र प्रयोग करना सिखाना।
10. विद्यार्थियों में सद्‌भाव जागृत करना।
11. विद्यार्थियों को आधुनिक भौतिकीय–विज्ञान संबंधी गतिविधियों तथा आविष्कारों से परिचित कराना जो मानव जीवन को प्रभावित कर रहे हों।
12. भौतिकीय–विज्ञान के मूल सिद्धान्तों के अन्तर्गत प्रयोगिक कार्य करने के लिए स्वतंत्रता अवसर प्रदान करना।
13. विद्यार्थियों में खोज तथा निर्माण की भावना विकसित करना।
14. भौतिकीय–विज्ञान सम्बन्धी मेले, प्रर्दशनियों, यात्राओं, आदि का संगठन एवं प्रबन्ध करना।
15. विभिन्न वैज्ञानिक परिषदों तथा वैज्ञानिक क्लबों के साथ मिल–जुल कर कार्य करना।

7.4.2 भौतिकीय–विज्ञान क्लबों का संगठन

स्कूल में भौतिकीय–विज्ञान क्लबों के संगठन के लिए विशेष रूपरेखा की ओर ध्यान देना आवश्यक है। तभी ये क्लब ठीक ढ़ंग से कार्य कर पाते हैं अन्यथा इसका योगदान नगण्य ही रहता है। प्रत्येक भौतिकीय–विज्ञान क्लब का अपना संविधान होना आवश्यक है। प्रत्येक संविधान में निम्नलिखित बातों की ओर ध्यान देना आवश्यक है। क्लब का नाम, उद्देश्य, कार्य क्षेत्र, सदस्य, पदाधिकारी, कोष अथवा धन–व्यवस्था, क्लब की बैठके और समय आदि का निर्धारण।

1. क्लब का नाम (Name of the club)– स्कूल में स्थापित की गई क्लब का नाम क्या हो, सबसे पहले इस पर विचार किया जाना चाहिए (जैसे भौतिकीय–विज्ञान क्लब)

2. उद्देश्य (objectives)– संस्था या क्लब की स्थापना से पूर्व उस संस्था के उद्देश्य का निर्धारण करना चाहिए। उदाहरण के लिए समुदाय के लोगों को भौतिकीय–विज्ञान सम्बन्धी नये आविष्कारों के बारे में बताना तथा समुदाय के हितों के लिए समुदाय संबंधी योजनाएँ बनाना तथा उन्हें लागू करना। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों को भौतिकीय–विज्ञान संबंधी वैज्ञानिक विवरण लिखना सिखाना, भौतिकीय–विज्ञान संबंधी पत्रिकाओं से परिचित करवाना तथा भौतिकीय–विज्ञान संबंधी सामग्री पर विचार करना आदि।

3. कार्यक्षेत्र (Area)– इन क्लबों का कार्य क्षेत्र क्या हो इसकी सीमाएँ भी तय करनी पड़ेगी। सामान्यतः इन क्लबों का कार्य क्षेत्र विद्यालय तथा समुदाय तक ही होता है।

4. सदस्यता (Membership)– इस पद में यह तय किया जाता है कि इस विज्ञान–क्लब का सदस्य कौन बन सकता है? अर्थात् सदस्यता के लिए आवश्यक शर्ते तय की जाती हैं। प्रायः स्कूल के विद्यार्थी ही इस क्लब के सदस्य होते हैं। इस क्लब के सदस्यों को निम्नलिखित वर्गों में बांटा जा सकता है–

   (a) सक्रिय सदस्य– जैसे भौतिकीय–विज्ञान पढ़ने वाले सभी विद्यार्थी।

   (b) सामान्य सदस्य– अन्य विज्ञानों के छात्रों को भी इस क्लब का सदस्य सामान्य सदस्य के रूप में बनाया जा सकता है।

   (c) जीवन सदस्य– ऐसे सदस्यों में वे लोग होते हैं जो भौतिकीय–विज्ञान में रुचि रखते हों।

   (d) आदरणीय सदस्य– भौतिकीय–विज्ञान पढ़ाने वाले विद्यालय के पुराने विद्यार्थी इस क्लब के सदस्य हो सकते है।

5. पदाधिकारी (Office Bearers) – इस क्लब के कुछ पदाधिकारी भी अवश्य होंगे जो कि निम्नलिखित है–

   (a) अध्यक्ष

   (b) चेयरमैन

   (c) सचिव, कोषाध्यक्ष

   (d) पुस्तकालयाध्यक्ष

   (e) प्रचार अधिकारी आदि।

उपरोक्त पदाधिकारियों के कर्तव्यों को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाना चाहिए।

6. कोष (Treasuary) – क्लब के विभिन्न कार्यों के लिए इकट्ठे किये गये धन का लेखा–जोखा रखना अनिवार्य होता है। क्लब के कोषों में किन–किन लोगों का योगदान रहा है। उसका रिकार्ड भी रखना आवश्यक होता है।

7. क्लब की बैठकें तथा स्थान (Meeting and place) –क्लब की मीटिगं कितने समय के पश्चात हो, कहां पर तथा कब हो? इसके बारे में निर्देश कौन जारी करे? इत्यादि।

8. क्रियाएं (Activities) –भौतिकीय विज्ञान क्लब निम्नलिखित क्रियाएं कर सकता है।

(a) मीटिगं करना।

(b) मेले तथा प्रदर्शनियों का आयोजन करना।

(c) भ्रमणों की व्यवस्था करना।

(d) संग्रहालय।

(e) वाद–विवाद भाषण तथा निबन्ध आदि प्रतियोगिताएं करवाना।

(f) बुलेटिन बोर्ड लगवाकर उनका उचित प्रयोग करना।

(g) भौतिकीय वैज्ञानिक के जीवन व कार्यों के विवरण तैयार करवाना।

(h) किसी भौतिकीय विज्ञान संबंधी पत्रिका का प्रकाशन करना।

(i) प्रसार–भाषणों की व्यवस्था करना।

(j) भौतिकीय विज्ञान दिवसों का आयोजन करना।

(k) भौतिकीय विज्ञान संग्रहालय के लिए वस्तुएं एकत्रित करना।

(l) भौतिकीय विज्ञान संबंधी निबन्धों की प्रतियोगिताएं करवाना।

(m) भौतिकीय विज्ञान संबंधी चार्ट, मॉडल निर्माण प्रतियोगिताएँ आयोजित करना।

(n) पर्यटन योजनाएँ बनाना।

(o) भौतिकीय विज्ञान विशेषज्ञों के साथ वार्ताएं आयोजित करना।

(p) स्लाइड तथा फिल्म– स्ट्रिप्स का निर्माण करना।

(q) भौतिकीय विज्ञान उपकरण सरंक्षण।

इस प्रकार हम देखते है कि भौतिकीय विज्ञान क्लब किस प्रकार विद्यार्थी तथा शिक्षकों के लिए सहायक हो सकते हैं। इन क्लबों में उन्हीं विद्यार्थी तथा शिक्षकों को सम्मिलित किया जाना चाहिए जो वास्तव में ही उत्साही हों और भौतिकीय विज्ञान विषय के प्रति समर्पित हों। समर्पण की भावना से ही क्लबों की क्रिया कलापों को व्यावहारिक रूप दिया जा सकता है। भौतिकीय विज्ञान क्लबों को हाई तथा माध्यमिक विद्यालयों में लोकप्रिय बनाने के लिए इनका उचित प्रकार से संगठन करना चाहिए तथा इनके लाभों से विद्यार्थियों को अवगत कराना चाहिए।

7.5 भौतिकीय विज्ञान मेला

स्कूलों में भौतिकीय विज्ञान मेलों का आयोजन बहुत लाभकारी सिद्ध हो रहा है। भौतिकीय विज्ञान की सभी शाखाओं को समन्वित करके इन भौतिकीय विज्ञान मेलों का आयोजन किया जा सकता है। इन मेलों में विद्यार्थियों द्वारा तैयार की गई वस्तुओं और उनकी क्रियाओं का प्रदर्शन किया जा सकता है। इन मेलों में भौतिकीय विज्ञान विशेषज्ञों की वस्तुएँ, फिल्म शो, वाद–विवाद प्रतियोगिताएँ आदि कार्यक्रम सम्मिलित किए जा सकते हैं। इन मेलों की सफलता के लिए शिक्षक तथा विद्यार्थियों को मिलकर सहयोग करना चाहिए। इन मेलों में भौतिकीय विज्ञान व अन्य भौतिकीय विज्ञानों में प्रयोगों की विधियों का

भली भांति ज्ञान हो जाता है। इन्हीं मेलों द्वारा माता–पिता तथा समुदाय के अन्य लोगों को भौतिकीय विज्ञान के बारे में भी ज्ञान मिलता है। इन मेलों के अवसरों पर चन्दा इकट्ठा करने का कार्य भी किया जा सकता है। स्कूल के अधिकारीगण समुदाय के लोगों के सम्मुख अपनी आवश्यकताएँ प्रस्तुत करके उन्हें चन्दा इकट्ठा करने के लिए प्रार्थना कर सकते हैं। इस कार्य में शिक्षक–एसोसिएशन भी अपना योगदान दे सकती है।

इन भौतिकीय विज्ञान मेलों का आयोजन राज्य सरकारें और सरकारी संस्थाएँ करती है। सरकारी आयोजन करने वाली संस्थाओं में एन.सी.ई.आर.टी. (N.C.E.R.T) प्रमुख है। इन भौतिकीय विज्ञान मेलों में विद्यार्थियों के विभिन्न कौशलों के विकास के लिए पर्याप्त अवसर होने चाहिए। इनकी योजना और प्रक्रिया बहुत विस्तृत होनी चाहिए। आर्थिक तंगी नहीं होनी चाहिए। इन मेलों के लिए बनाई गई विभिन्न कमेटियों के कार्यों को उचित ढंग से लागू किया जाना चाहिए। इन मेलों में प्रदर्शित वस्तुओं का उचित मूल्यांकन होना चाहिए और उन पर निर्णय दिया जाना चाहिए। देश तथा राज्यों में एन.सी.ई.आर.टी. (N.C.E.R.T.) इन मेलों का जिला स्तर पर, क्षेत्रीय स्तर पर, राज्य स्तर पर और राष्ट्रीय स्तर पर आयोजन करने के लिए आर्थिक सहायता देती है।

7.5.1 भौतकीय विज्ञान मेला के उद्देश्य

1. विद्यार्थियों को अपने विचारों को प्रयोग करने और कक्षा अधिगम को अधिक सृजनात्मक ढंग से प्रयोग करने के लिए प्रोत्साहित करना।

2. विद्यार्थियों को उनके सहपाठियों की उपलब्धियों को देखने का अवसर प्रदान करने का प्रयत्न करना जिसमें कि उन्हें अपनी परियोजना शुरु करने के लिए अभिप्रेरणा मिल सके।

3. भौतिकीय विज्ञान सम्बन्धी क्रियाओं को विद्यार्थियों में अधिक लोकप्रिय बनाना।

4. प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करना।

5. भारत में भविष्य के लिए वैज्ञानिकों की खोज करना।

6. क्षेत्र के लोगों को स्कूल के निकट लाना तथा शिक्षकों और विद्यार्थियों को मिलाना।

7.5.2 भौतिकीय विज्ञान मेला का महत्व

1. विद्यार्थी सामूहिक परियोजनाओं और गतिविधियों में भाग लेते हैं और वे कई प्रकार की बातें सीखते है जो कि कक्षा में नहीं सीखी जा सकती।
2. विद्यार्थी केवल बौद्धिक रूप से ही विकसित नहीं होते, बल्कि वे सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और शैक्षिक रूप से भी विकसित होते हैं।
3. इन मेलों से विद्यार्थियों की रचनात्मक, जिज्ञासा और उपलब्धि की प्रवृत्तियों को संतुष्टि मिलती है।
4. विद्यार्थियों की प्रतिभाओं को मान्यता और प्रोत्साहन मिलता है।
5. विद्यार्थियों में वैज्ञानिक खोजों के प्रति रुचि का विकास होता है और वैज्ञानिक प्रतिभा की खोज की जा सकती है।

7.5.3 भौतिकीय विज्ञान मेलों का आयोजन

भौतिकीय विज्ञान मेलों के आयोजन की क्रिया विद्यार्थी तथा शिक्षक की संयुक्त क्रिया होनी चाहिए। प्रत्येक पहलू को अच्छी तरह सोच लेना चाहिए। इन मेलों के आयोजन के लिए निम्नलिखित प्रक्रिया का अनुसरण किया जाना चाहिए।

1. **योजना (Planning)** मेले को शुरु करने से पहले समुचित योजना बना लेना अति आवश्यक है। मेले की योजना में निम्नलिखित बातें सम्मिलित की जा सकती है।

   (a) धन की समस्या।

   (b) स्थान, समय और अवधि का निर्णय।

   (c) अन्य कारक और अवधि सुविधाएँ।

   (d) मेले के उद्देश्यों और लक्ष्यों का निर्धारण।

   (e) मेले की सीमाएँ (Scope of Fair)

2. **कार्य विभाजन (Distribution of work)**– मेले की योजना बनाने के पश्चात् विभिन्न कार्यों को अन्य व्यक्तियों और समूहों में बांट देना चाहिए। मेले के विभिन्न अनुभागों के कार्यों की देखभाल के लिए विभिन्न समितियों की रचना की जानी चाहिए। ये सभी कमेटियाँ अध्यापक इन्चार्ज और विद्यार्थियों के साथ विचार–विमर्श के आधार पर कार्य करें। कार्य विभाजन के समय विद्यार्थियों की रुचियों की ओर अवश्य ध्यान देना चाहिए।

3. **योजना को लागू करना (Execution)–** भौतिकीय विज्ञान मेले के लिए विभिन्न कमेटियां पूर्ण योजना को लागू करें। मेले की व्यवस्था की जाये तथा कार्यक्रम जैसे, फिल्में, वार्ताएं, चार्ट, संग्रह, मॉडलों आदि के प्रदर्शन को संगठित किया जाए भौतिकीय विज्ञान मेले में हर चीज स्वयं में स्पष्ट होनी चाहिए। इन वस्तुओं पर ठीक ढंग से लेबल लगे होने चाहिए और उन पर पूरा विवरण लिखा जाना चाहिए। चुने हुए विद्यार्थियों को विभिन्न वस्तुओं और प्रयोगों का इन्चार्ज बनाया जाना चाहिए। दूसरे स्कूलों तथा समुदाय के लोगों को मेलों में आमन्त्रित किया जाना चाहिए।

4. **निर्णय (Judging)** –मेले में प्रस्तुत वस्तुओं की विभिन्न श्रेणियों का मूल्यांकन करके उन पर निर्णय लें। इस कार्य के लिए समुदाय के लोगों में से, कॉलेज के प्रोफेसरों में से तथा शिक्षकों के अन्य वर्गों में से निर्णायकों को नियुक्त किया जा सकता है। मूल्यांकन के लिए उचित नियमावली पहले से ही बना लेनी चाहिए इस नियमावली को उपयुक्त नोटिस–बोर्ड पर लगा दिया जाए तो और भी उत्तम होगा। उनमें वैज्ञानिक उपागम, मौलिकता, तकनीकी कौशल आदि का मूल्यांकन किया जा सकता है। मेले की समाप्ति पर विद्यार्थियों और शिक्षकों को मूल्यांकन करना चाहिए कि क्या मेले के उद्देश्यों और लक्ष्यों को प्राप्त कर लिया गया है? यदि नहीं तो इस मेले में कौन–कौन सी त्रुटियाँ रह गई है।

7.5.4 भौतिकीय विज्ञान मेले के आयोजन संबंधी सुझाव

भौतिकीय विज्ञान मेलों के आयोजन और इनमें सुधार के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए गए हैं–

1. यदि किसी प्रयोग में कोई खतरा हो तो सावधान रहने के निर्देश लाल रंग में लिखकर प्रयोग–स्थल पर लगाया जाये।
2. यदि कोई बाहरी खतरा हो तो मेले में रखी वस्तुओं की सुरक्षा की जानी चाहिए।
3. मेले में रखी सभी वस्तुएं सभी आगन्तुकों से सुरक्षित रखी जानी चाहिए।
4. आयोजकों की ओर से एक प्रतिनिधि प्रत्येक परियोजना के साथ अवश्य होना चाहिए।
5. आग आदि से बचने के सभी प्रबन्ध होने आवश्यक हैं।
6. मेले में वस्तुओं के प्रदर्शन में एक जैसा फर्नीचर ही इस्तेमाल हो।
7. वस्तुओं पर लेबल ठीक तरह से लगाने चाहिएं।

7.6 भौतिकीय विज्ञान भ्रमण

भौतिकीय विज्ञान में भ्रमण को सबसे पुरानी सामग्री माना गया है इससे वास्तविक जीवन के अधिगम–अनुभव प्राप्त होते हैं। ये साधन विद्यार्थी को उनके सामाजिक और प्राकृतिक वातावरण के बारे में बताते हैं। इस प्रकार के भ्रमणों से पूर्व–अर्जित अर्थात् पहले से प्राप्त अधिगम को पुनर्बलन मिलता हैं। इन भम्रणों पर मौके पर निरीक्षण करने की सुविधा प्रदान की जाती है। भौतिकीय विज्ञान संबंधी भम्रण कई रुचिकर स्थानों पर हो सकते हैं जैसे–पानी शुद्धीकरण के स्थान, संग्रहालय, भूमि सरंक्षण स्थल, मौसम कार्यालय आदि।

7.6.1 भौतिकीय विज्ञान भ्रमण के उद्देश्य

भौतिकीय विज्ञान भ्रमण के निम्नलितिख उद्देश्य प्रमुख है–
1. भौतिकीय–विज्ञान सम्बन्धित जिज्ञासा को बढ़ाना।
2. भौतिकीय–विज्ञान की किसी परियोजना को शुरु करने के लिए।
3. कक्षा–कार्य को बाहर, परिवेश में रुचि का विकास करने के लिए।
4. स्थानीय–रुचि को विकसित करने के लिए।

7.6.2 भौतिकीय विज्ञान भ्रमण का महत्व

भ्रमण के स्थानों का निर्णय इलाके तथा स्कूल में पढ़ाये जाने वाले विषय पर आधारित होता है। भ्रमणों की निम्नलिखित उपयोगिता है–
1. भ्रमणों द्वारा विद्यार्थियों को प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त होता है।
2. भ्रमणों द्वारा नेतृत्व, सहयोग, आत्म विश्वास, योजना बनाने आदि योग्यताओं का विकास होता है।
3. भ्रमणों से विद्यार्थियों को भौतिकीय विज्ञान से संबंधित वस्तुओं के संग्रह करने के अवसर मिलते हैं।
4. इस प्रकार के भ्रमण विद्यार्थियों को कक्षा की दैनिक प्रक्रिया से मुक्ति दिलाकर कुछ आराम पहुंचाते है।

5. भ्रमणों द्वारा इस प्रकार की परिस्थितियां उत्पन्न की जा सकती हैं जिससे विद्यार्थियों में पूछताछ की प्रवृत्ति प्रोत्साहित होती है।

6. इस प्रकार के भ्रमणों द्वारा स्कूलों और समुदायों में खाई कम होती है।

7. इन भ्रमणों द्वारा स्कूलों में कई सप्रत्ययों को स्पष्ट किया जा सकता है।

8. इन भ्रमणों द्वारा विद्यार्थियों के भौतिकीय–विज्ञान के प्रति उचित दृष्टिकोण का विकास होता है।

7.6.3 भौतिकीय विज्ञान भ्रमण का आयोजन

भौतिकीय–विज्ञान भ्रमणों के सफल आयोजन के लिए यह आवश्यक है कि इनका प्रबन्ध क्रमबद्ध तरीके से किया जाना चाहिए। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए शिक्षक निम्नलिखित पदों का अनुसरण कर सकते है।

1. **उद्देश्यों का निर्धारण (Determination of objectives)**– इस प्रकार के भ्रमणों की सम्पूर्ण तैयारी से पहले यह निश्चित करना अति आवश्यक है कि भ्रमण किन उद्देश्यों को सामने रखकर किया जा रहा है। ये उद्देश्य शिक्षक और विद्यार्थियों के सम्मुख पूर्णतया स्पष्ट होने चाहिए। इन उद्देश्यों की स्पष्टता ही सम्पूर्ण योजना का आधार है। शिक्षक इन उद्देश्यों के आधार पर ही आगमी योजना तय कर सकता है।

2. **योजना (Planning)** –सभी कार्यों को व्यावहारिक रूप देने से पहले उनकी योजना बनाना परम आवश्यक है अन्यथा सफलता की स्थिति में समय नष्ट होने के अतिरिक्त और कुछ हाथ नहीं लगेगा। इस प्रकार के भ्रमणों का प्रबन्ध स्कूल में स्थापित भौतिकीय विज्ञान–क्लब अपने हाथ में ले। यदि ये क्लब ऐसा नहीं कर सकते तो विद्यार्थी और शिक्षक आपसी सहयोग से ये सब कुछ कर सकते हैं। योजना बनाने में निम्नलिखित बातें शामिल होती हैं।

(a) विद्यार्थियों की संख्या जिनको भ्रमण में साथ लेकर चलना हो।

(b) उच्चाधिकारी से अनुमति लेना।

(c) ऐसे विद्यार्थियों का आयु वर्ग।

(d) परिवहन का प्रबन्ध।

(e) आर्थिक छूट।

(f) भ्रमण के दौरान जहां रुकना हो वहां पर बहुत पहले से ही पत्र व्यवहार द्वारा रहने आदि की सुविधाओं का प्रबन्ध करना।

(g) खर्चे आदि का निर्धारण।

(h) भ्रमण के साथ सामान आदि जो लेकर चलना हो या जिस सामान की आवश्यकता हो।

(i) भ्रमण के प्रबन्धों के लिए विभिन्न समितियों की रचना करके उनके कार्य को समझाना।

3. **तैयारी (Preparation)**– योजना बनाने के पश्चात भ्रमण पर जाने वाले सभी लोग अपनी–अपनी तैयारी में लग जाएं। विद्यार्थियों को भ्रमण पर चलने के लिए अभिप्रेरित किया जाना चाहिए न कि ये भ्रमण उन पर थोपे जायें।

4. **लागू करना (Execution)**– भ्रमण की सफलता का सारा भार भ्रमण की योजना को प्रभावशाली ढंग से लागू करने पर है। योजना को लागू करने में यह देखना भी शामिल है कि क्या सभी लोग अपने–अपने कर्त्तव्यों को निभा रहे हैं या नहीं। योजना को लागू करने के लिए विद्यार्थियों को छोटे–छोटे समूह में बाँट दिया जाता है और उन्हें उनके कर्तव्य बता दिए जाते हैं। ऐसे आयोजनों में कड़ा अनुशासन आयोजन की सफलता के लिए पहली शर्त होती है।

5. **अनुवर्ती क्रिया (Follow up)**– इस प्रकार के भ्रमणों के पश्चात अनुवर्ती क्रिया का होना अति आवश्यक है। इसके लिए विद्यार्थियों से कहा जाए कि वे अपने भ्रमण के दौरान अर्जित ज्ञान पर लेख लिखें।

6. **मूल्यांकन (Evaluation)**– सम्पूर्ण भ्रमण समाप्त होने के पश्चात इसका पूर्ण मूल्यांकन किया जाना चाहिए। भ्रमण में रह गई त्रुटियों आदि का विश्लेषण करके आगामी भ्रमणों के दौरान उन पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

7.6.4 भ्रमण के संभावित स्थल

1. चीनी, कागज आदि के कारखाने। इस प्रकार के स्थानों पर कई प्रकार की रासायनिक क्रियाओं को देखने का अवसर मिलता है।
2. आधुनिक अस्पताल, जहां पर अनेक प्रकार के उपकरणों का इस्तेमाल किया जाता हो।
3. मेडिकल प्रयोगशाला जो कि अत्यधिक आधुनिक हो। यहां पर भी कई प्रकार के आधुनिक उपकरण तथा यंत्र देखने को मिलेंगे।
4. मिल्क प्लांट आदि।

7.6.5 भ्रमणों के दोष या हानियां

1. इन भ्रमणों से विद्यालय के अन्य कार्यक्रमों में बाधा पड़ती है।
2. ये भ्रमण बहुत महंगे सिद्ध होते है।
3. इन भ्रमणें के उद्देश्यों को बहुत कम विद्यार्थी ही समझ पाते हैं। व्यर्थ ही समय नष्ट करते हैं।
4. वे कक्षाएं जिनमें अधिक विद्यार्थी होते हैं, उनको ऐसे भ्रमणों पर ले जाना बहुत कठिन होता है।
5. ये भ्रमण कई बार उपयुक्त समय पर संभव नहीं हो पाते।
6. कई शिक्षकों का विद्यार्थियों के प्रति उचित दृष्टिकोण नहीं होता।

7.6.6 भौतिकीय विज्ञान भ्रमणों के लिए सावधानियां

जब कभी भी भ्रमण का कार्यक्रम बनाया जाए तो निम्न बातों की ओर ध्यान देना अति आवश्यक है। तभी भ्रमणों का लाभ उठाया जा सकता है–

1. भ्रमण लोकतांत्रिक ढंग से नियोजित करके तथा ठीक ढंग से संगठित करके सावधानी पूर्वक लागू किया जाना चाहिए।

2. शिक्षक, विद्यार्थियों को मार्ग–दर्शक प्रश्न बता सकता है जिनका उत्तर विद्यार्थी शिक्षक से या समुदाय के नेताओं से पूछ सके।

3. जहां तक संभव हो सके, शिक्षक को उन सभी रास्तों बस स्टापों, दिग्दर्शक–सुविधा का ज्ञान तथा उन वस्तु तथा स्थानों का ज्ञान हो जिन्हें उन्हें देखना है, उन कार्यों का ज्ञान, जिनको समूह द्वारा किया जाना हो, खाने– पीने का प्रबन्ध और भ्रमण के प्रत्येक स्तर या चरण के लिए समय की आवश्यकता आदि का पहले से ही ज्ञान होना चाहिए।

बोध प्रश्न

प्रश्न 4: भौतिक विज्ञान मेलों का सरकारी आयोजन कौन कराता है?

....

....

प्रश्न 5: भौतिक विज्ञान मेलों का मुख्य उद्देश्य क्या है?

....

....

प्रश्न 6: भौतिक विज्ञान अधिगम में भ्रमण क्यों आवश्यक है?

....

....

4. प्रत्येक भ्रमण के पश्चात् निश्चित अनुवर्ती–सेवा का होना अति आवश्यक है। इस सेवा के अन्तर्गत उन स्थानों से संबंधित पुस्तकों का अध्ययन किया जाना चाहिए। जिन स्थानों का भ्रमण किया गया हो या जिन स्थानों का निरीक्षण किया जा चुका हो, उन पर बहस करने के लिए पैनल बनाया जाना चाहिए।

5. भ्रमण का मूल्यांकन मौलिक रूप से निर्धारित उद्देश्यों के संदर्भ में किया जाना चाहिए, त्रुटियों और कठिनाइयों का निदान किया जाना चाहिए। समूह के व्यवहार पर बहस होनी चाहिए। संबंधित व्यक्तियों को धन्यवाद के पत्र प्रेषित किये जाने चाहिएं तथा भ्रमणों के मुख्य अंशों का स्थायी रिकार्ड रखा जाना चाहिए।

7.7 गैर–औपचारिक भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम

7.7.1 घेरलू उपलब्ध सामग्री द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम

इस विधि में घर में आसानी से उपलब्ध सामग्री का भौतिकीय विज्ञान शिक्षण हेतु प्रयोग किया जाता है जैसे कि सामान्य उपलब्ध पत्थर, कील, रबड़, गुब्बारे, लकड़ी के टुकड़े, चाकू, ब्लेड, पालिश, माचिस का डिब्बा, धागा आदि।

7.7.2 बेकार सामग्री द्वारा शिक्षण अधिगम

विभिन्न बेकार सामग्री व घेरलू तथा विद्यालयी कबाड़ के उपयोग द्वारा वैज्ञानिक उपकरण व खिलौने बनाए जा सकते हैं। इस प्रकार के निर्माण की प्रक्रिया द्वारा भी विभिन्न कौशलों में विद्यार्थी को पारंगत किया जा सकता है। उदाहरणार्थः–

1. पुरानी प्लास्टिक की बोतल को बीच से काट कर कीप।
2. बेकार पड़ी कमानी या रबड़ बैंड से कमानीदार तुला।
3. पुराने गत्तों या चार्ट पेपर से विभिन्न बोर्ड के खेल साँप–सीढ़ी आदि।
4. स्याही या अन्य छोटी शीशी से स्प्रिट या मिट्‌टी के तेल का लैम्प।

7.7.3 स्थानीय संसाधन व स्थानीय परिवेश के भ्रमण आदि द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम

भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में अनेक ऐसे महत्वपूर्ण उपविषय हैं जिनको दिखाना केवल स्थानीय संसाधनों के प्रयोग द्वारा ही संभव है। जिनका वर्णन इस प्रकार हैः–

1. 'वस्त्र' पाठ पढ़ाने के लिए बालकों को कक्षा–6 में कपास के खेत में, कताई की फैक्ट्री आदि में लेकर जा सकते हैं।
2. पाठ–8 'प्रदूषण' पढ़ाने के लिए पास के फैक्ट्री एरिया में लेकर जाया जा सकता है। जहाँ बच्चे जल तथा वायु दोनों प्रदूषणों को देख पाएँगे।
3. फसल उत्पादन एवम् प्रबंधन में बच्चों को जुताई आदि से अवगत कराने के लिए खेत में लेकर जाया जा सकता है।
4. कक्षा–8 'कोयला और पेट्रोलियम' पढ़ाने के लिए आस–पास अगर पेट्रोलियम परिष्करण यंत्र है तो वहाँ लेकर जाया जा सकता है।

7.7.4 खेलों, पहेली, मिलान, प्रश्नोत्तरी, प्रतियोगिता आदि द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम

खेलने हेतु प्रत्येक विद्यार्थी हर समय तैयार रहता है। अतः अधिकतर पाठों को खेल द्वारा पढ़ाना, सबसे उत्तम व रूचिकर विधि हैं जिससे विद्यार्थी की भौतिकीय विज्ञान में अवश्यमेव रूचि उत्पन्न की जा सकती है। खेल तथा गतिविधियों में एक मुख्य अन्तर होता है कि खेल यदि दो या दो से अधिक विद्यार्थियों में आयोजित किया जाता है, तो उनमें प्रतियोगिता का रूप आ जाता है व कोई न कोई अवश्य जीतता है। विद्यार्थी की प्रथम आने की चाह ही उसकी प्रेरणा है। अतः विद्यार्थियों में प्रतियोगिता की भावना भरें कि वे ज्ञान, सक्रियता कला, सृजनात्मकता, प्रस्तुति, प्रश्नोत्तर आदि की प्रतियोगिता के इन खेलों में सार्थक रूप से भाग लें व उच्च स्थान प्राप्त छात्रों को प्रोत्साहित अवश्य करें, अन्यथा खेलों से भी विद्यार्थी का प्रेम घटता जाएगा। प्रोत्साहन शब्दों, भावों, प्रमाण पत्रों, पुरस्कार आदि के रूप में दिया जा सकता है।

7.7.5 अभिनय एवं कठपुतलियों द्वारा भौतिकीय शिक्षण अधिगम

पाठ्य पुस्तक में कई पाठ ऐसे हैं जिन्हें अभिनय द्वारा ही प्रस्तुत करवाना मुख्य विधि है। अधिकतर अध्यापक इन पाठों में अभिनय ना करवाकर केवल पाठ पढ़ाकर ही भौतिकीय विज्ञान शिक्षण को अरूचिकर बना देते हैं।

7.7.6 विभिन्न क्षेत्रों में प्रोत्साहन प्रतियोगिता अथवा मेलों द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम

कक्षा में दी जाने वाली विभिन्न गतिविधियों को प्रतियोगिता के रूप में आयोजित करने का प्रयास करें। गृहकार्य भी एक प्रतियोगिता अर्थात् खेल हो सकता है। सबसे पहले व सबसे अच्छा गृहकार्य करने वाले विद्यार्थी की प्रशंसा करें व किसी भी रूप में अवश्य प्रोत्साहित करें। इसके अतिरिक्त अनेक प्रकार की प्रतियोगिताओं को भी आयोजित किया जा सकता है–

1. फूल, पत्तियाँ, जड़ें, पंख, चित्र, लेख, कतरनें, बीज आदि वस्तुओं के संग्रहण की प्रतियोगिता।
2. संग्रहित वस्तुओं की वर्गीकरण प्रतियोगिता।
3. विभिन्न समस्याओं में परिकल्पना प्रतियोगिता जैसे यदि हम चाँद पर होते तो क्या होता लेख लिखें या वर्णन करें या व्याख्या करें आदि।
4. **परिकलन प्रतियोगिता**– जैसे एक बाल्टी में कितने मग पानी आ सकता है। यह परिकल्पना प्रतियोगिता भी हो सकती है व परिकलन भी।
5. **उपसंहार प्रतियोगिता**– कक्षा में विभिन्न गतिविधियों से कौन–सा विद्यार्थी सही व सबसे पहले उपसंहार निकालता है।
6. **परीक्षण प्रतियोगिता**– विभिन्न दिए गए परिणामों के परीक्षण हेतु प्रतियोगिता रख सकते हैं, जैसे जाँच करें कि हवा में भार है। विद्यार्थी को यह भी निर्णय करने दें, कि कैसे जाँच करेंगे।
7. **प्रेक्षण प्रतियोगिता**– किसी परिस्थिति में कौन सटीक प्रेक्षण करता है। जैसे फूल में क्या–क्या भाग है, सभी भागों के चित्र् बनायें व बाद में अध्यापक उनके नाम बताए।
8. **अध्ययन प्रतियोगिता**– भौतिकीय विज्ञान की विषय वस्तु से सम्बन्धित एक लेख सभी को दें व सभी को स्वयं उसे समझने की प्रतियोगिता आयोजित करें। अन्त में जो सही उत्तर देगा उसे पुरस्कृत करें।
9. **उपकरण निर्माण व उपयोग प्रतियोगिता**– बेकार सामान से विद्यार्थियों द्वारा अधिकतम व अधिकतर उपयोग किये जाने वाले उपकरण के निर्माण की प्रतियोगिता।
10. **माडल निर्माण व उपयोग प्रतियोगिता**– दैनिक व्यवहार के विभिन्न मॉडलों के निर्माण की प्रतियोगिता करवाएं व इन्हें सर्वाधिक उपयोग में लाने की विधि पूछें।

11. मेला आयोजन जिसमें वाद–विवाद, भाषण आदि प्रतियोगिताएं रखी जा सकती हैं जिनमें उपर्लिखित सभी प्रतियोगिताओं की रिपोर्ट–प्रस्तुति एवं विषयवस्तु का प्रदर्शन किया जा सकता है।

12. **प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता**– प्रश्नोत्तरी आयोजित करें तथा कौन बनेगा करोड़पति टी. वी. कार्यक्रम की भाँति, कौन बनेगा प्रतियोगिता आयोजित की जा सकती है। प्रत्येक सप्ताह के विजेता को एक सप्ताह के लिए कक्षापति की उपाधि से विभूषित करें।

13. **वर्ग पहेली प्रतियोगिता**– वर्ग पहेली तो सर्वाधिक परिचित खेल है। जैसे विभिन्न शब्दों की वर्ग पहेली में पौधे के विभिन्न अंगों के नाम छाँटे।

14. **खोज प्रतियोगिता**– अँधेरा क्यों हो जाता है, सूर्य छिपने पर क्या होता है, ग्रहण कैसे होता है आदि खोजपूर्ण प्रोजेक्ट विद्यार्थियों को दें व सर्वाधिक खोजपूर्ण प्रस्तुति को प्रोत्साहित करें। इसी प्रकार से चना, सरसों, गेहूँ व मक्का में किसका पौधा अंकुरण के 10 दिन बाद सबसे लम्बा होगा व किसमें सबसे पहले अंकुरण निकलता है।

15. **बोर्ड निर्माण प्रतियोगिता**– बोर्ड खेलों कें निर्माण की प्रतियोगिता करवायें जैसे साँप सीढ़ी व उचित प्रकरण दें जैसे प्रदूषण, कूड़ा फैलाना, शोर मचाना, पानी बेकार करना आदि क्रियाओं को करने पर साँप के घर तथा कूड़ा उठाना, शान्ति पूर्वक कक्षा में पढ़ना, पानी की बचत करना आदि क्रियाओं पर सीढ़ी का घर प्रदान करें। ऐसी ही उचित बातों पर सीढ़ी बनाने वाले विद्यार्थी को पुरस्कृत कर के प्रोत्साहित करें। इसी प्रकार से ऊर्जा संरक्षण, संतुलित आहार आदि विषयों पर भी खेल बनवाया जा सकता है।

16. **चार्ट निर्माण प्रतियोगिता**– विभिन्न विषयों पर रिपोर्ट हेतु, चित्र प्रदर्शन हेतु, सारणी निर्माण आदि हेतु चार्ट निर्माण प्रतियोगिता दी जा सकती है। उदाहरणार्थ– विद्युत के विभिन्न उपकरणों को विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत करते हुए चार्ट बनवायें, जैसे हवा देने वाले, प्रकाश देने वाले, उष्मा देने वाले उपकरण आदि।

17. **पहचान प्रतियोगिता**– विभिन्न पत्तियों, वृक्षों, फलों, पक्षियों, जन्तुओं, जलचरों, नभचरों, स्थलचरों आदि को पहचानने की प्रतियोगिता करवायें। यह प्रतियोगिता चित्र संग्रहण प्रतियोगिता के उपरान्त भी सम्भव है। विद्यार्थियों को प्रेरित करें कि वे पत्ती देखकर भी, वृक्ष को पहचान सकें। सर्वाधिक वस्तुओं को पहचानने वाले विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करें।

7.8 सारांश

पाठ्य सहगामी क्रियाएं शिक्षण में श्रेष्ठ स्थान रखती है और विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास में पूरा–पूरा योगदान देती है। भौतिक विज्ञान से सम्बन्धित पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भौतिकीय विज्ञान क्लब, भौतिकीय विज्ञान मेले, वैज्ञानिक रुचियां एवं भौतिकीय विज्ञान भ्रमण आदि सम्मिलित होती हैं। विज्ञान क्लबों में विद्यार्थी की ओर व्यक्तिगत ध्यान दिया जा सकता है तथा 'करके सीखने' के सिद्धान्त का पालन भी संभव होता है। समर्पण की भावना से ही क्लबों की क्रिया कलापों को व्यावहारिक रूप दिया जा सकता है। स्कूलों में भौतिकीय विज्ञान मेलों में विद्यार्थियों द्वारा तैयार की गई वस्तुओं और उनकी क्रियाओं का प्रदर्शन किया जा सकता है। इन मेलों में भौतिकीय विज्ञान विशेषज्ञों की वस्तुएँ, फिल्म शो,

वाद–विवाद प्रतियोगिताएँ आदि कार्यक्रम सम्मिलित किए जा सकते हैं। भौतिकीय विज्ञान में भ्रमण जीवन के अधिगम–अनुभव प्राप्त होते हैं। ये साधन विद्यार्थी को उनके सामाजिक और प्राकृतिक वातावरण के बारे में बताते हैं। गैर–औपचारिक भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम में घरेलू उपलब्ध सामग्री द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम, बेकार सामग्री द्वारा शिक्षण अधिगम, स्थानीय संसाधन व स्थानीय परिवेश के भ्रमण आदि द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम, खेलों, पहेली, मिलान, प्रश्नोत्तरी, प्रतियोगिता आदि द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम, अभिनय एवम् कठपुतलियों द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम किया जा सकता है।

7.9 अभ्यास प्रश्न

1. पाठ्य–सहगामी क्रियाओं को परिभाषित कीजिए?
2. भौतिकीय विज्ञान अधिगम में पाठ्य–सहगामी क्रियाओं का विस्तार से वर्णन कीजिए?
3. भौतिकीय विज्ञान क्लब का विस्तार से वर्णन कीजिए?
4. भौतिकीय विज्ञान मेला का विस्तार से वर्णन कीजिए?
5. भौतिकीय विज्ञान भ्रमण का विस्तार से वर्णन कीजिए?
6. गैर–औपचारिक भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम विधियों की सूचि बनाइये?
7. गैर–औपचारिक भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम विधियों का विस्तार से वर्णन कीजिए?

7.10 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान अधिगम में पाठ्य–सहगामी क्रियाओं पर चर्चा करेगें।
2. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान क्लब पर चर्चा करेंगें।
3. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान भ्रमण पर चर्चा करेंगें।

इकाई–8 भौतिकीय विज्ञान में अभिक्रमित अनुदेशन

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 भौतिकीय विज्ञान में अभिक्रमित अनुदेशन

8.4 अभिक्रमित अनुदेशन के सिद्धान्त

8.5 अभिक्रमित अनुदेशन के प्रकार

8.6 रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन

8.6.1 रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की संरचना

8.6.2 रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन के निर्माण की विभिन्न अवस्थाएं

8.6.1 रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की सीमाएं

8.7 शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन

8.7.1 शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन के दोष

8.8 मैथेटिक्स अभिक्रमित अभिक्रमित अनुदेशन के दोष

8.8.1 वाणिज्यिक बैंकों के निक्षेप

8.9 स्वनिदेशित अभिक्रमित अनुदेशन

8.10 कम्प्यूटर आधारित अभिक्रमित अनुदेशन

8.11 सारांश

8.12 अभ्यास प्रश्न

8.13 चर्चा के बिन्दु

8.1 प्रस्तावना

अभिक्रमित अनुदेशन विधि अधिगम के क्षेत्र में प्रस्तुत की जाने वाली एक आधुनिक विधि है। अभिक्रमित अनुदेशन द्वारा छात्र के अनुक्रियाओं की जानकारी स्वयं छात्र कर सकते हैं। अनुदेशन मनोविज्ञान की देन है, कम समय में अधिक विषय वस्तु का शिक्षण कराने के उद्देश्य से यह विधि प्रत्युत्पन्न हुई। मनोवैज्ञानिक ने पूर्व में विभिन्न प्रयोग किए और इस विधि का महत्व समझकर ही शिक्षा के क्षेत्र में अवतरित किया अर्थात हम कह सकते है कि अभिक्रमित अनुदेशन विधि एक संगणक सहायक अनुदेशन विधि है जो मनोवैज्ञानिक सिद्धांतो पर आधारित है, जिसमे छात्र को स्वंय सिखने के अवसर प्राप्त होते है।

प्रस्तुत इकाई में हम भौतिकीय विज्ञान में अभिक्रमित अनुदेशन, अभिक्रमित अनुदेशन के सिद्धांत, अभिक्रमित अनुदेशन के प्रकार, रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन, रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की संरचना, रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन के निर्माण की विभिन्न अवस्थाएं, रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की सीमाएं, शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन, शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन के दोष, मैथेटिक्स अभिक्रमित अनुदेशन, मैथेटिक्स अभिक्रमित अनुदेशन के दोष, स्वनिदेशित अभिक्रमित अनुदेशन और कम्प्यूटर आधारित अभिक्रमित अनुदेशन के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको भौतिकीय विज्ञान में अभिक्रमित अनुदेशन को समझने में सुविधा होगी।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

- भौतिकीय विज्ञान में अभिक्रमित अनुदेशन क्रियाओं को परिभाषित कर सकेंगे।
- अभिक्रमित अनुदेशन के सिद्धांतो को जान सकेंगे।
- अभिक्रमित अनुदेशन के प्रकारों का वर्गीकरण कर सकेंगे।
- रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की क्रियाविधि का वर्णन कर सकेंगे।
- शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
- मैथेटिक्स अभिक्रमित अनुदेशन को परिभाषित कर सकेंगे।

8.3 भौतिकीय विज्ञान में अभिक्रमित अनुदेशन

अनुदेशन वर्तमान युग में एक नयी धारा के रूप में आया है। अनुदेशन शब्द अनुदेश से बना है। अनुदेश का अर्थ होता है। आज्ञा देना या ज्ञान देना। ज्ञान को हम एक सुझाव के रूप में ग्रहण कर सकते है। अनुदेशन शिक्षण प्रक्रिया का ही अंग है। जिस प्रकार शिक्षण शैक्षिक प्रक्रिया का एक पक्ष अथवा विधि है। अन्तर दोनो में इतना है कि शिक्षण में अध्यापक सक्रिय रहकर बालकों को विधि प्रविधि से अधिगम करवाता हैं। अनुदेशन में वह स्वयं न करके परामर्श भी प्रदान करता है।

अनुदेशन मनोविज्ञान की देन है कम समय में अधिक विषय वस्तु का शिक्षण कराने के उद्देश्य से यह विधि प्रत्युत्पन्न हुई। मनोवैज्ञानिक ने पूर्व में विभिन्न प्रयोग किए और इस विधि का महत्व समझकर ही शिक्षा के क्षेत्र में अवतरित किया।

बी.एफ. स्किनर के अनुसार अभिक्रमित अध्ययन या अधिगम शिक्षण की कला तथा विज्ञान हैं।

एस.एम. मुरिन के अनुसार अनुदेशन प्रक्रिया शिक्षण और अधिगम की सम्पूर्ण प्रक्रिया को सामान्य से विशिष्ट उद्देश्यो की ओर अग्रेषित करके चलाने और मूल्यांकन करने का एक तार्किक ढंग प्रस्तुत करती है।

गेट्स के अनुसार अनुदेशन वह प्रक्रिया है जो विद्यार्थी को कुछ विशिष्ट उद्देश्यों की ओर प्रभावित करती है।

हेण्डरसन के अनुसार अनुदेशन प्रक्रिया शिक्षा तथा शिक्षण का ही एक संबंधित रूप है।

अभिक्रमित अधिगम में शिक्षण–सामग्री को एक ऐसे क्रम में नियोजित किया जाता है जिससे विद्यार्थियों में लगातार अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन लाने का प्रयास किया जा सकता है और उनका मापन भी किया जा सकता है स्व–अधिगम सामग्री को अभिप्रेरित अधिगम सामग्री अथवा अभिक्रमित अनुदेशन सामग्री भी कहा जाता है। इस सामग्री के निर्माण का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों को व्यक्तिगत विभिन्नताओं के अनुसार सीखने का अवसर प्रदान करना है। विद्यार्थी इस सामग्री का स्वयं अध्ययन करके सीखता है। अधिगम की प्रक्रिया में विद्यार्थी लगातार सक्रिय रहता है और उसे अपनी ज्ञान–प्राप्ति का बोध भी होता रहता है। इस सामग्री में विषय–वस्तु का संगठन छोटे–छोटे पदों (फ्रेमों) के रूप में किया जाता है और प्रत्येक पद से सम्बन्धित श्रेणीबद्ध प्रश्न क्रमानुसार व्यवस्थित होते हैं। विद्यार्थी एक प्रश्न का सही उत्तर देने के पश्चात ही दूसरे भाग की ओर अग्रसर होता है।

8.4 अभिक्रमित अनुदेशन के सिद्धान्त

1. क्रमिक लघु पदों का सिद्धांत।
2. सक्रिय अनुक्रिया का सिद्धांत।
3. प्रतिपुष्टि का सिद्धांत।
4. स्व–गति का सिद्धांत।
5. स्व–परीक्षण का सिद्धांत।

8.5 अभिक्रमित अनुदेशन के प्रकार

अभिक्रमित अनुदेशन के प्रकार यों तो अभिक्रमित अनुदेशन एक सम्पूर्ण शैक्षिक कार्यक्रम है, किन्तु इसकी रचना के आधार पर अभिक्रमित अनुदेशन का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है–

1. रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन
2. शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन
3. मैथेटिक्स अभिक्रमित अनुदेशन
4. स्वनिर्देशित अभिक्रमित अनुदेशन
5. कम्प्यूटर आधारित अभिक्रमित अनुदेशन

8.6 रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन

इस प्रकार की सामग्री का निर्माण एवं विकास विख्यात शिक्षाविद् एवं मनोवैज्ञानिक श्री बी. एफ. स्किनर (B.F.Skinner) द्वारा प्रतिपादित आपरेण्ट प्रतिबद्ध अनुक्रिया प्रतिमान (Operant conditioning Model of Teaching) के आधार पर किया जाता है। स्किनर ने अपनी प्रयोगशाला में जानवरों और पक्षियों पर प्रयोग किए। प्रयोगों से प्राप्त निष्कर्ष के आधार पर उसने आपरेण्ट प्रतिबद्ध अनुक्रिया सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। स्किनर के अनुसार यदि किसी व्यक्ति को उसके द्वारा किए गए कार्य के प्रतिफल की पुष्टि तुरन्त मिल जाए तो उस व्यक्ति के लिए यह अभिप्रेरक का कार्य करता है और व्यक्ति सीखने के

क्षेत्र में अग्रसर होता जाता है। सीखने की क्रिया में पुर्नबलन का अधिक से अधिक प्रयोग करना चाहिए ताकि विद्यार्थी द्वारा प्राप्त किया गया ज्ञान स्थाई हो सके। इस सिद्धान्त का उपयोग करके स्किनर ने आपरेण्ट प्रतिबद्ध अनुक्रिया शिक्षण प्रतिमान का विकास किया है। स्किनर के शिक्षण प्रतिमान के तत्वों का प्रयोग रेखीय अभिक्रम का निर्माण एवं विकास करने से पूर्व इसकी संरचना को समझना आवश्यक है।

8.6.1 रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की संरचना

रेखीय अभिक्रम से अभिप्राय 'सीधी रेखा का अभिक्रम या कार्यक्रम' है जिसमें विद्यार्थी प्रारम्भिक व्यवहार (Entering Behaviour) से अन्तिम व्यवहार (Terminal Behaviour) तक सीधी रेखा की तरह चलता रहता है। इस में पाठ्य–सामग्री को छोटे–छोटे पदों में क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इन पदों को फ्रेम (Frame) कहा जाता है। प्रत्येक फ्रेम विद्यार्थी को नवीन ज्ञान प्रदान करता है और उद्दीपक के रूप में कार्य करता है। ये फ्रेम आपस में सम्बन्धित होते हैं। इन फ्रेमों को एक–एक करके सरलता से कठिनता के क्रम में विद्यार्थी के सामने प्रस्तुत किया जाता है। विद्यार्थी प्रस्तुत फ्रेम के प्रति अनुक्रिया (Response) करता है। उचित प्रतिक्रिया करने के लिए उसे संकेत (Hints) दिये जाते हैं। इन संकेतों को अनुबोधन (Prompts) भी कहा जाता है। उचित प्रतिक्रिया करने के उपरान्त उसके सामने अगला फ्रेम प्रस्तुत किया जाता है जिस पर प्रथम फ्रेम के प्रश्न का उत्तर दिया होता है। इससे विद्यार्थी को पुर्नबलन (Reinforcement) प्राप्त होता है पुर्नबलन से विद्यार्थी प्रेरित होता है और अगले फ्रेम में दी गई पाठ्य–सामग्री को सीखने का प्रयास करता है। इस प्रकार विद्यार्थी एक फ्रेम से दूसरे, दूसरे फ्रेम से तीसरे फ्रेम पर पहुँचता हुआ अन्तिम फ्रेम तक पहुँच जाता है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 7: अभिक्रमित अनुदेशन क्या है?

....

....

प्रश्न 8: अभिक्रमित अनुदेशन कितने प्रकार का होता है?

....

....

प्रश्न 9: रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन का प्रतिपादन किसने किया?

....

....

प्रत्येक फ्रेम में इतनी ही पाठ्य–सामग्री प्रस्तुत की जाती है जिससे कि विद्यार्थी उचित प्रतिक्रिया कर सके। फ्रेमों में दी गई सूचना अपने आप में पूर्ण होती है। प्रत्येक फ्रेम में दिये गए रिक्त स्थान में उसे प्रतिक्रिया लिखनी होती है। वह अपनी प्रतिक्रिया की जाँच अगले फ्रेम में करता है। प्रत्येक फ्रेम के उत्तर को तब तक छिपाया जाता है। जब तक कि विद्यार्थी उचित प्रतिक्रिया नहीं करता। फ्रेम के प्रति उचित प्रतिक्रिया करने पर नया ज्ञान एवं पुनर्बलन प्राप्त होता है। पुर्नबलन से विद्यार्थी उद्दीपक–प्रतिक्रिया में नये सम्बन्ध स्थापित करता है जिसे पुष्टिकरण (Verification) कहते हैं।

8.6.2 रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन के निर्माण की विभिन्न अवस्थाएं

अभिक्रम का निर्माण निम्न अवस्थाओं में सम्पन्न किया जाता है–

(A) **तैयारी की अवस्था (Prepatory Stage)**

1. सर्वप्रथम पाठ्य सामग्री का चयन किया जाता है। पाठ्य सामग्री के उपयुक्त चयन पर अभिक्रम की सफलता निर्भर करती है।
2. पाठ्य सामग्री की रूपरेखा तैयारी करना।
3. उद्देश्यों को व्यवहारपरक शब्दावली में परिभाषित करना।
4. प्रारम्भिक व्यवहार को परिभाषित करना।
5. मानदण्ड परीक्षण में अभिक्रम द्वारा विकसित किये जाने वाले अन्तिम व्यवहारों को दर्शाया जाता है।

(B) **लेखन की अवस्था (Writing Stage)** – यह अभिक्रम निर्माण की दूसरी अवस्था है। इस अवस्था में अभिक्रम को एक व्यवस्थित क्रम में लिखा जाता है। यह अनुदेशन सामग्री की वह सब से छोटी इकाई है जो एक समय में विद्यार्थी के सम्मुख प्रस्तुत की जाती है। फ्रेम पाठ्य–सामग्री की केवल एक सरल इकाई नहीं होता अपितु यह एक व्यावहारिक इकाई भी होता है जो विद्यार्थी के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन को सूचित करता है। रेखीय अभिक्रम में फ्रेम का आकार छोटा होता है। इसमें कुछ शब्द या एक–दो वाक्य ही होते हैं। ये शब्द या वाक्य पाठ्य–सामग्री से सम्बन्धित होते हैं और उद्दीपक के रूप में कार्य करते हैं। प्रत्येक फ्रेम के तीन तत्व होते हैं–उद्दीपक, प्रतिक्रिया एवं पुनर्बलन।

(C) **परीक्षण की अवस्था (Testing Stage)** – अभिक्रम की तैयारी एवं लिखने के बाद उसका परीक्षण किया जाता है ताकि अभिक्रम में आवश्यक संशोधन किये जा सकें। अभिक्रम की सफलता के लिए अभिक्रम इकाईयों की तीन बार प्रयोगात्मक जांच की जाती है।

(D) **मूल्यांकन की अवस्था (Evaluation Stage)** – यह अभिक्रम निर्माण की अन्तिम अवस्था है। क्षेत्र परीक्षण से प्राप्त परिणामों तथा आंकड़ों की सहायता से अभिक्रम का मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन का उद्देश्य अभिक्रम की वैधता की जाँच करके उसकी गुणवत्ता में वृद्धि करना तथा उसे शिक्षण–अधिगम के क्षेत्र में प्रयोग करने के लिए एक प्रभावशाली आधार प्रदान करना है। अभिक्रम का मूल्यांकन आन्तरिक एवं बाह्य मानदण्डों दोनों के अनुसार किया जाता

8.6.3 रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की सीमाएं

1. रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन का प्रयोग सभी विषयों के लिए संभव नहीं है।
2. प्रतिभाशाली बालक इस अभिक्रम के माध्यम से पढ़ने में अधिक रूचि नहीं लेते है।
3. इन अभिक्रमों का निर्माण जटिल कार्य हैं।
4. इनके द्वारा छात्रों में मौलिकता और तर्क शक्ति का विकास कर पाना कठिन है।
5. इसके द्वारा छात्र की अनुक्रिया गलत होने पर उसकी जिज्ञासा, कि यह अनुक्रिया गलत क्यों हैं, इसका समाधान संभव नहीं है।

8.7 शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन

इस विधि को आन्तरिक अभिक्रम भी कहते हैं। इसका आरम्भ नारमन ए. क्राऊडर ने किया था। उसने इसकी परिभाषा में इसे एक ऐसा अभिक्रम बताया जो अधिगम को छात्रों की आवश्यकता के अनुसार संगणक जैसे वाह्य उपकरण के बिना अनुकूल बनता है। शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन की निम्नलिखित विशेषताएं होती है–

1. फ्रेम का आकार और उसमे दी गयी सूचना की सीमा एक रेखीय कार्यक्रम से अधिक होती है।
2. इसमें प्रत्येक फ्रेम पर एक से अधिक विचार दिए होते हैं।
3. इसमें दो प्रकार के फ्रेम होते है प्रथम मुख्य फ्रेम और दूसरा उपचारात्मक फ्रेम।
4. इसमें बहु–वैकल्पिक प्रश्नों का प्रयोग किया जाता है।
5. यह अनुदेशन ट्यूटोरियल विधि पर आधारित होता है। इसमें अध्यापक शारीरिक रूप से उपस्थित नही रहता, फिर भी उससे पूरा लाभ उठाया जा सकता है।
6. इसमें नवीन सामग्री का प्रयोग किया जाता है, जो सीखने में अधिक सहायता करती है।
7. इसमें गलत प्रतिक्रिया का होना स्वाभाविक है और उस त्रुटि का पता लगाकर उसे दूर करने का प्रयास किया जा सकता है।
8. इसमें व्यक्तिगत विभिन्नताओं व विद्यार्थियों की आवश्यकता को ध्यान में रखा जाता है, इसलिए इसके द्वारा प्रभावशाली अधिगम सम्पन्न होता है।

शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन में पाठ्य –सामग्री को छोटे–छोटे पदों में न रखकर समग्र पाठ या एक इकाई या प्रत्यय के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। प्रत्येक पद का आकार बड़ा, एक या दो पैराग्राफ से लेकर सम्पूर्ण पृष्ठ तक होता है। अध्ययन के समय पृष्ठों का क्रमबद्ध रूप में अनुसरण नही किया जाता इसलिए इसे उत्कृष्ट पाठ्य पुस्तक कहते है। इस प्रकार इसमें दो पृष्ठ गृहपृष्ठ और त्रुटिपृष्ठ होते है।

8.7.1 शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन के दोष

1. यह महंगी तकनीक है।
2. इसमें विस्तृत कार्यक्रम की पुस्तकों और दृश्य–श्रव्य सामग्री का प्रयोग किया जाता है, जो प्रायः उपलब्ध नही होती।
3. इसमें प्रयुक्त बहु–विकल्पीय प्रश्नों का निर्माण कठिन होता है।
4. कई बार विद्यार्थी अनुमान के सहारे सही उत्तर अंकित कर देता है जिसे प्रभावशाली अधिगम नही कह सकते।
5. इस अनुदेशन को कम्प्यूटर तथा शिक्षण मशीन के द्वारा नही दिया जा सकता।
6. यह अनुदेशन छोटी कक्षाओं के बालकों के लिए उपयुक्त नही हैं।

8.8 मैथेटिकस अभिक्रमित अनुदेशन

मैथेटिक्स अभिक्रमित अनुदेशन के प्रतिपादक टी.एफ. गिल्बर्ट है। मैथेटिक्स से तात्पर्य जटिल व्यवहार समूह के विश्लेषण व पुनः निर्माण हेतु पुनर्बलन के सिद्धांतो के उस सुव्यवस्थित प्रयोग से है जो पाठ्य –सामग्री में निपुणता का प्रतिनिधित्व करता है।

इस अनुदेशन का विकास गणित शिक्षण के लिए किया गया था लेकिन अब इसका प्रयोग अन्य विषयों के शिक्षण में किया जाने लगा है। इस अनुदेशन में पाठ्य –सामग्री को एक कड़ी के रूप में प्रस्तुत किया जाता है जिसमे अंतिम फ्रेम को पहले तथा पहले फ्रेम को अंत में प्रस्तुत किया जाता है। यह अनुदेशन कठिन कौशलों को अर्जित करने, वांछित व्यवहार को प्राप्त करने और पाठ्य –सामग्री पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करने और उसमें पारंगत होने में उपयोगी सिद्ध होता है।

मैथेटिक्स अभिक्रमित में अनुदेशन अधिक प्रेरणादायी कार्य से प्रारम्भ होता है। इसे रेखीय और शाखीय अनुदेशन की तरह इकाई फ्रेम न होकर समस्या या अभ्यास होती है। इस अभ्यास का कोई निश्चित आकार नही होता, इसके अंतर्गत व्यवहार में विभेदीकरण, सामान्यीकरण और श्रृंखला को महत्व दिया जाता है और सभी प्रकार के अनुदेशन में इन तीनों व्यवहारों का शिक्षण किया जाता है। इसमें पाठ्य –सामग्री को श्रृंखला के रूप में विद्यार्थियों के सामने प्रस्तुत किया जाता है। विद्यार्थी इसके प्रति अवरोही क्रम में विशिष्ट प्रतिक्रियाएं करते है अर्थात इन्हें अंतिम क्रिया पहले करनी पड़ती है और पहली क्रिया अंत में करनी पड़ती है। मैथेटिक्स अभिक्रमित अनुदेशन की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. यह अनुदेशन अंतिम व्यवहार से प्रारम्भिक व्यवहार की दिशा में चलता हैं।
2. इसमें अधिगम की इकाई फ्रेम न होकर समस्या या अभ्यास होती है।
3. इसमें अध्यापक की अनुपस्थिति में भी विद्यार्थी पाठ्य –सामग्री पर अधिकार प्राप्त कर सकता है।
4. इसमें पाठ्य –सामग्री पर अधिक महत्व दिया जाता है।
5. अधिगम की परिस्थिति में विभेदीकरण, सामान्यीकरण तथा श्रृंखला अधिक प्रभावशाली होता है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 10: रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन किस सिद्धांत पर आधारित है?

....

....

प्रश्न 11: रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन में सीखने की प्रक्रिया किस प्रकार की होती है?

....

....

प्रश्न 12: मैथेटिक्स अभिक्रमित अनुदेशन का प्रतिपादन किसने किया?

....

....

8.8.1 मैथेटिक्स अभिक्रमित अनुदेशन के दोष

1. इसका प्रयोग सीमित है, इसके द्वारा सभी पाठ्य सामग्री को प्रस्तुत नही किया जा सकता।
2. इसका निर्माण करना कठिन है।
3. इसमें विद्यार्थी की आवश्यकताओं का ध्यान नही रखा जाता।
4. इसमें विद्यार्थी को स्वतंत्रता प्रदान नहीं की जाती।
5. इस विधि का प्रयोग उच्च उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए नही किया जा सकता।

8.9 स्वनिदेशित अभिक्रमित अनुदेशन

स्वनिदेशित अभिक्रम को संयुक्त अभिक्रम के नाम से भी जाना जाता हैं यहां संयुक्त का अर्थ सहायता प्रदान करना है। यह अभिक्रम एक ऐसा साधन है, जो अभिक्रमित अनुदेशन तथा उत्तम प्रकार की पाठ्य पुस्तकों में समन्वय स्थापित करता हैं। इस प्रकार इस अभिक्रम में अभिक्रमित शिक्षण सहायता सामग्री तथा पाठ्य पुस्तकों का उपयोग किया जाता है।

8.10 कम्प्यूटर आधारित अभिक्रमित अनुदेशन

आज विज्ञान और तकनीकी के प्रभाव ने मानव चिन्तन को वैज्ञानिक बना दिया जिसके फलस्वरूप प्रत्येक क्षेत्र में यन्त्रीकरण का बोलबाला है। यन्त्रीकरण की इस दौड़ में शिक्षा भी पीछे नहीं रही है, क्योंकि प्रतिदिन बदलने वाली सामाजिक आर्थिक संरचना में शिक्षा के गुणात्मक स्वरूप पर बहुत बल दिया जा रहा है, फलतः शिक्षा जगत में संगणकों का आगमन हुआ है। छात्रों की बढती हुई संख्या को देखते हुए उनके लिये उत्तम ढंग से शिक्षण अधिगम की परिस्थितियां उत्पन्न करके, ज्ञान के संचार प्रवाह में संगठन को प्रभावशाली माध्यम माना जा रहा है।

8.11 सारांश

अभिक्रमित अधिगम में शिक्षण–सामग्री को एक ऐसे क्रम में नियोजित किया जाता है जिससे विद्यार्थियों में लगातार अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन लाने का प्रयास किया जा सकता है और उनका मापन भी किया जा सकता है स्व–अधिगम सामग्री को अभिप्रेरित अधिगम सामग्री अथवा अभिक्रमित अनुदेशन सामग्री भी कहा जाता है। रेखीय अभिक्रम में विद्यार्थी प्रारम्भिक व्यवहार से अन्तिम व्यवहार तक सीधी रेखा की तरह चलता रहता है। इस में पाठ्य–सामग्री को छोटे–छोटे पदों में क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाता है। शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन में पाठ्य –सामग्री को छोटे–छोटे पदों में न रखकर समग्र पाठ या एक इकाई या प्रत्यय के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। मैथेटिक्स जटिल व्यवहार समूह के विश्लेषण व पुनः निर्माण हेतु पुनर्बलन के सिद्धांतो के उस सुव्यवस्थित प्रयोग से है जो पाठ्य–सामग्री में निपुणता का प्रतिनिधित्व करता है।

8.12 अभ्यास प्रश्न

1. भौतिकीय विज्ञान में अभिक्रमित अनुदेशन क्रियाओं को परिभाषित कीजिए?
2. अभिक्रमित अनुदेशन के सिद्धांतो का विस्तार से वर्णन कीजिए?
3. अभिक्रमित अनुदेशन के प्रकारों का वर्गीकरण कीजिए?
4. रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की क्रियाविधि का वर्णन कीजिए?
5. शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन का विस्तार से वर्णन कीजिए?
6. मैथेटिक्स अभिक्रमित अनुदेशन को परिभाषित कीजिए?

8.13 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान में अभिक्रमित अनुदेशन पर चर्चा करेगें।
2. छात्राध्यापक आपस में अभिक्रमित अनुदेशन के सिद्धांतो पर चर्चा करेंगें।
3. छात्राध्यापक आपस में रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन पर चर्चा करेंगें।

इकाई–9 भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम

9.3.1 केस स्टडी विधि

9.3.2 डाल्टन योजना

9.3.3 निगमनात्मक तथा आगमनात्मक

9.3.4 संश्लेषणात्मक तथा विशेषणात्मक

9.3.5 वस्तुविधि

9.3.6 दृष्टांतविधि

9.3.7 कथनविधि एवं व्याख्यानविधि

9.3.8 करके सीखना

9.3.9 शोधविधि

9.3.10 वर्धा योजना या बुनियादी तालीम

9.3.11 प्रश्नोत्तर विधि (सुकराती विधि)

9.3.12 परिचिर्चा विधि

9.3.13 सीखने के स्टेशन

9.3.14 ओपन स्पेस तकनीक

9.3.15 क्लोज टेस्ट

9.3.16 Wh–टेम्पलेट

9.3.17 क्रोनो–लॉग

9.3.18 माइन्ड मैप

9.3.19 वेब थीम

9.3.20 अभिनय

9.3.21 शैक्षिक खेल

9.3.22 श्लोक सूत्र

9.3.23 ह्यरेस्टिक विधि

9.3.24 खेल/गतिविधि प्रविधि

9.3.25 रूचिपूर्ण/आनन्दायी शिक्षण

9.4 सारांश

9.5 अभ्यास प्रश्न

9.6 चर्चा के बिन्दु

9.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.1 प्रस्तावना

वर्तमान समय में कक्षा शिक्षण के दौरान ऐसी शिक्षण विधियों की बात आती है जिससे प्राकृतिक सौन्दर्य, ऐतिहासिक विरासत, राजनैतिक व आर्थिक वातावरण की परखता, आलोचनात्मकता और सृजनात्मकता का विकास हो तथा वे मानव जीवन और पर्यावरण में सम्बन्ध स्थापित करते हुए, छात्र पर्यावरण संरक्षण को महत्व को समझे। कक्षा में शिक्षण प्रक्रिया को जीवन्त व छात्रों को भागीदारी से परिपूर्ण बनाने के लिए शिक्षण में केवल ज्ञान व सूचना देने वाली विधियों को छोड़कर नवीन उपागम की ओर जाना होगा जिसमें ज्ञान सीमा में बंधा न होकर एकदम अनन्त तक खुला हुआ हो। शिक्षक को छात्रों के साथ प्राकृतिक तथ्यों का केवल एक हिंट मात्र देकर अर्जित करने के लिए उन्हें खुले परिवेश में छोड़ देना चाहिए जहां वे स्वयं अध्ययन अथवा अनुभव करके सीखें।

प्रस्तुत इकाई में हम भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम, केस स्टडी विधि, डाल्टन योजना, निगमनात्मक तथा आगमनात्मक, संश्लेषणात्मक तथा विश्लेषणात्मक, वस्तुविधि, दृष्टांत विधि, कथनविधि एवं व्याख्यानविधि, करके सीखना, शोधविधि, वर्धा योजना या बुनियादी तालीम, प्रश्नोत्तर विधि (सुकराती विधि), परिचर्चा विधि, सीखने के स्टेशन, ओपन स्पेस तकनीक, क्लोज टेस्ट, Wh-टेम्पलेट, क्रोनो–लॉग, माइन्ड मैप, वेब थीम, अभिनय, शैक्षिक खेल, श्लोक सूत्र, ह्यूरेस्टिक विधि, खेल/गतिविधि प्रविधि और रुचिपूर्ण/आनन्ददायी शिक्षण के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम को समझने में सुविधा होगी।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेगें कि–

- भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम के अर्थ को समझ सकेंगें।
- भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम को परिभाषित कर सकेंगें।
- भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम के विभिन्न प्रकारों को जान सकेंगें।
- भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम के विभिन्न प्रकारों का वर्गीकरण कर सकेंगें।
- भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम के विभिन्न प्रकारों का विस्तार से वर्णन कर सकेंगें।

9.3 भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम

जिस ढंग से शिक्षक शिक्षार्थी को ज्ञान प्रदान करता है उसे शिक्षण विधि कहते हैं। ''शिक्षण विधि'' पद का प्रयोग बड़े व्यापक अर्थ में होता है। एक ओर तो इसके अंतर्गत अनेक प्रणालियाँ एवं योजनाएँ सम्मिलित की जाती हैं, दूसरी ओर शिक्षण की बहुत सी प्रक्रियाएँ भी सम्मिलित कर ली जाती हैं। कभी–कभी लोग युक्तियों को भी विधि मान लेते हैं। परंतु ऐसा करना भूल है। युक्तियाँ किसी विधि का अंग हो सकती हैं, संपूर्ण विधि नहीं। एक ही युक्ति अनेक विधियों में प्रयुक्त हो सकती है।

1. केस स्टडी विधि
2. डाल्टन योजना
3. निगमनात्मक तथा आगमनात्मक
4. संश्लेषणात्मक तथा विश्लेषणात्मक
5. वस्तुविधि
6. दृष्टांतविधि
7. कथनविधि एवं व्याख्यानविधि
8. करके सीखना
9. शोधविधि
10. वर्धा योजना या बुनियादी तालीम
11. प्रश्नोत्तर विधि (सुकराती विधि)
12. परिचर्चा विधि
13. सीखने के स्टेशन
14. ओपन स्पेस तकनीक
15. क्लोज टेस्ट
16. Wh-टेम्पलेट
17. क्रोनो–लॉग
18. माइन्ड मैप
19. वेब थीम
20. अभिनय
21. शैक्षिक खेल
22. श्लोक सूत्र
23. ह्यूरेस्टिक विधि
24. खेल / गतिविधि प्रविधि
25. रुचिपूर्ण / आनन्ददायी शिक्षण

9.3.1 केस स्टडी विधि

शिक्षा तकनीकि के आर्विभाव तथा विकास के साथ शिक्षा की प्रक्रिया में अनेक परिवर्तन हुए तथा नये आयामों का विकास हुआ। पिछले 25 वर्षो के अन्तराल में कक्षा शिक्षा में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है। छात्रों की उपलब्धियों में स्थान, कक्षा–शिक्षण के स्वरूप, प्रक्रिया, अनुदेशन प्रक्रिया को प्राथमिकता दी गयी है क्योंकि छात्रों की उपलब्धियां इन्हीं पर आश्रित होती है। शिक्षक छात्रों की व्यक्तिगत भिन्नता को शिक्षण में महत्व देते है। व्यक्तिगत भिन्नता को जानते हुए व्यक्तिगत अध्ययन की आवश्यकता होती है।

बालक की भिन्नताओं के होते हुए भी प्रकृति तथा स्वभाव संबंधी सामान्य विशेषताए होती है। बालक के द्वारा अनुभव किये जाने योग्य अमूर्त वस्तुओं के अध्ययन के लिए कतिपय प्रविधियां विकसित की गयी है। इनमें से केस स्टडी प्रमुख है।

9.3.2 डाल्टन योजना

अमरीका के डाल्टन नामक स्थान में 1912 से 1915 के बीच कुमारी हेलेन पार्कहर्स्ट ने शिक्षा की एक नई विधि प्रयुक्त की जिसे डाल्टन योजना कहते हैं। इस विधि का अविष्कार कक्षाशिक्षण के दोषों को दूर करने के लिए किया गया था। डाल्टन योजना में कक्षाभवन का स्थान प्रयोगशाला ले लेती है। प्रत्येक विषय की एक प्रयोगशाला होती है, जिसमें उस विषय के अध्ययन के लिए पुस्तकें, चित्र, मानचित्र तथा अन्य सामग्री के अतिरिक्त सन्दर्भग्रंथ भी रहते हैं। विषय का विशेषज्ञ अध्यापक प्रयोगशाला में बैठकर छात्रों की सहायता करता है, उनके कार्यों की जाँच तथा संशोधन करता है। वर्ष भर का कार्य 9 या 10 भागों में बाँटक निर्धारित कार्य (असाइनमेंट) के रूप में प्रत्येक छात्र को लिखित दिया जाता है। छात्र उस निर्धारित कार्य को अपनी रुचि के अनुसार विभिन्न प्रयोगशालाओं में जाकर पूरा करता है। कार्य आवन्टियों में बँटा रहता है। जितनी आवन्टि का कार्य पूरा हो जाता है उतनी का उल्लेख उसके रेखापत्र (ग्राफकार्ड) पर किया जाता है। एक मास का कार्य पूरा हो जाने पर ही दूसरे मास का निर्धारित कार्य दिया जाता है। इस प्रकार छात्र की उन्नति उसके किए हुए कार्य पर निर्भर रहती है। इस योजना में छात्रों को अपनी रुचि और सुविधा के अनुसार कार्य करने की छूट रहती है। मूल स्रोतों से अध्ययन करने के कारण उनमें स्वावलंबन भी आ जाता है। इस योजना के अनेक रूपांतर हुए जैसे– बटेविया, विनेटका आदि योजनाएँ। डेक्रौली योजना यद्यपि इससे पूर्व की है, फिर भी उसके सिद्धांतों में डाल्टन योजना के आधार पर परिवर्तन किए गए।

9.3.3 निगमनात्मक तथा आगमनात्मक

पाठ्यविषय को प्रस्तुत करने के दो ढंग हो सकते हैं। एक में छात्रों को कोई सामान्य सिद्धांत बताकर उसकी जाँच या पुष्टि के लिए अनेक उदाहरण दिए जाते हैं। दूसरे में पहले अनेक उदाहरण देकर छात्रों से कोई सामान्य नियम निकलवाया जाता है। पहली विधि को निगमनात्मक विधि और दूसरी को आगमनात्मक विधि कहते हैं। ये विधि व्याकरण शिक्षण के लिए सबसे उपयुक्त मानी जाती है।

9.3.4 संश्लेषणात्मक तथा विशेषणात्मक

दूसरे दृष्टिकोण से शिक्षण विधि के दो अन्य प्रकार हो सकते हैं। पाठ्यवस्तु को उपस्थित करने का ढंग यदि ऐसा हैं कि पहले अंगों का ज्ञान देकर तब पूर्ण वस्तु का ज्ञान कराया जाता है तो उसे संश्लेषणात्मक विधि कहते हैं। जैसे हिंदी पढ़ाने में पहले वर्णमाला

सिखाकर तब शब्दों का ज्ञान कराया जाता है। तत्पश्चात् शब्दों से वाक्य बनवाए जाते हैं। परंतु यदि पहले वाक्य सिखाकर तब शब्द और अंत में वर्ण सिखाए जाएँ तो यह विश्लेषणात्मक विधि कहलाएगी क्योंकि इसमें पूर्ण से अंगों की ओर चलते हैं।

9.3.5 वस्तुविधि

शिक्षण का एक प्रसिद्ध सूत्र हैं– ''मूर्त से अमूर्त की ओर''। वास्तव में हमें बाह्य संसार का ज्ञान अपनी ज्ञानेंद्रियों के द्वारा होता है जिनमें नेत्र प्रमुख हैं। किसी वस्तु पर दृ ष्टि पड़ते ही हमें उसका सामान्य परिचय मिल जाता है। अतः मूर्त वस्तु ज्ञान प्रदान करने का सबसे सरल साधन है। इसीलिये आरंभ से वस्तुविधि का सहारा लिया जाता है अर्थात् बच्चों को पढ़ाने के लिए वस्तुओं का प्रदर्शन करके उनके विषय में ज्ञान प्रदान किया जाता है। यहाँ तक कि अमूर्त को भी मूर्त बनाने का प्रयास किया जाता है। जैसे, तीन और दो, पाँच को समझाने के लिए पहले छात्रों के सम्मुख तीन गोलियाँ रखी जाती हैं। फिर उनमें दो गोलियाँ और मिलाकर सबको एक साथ गिनाते हैं तब तीन और दो, पाँच स्पष्ट हो जाता है।

9.3.6 दृष्टांत विधि

वस्तुविधि का एक दूसरा रूप है– दृष्टांतविधि। वस्तुविधि में जिस प्रकार वस्तुओं के द्वारा ज्ञान प्रदान किया जाता है दृष्टांत विधि में उसी प्रकार दृष्टांतों के द्वारा। दृष्टांत दृश्य भी हो सकते हैं और श्रव्य भी। इसमें चित्र, मानचित्र, चित्रपट आदि के सहारे वस्तु का स्पष्टीकण किया जाता है। साथ ही उपमा, उदाहरण, कहानी, चुटकुले आदि के द्वारा भी विषय का स्पष्टीकरण हो सकता है।

9.3.7 कथनविधि एवं व्याख्यानविधि

वस्तु एवं दृष्टांत विधियों से ज्ञान प्राप्त करते हुए जब बच्चों को कुछ अनुमान करने तथा अप्रत्यक्ष वस्तु को भी समझने का अभ्यास हो जाता है तब, कथन विधि का सहारा लिया जाता है। इसमें वर्णन के द्वारा छात्रों को पाठ्यवस्तु का ज्ञान दिया जाता है। परंतु इस विधि में छात्र अधिकतर निष्क्रिय श्रोता बने रहते हैं और पाठन प्रभावशाली नहीं होता। इसी से प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री हर्बर्ट स्पेंसर ने कहा है– ''बच्चों को कम से कम बतलाना चाहिए, उन्हें अधिक से अधिक स्वतः ज्ञान द्वारा सीखना चाहिए''। व्याख्यान विधि इसी की सहचरी है। उच्च कक्षाओं में प्रायः व्याख्यान विधि का ही प्रयोग लाभदायक समझा जाता है।

कथन विधि में प्रायः हर्बर्ट के पाँच सोपानों का प्रयोग किया जाता है। वे हैं–

1. प्रस्तावना
2. प्रस्तुतीकरण
3. तुलना या सिद्धांतस्थापन
4. आवृत्ति
5. प्रयोग।

परंतु केवल ज्ञानार्जन के पाठों में ही पाँचों सोपानों का प्रयोग होता है। कौशल तथा रसास्वादन के पाठों में कुछ सीमित सोपानों का ही प्रयोग होता है।

9.3.8 करके सीखना

जब से बाल मनोविज्ञान के विकास ने यह सिद्ध कर दिया है कि शिक्षा का केंद्र न तो विषय है, न अध्यापक, वरन् छात्र है, तब से शिक्षण में सक्रियता को अधिक महत्व दिया जाने लगा है। करके सीखना (learning by doing) अर्थात् स्वानुभव द्वारा ज्ञान प्राप्त करना, आजकल का सर्वाधिक व्यापक शिक्षण सिद्धांत है। अतः रूसों से लेकर मांटेसरी और डीवी तक शिक्षाशास्त्रियों ने बच्चों की ज्ञानेंद्रियों को अधिक कार्यशील बनाने तथा उनके द्वारा शिक्षा देने पर अधिक बल दिया है। महात्मा गांधी ने भी इसी सिद्धांत के आधार पर बेसिक शिक्षा को जन्म दिया। अतः सक्रिय विधि के अंतर्गत अनेक विधियाँ सम्मिलित की जा सकती हैं जैसे– शोधविधि (ह्यूरिस्टिक), योजना (प्रोजेक्ट) विधि, डाल्टन प्रणाली, बेसिक–शिक्षा–विधि, इत्यादि।

9.3.9 शोधविधि

जर्मनी के प्रोफेसर आर्मस्ट्रौंग द्वारा शोधविधि का प्रतिपादन हुआ था। इस विधि में छात्रों को उपयुक्त वातावरण में रखकर स्वयं किसी तथ्य को ढूढ़ने के लिए प्रेरित किया जाता है। इसका यह अर्थ नहीं है कि अध्यापक कुछ नहीं करता और छात्रों को मनमाना काम करने को छोड़ देता है। वह छात्र का पथप्रदर्शन करता तथा उसे गलत रास्ते से हटाकर सीधे रास्ते पर लाता रहता है। उसका लक्ष्य यह रहता है कि जो ज्ञान छात्र अपने निरीक्षण अथवा प्रयोग द्वारा प्राप्त कर सकता है उसे बताया न जाए। इस विधि का प्रयोग पहले तो विज्ञान की शिक्षा में किया गया। फिर धीरे–धीरे गणित, भूगोल तथा अन्य विषयों में भी इसका प्रयोग होने लगा।

9.3.10 वर्धा योजना या बुनियादी तालीम

महात्मा गांधी की वर्धा योजना या बेसिक शिक्षा (बुनियादी तालीम) भी अपने ढंग की एक शिक्षाविधि है। गांधी जी ने देश की तत्कालीन स्थिति को देखते हुए शिक्षा में 'हाथ के काम' को प्रधानता दी। उनका विश्वास था कि जब तक छात्र हाथ से काम नहीं करता तब तक उसे श्रम का महत्व नहीं ज्ञात होता। सैद्धांतिक ज्ञान मनुष्य को अहंकारी एवं निष्क्रिय बना देता है। अतः बच्चों को आरंभ से ही किसी न किसी हस्तकौशल के द्वारा शिक्षा देनी चाहिए। हमारे देश में कृषि एवं कताई–बुनाई बुनियादी धंधे हैं जिनमें देश की तीन चौथाई जनता लगी हुई है। अतः उन्होंने इन्हीं दोनों को मूल हस्तकौशल मानकर शिक्षा में प्रमुख स्थान दिया। बेसिक शिक्षा की प्रमुख विशेषताएँ हैं :–

1.मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा,

2.हस्त कौशल केंद्रित शिक्षा,

3.सात से 14 वर्ष तक निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा,

4.शिक्षा स्वावलंबी हो, अर्थात् कम से कम अध्यापकों का वेतन छात्रों के किए हुए कार्यों की बिक्री से आ जाए।

अंतिम सिद्धांत का बड़ा विरोध हुआ और बेसिक शिक्षा में से हटा दिया गया।

अंग्रेजी शिक्षा ने देश के अधिकांश शिक्षित वर्ग को ऐसा पंगु बना दिया है कि वे हाथ से काम करना हेय मानते हैं। यही कारण है कि संपन्न तथा उच्च वर्ग के लोगों ने बुनियादी शिक्षा के प्रति उदासीनता दिखाई जिससे यह शिक्षा केवल निर्धन वर्ग के लिए रह गई है। अतः यह धीरे–धीरे असफल होती जा रही है।

9.3.11 प्रश्नोत्तर विधि (सुकराती विधि)

प्रश्न यद्यपि एक युक्ति है फिर भी सुकरात ने प्रश्नोत्तर को एक विधि के रूप में प्रयोग करके इसे अधिक महत्व प्रदान किया है। इसी से इसे सुकराती विधि कहते हैं। इसमें प्रश्नकर्ता से ही प्रश्न किए जाते हैं और उसके उत्तरों के आधार पर उसी से प्रश्न करते–करते अपेक्षित उत्तर निकलवा लिया जाता है।

सुकरात 469–399 ई. पू. यूनान के सुप्रसिद्ध दार्शनिक एवं अध्यापक थे। इन्होंने शिक्षा का उद्देश्य मानव की विचारशक्ति का विकास माना है। ये सम्पर्क द्वारा शिक्षा देते थे। इनके वार्तालाप के तीन चरण थे–

1. मानव से किसी विषय के सम्बन्ध में पूछते और उससे स्वीकार कर लेते थे।
2. विषय के सम्बन्ध में अनेक प्रश्न कर उसे गलत या सही का ज्ञान कराते थे।
3. प्रश्न के माध्यम से यथार्थ ज्ञान एवं समुचित विचार का ज्ञान देते थे।

सुकरात महोदय की विधि 'प्रश्न विधि' थी। प्रश्न विधि को ही सुकराती विधि कहा जाता है। वास्तव में सुकराती विधि कोई नई विधि नहीं है। भारतीय संस्कृत साहित्य में प्रश्नोपनिषद ग्रन्थ हैं जिसमें प्रश्न की परम्परा है।

(A) सुकराती विधि के गुण

1. प्रश्न विधि में ज्ञान को थोपा नहीं जाता है।
2. बालक को उसकी रूचि के अनुसार शिक्षा दी जाती है।
3. जिज्ञासा इच्छा को जाग्रत करके ही शिक्षा दी जाती है।
4. स्वतः शिक्षा की प्रेरणा दी जाती है।
5. ज्ञान या विषय वस्तु का सम्बन्ध पूर्वज्ञान पर आधारित होता है।
6. अशुद्ध उत्तरों को शुद्ध एवं व्यवस्थित करने की व्यवस्था है।
7. बालक को ज्ञान अधिकार पूर्वक दिया जाता है।
8. इस विधि के द्वारा बालक की विचारशक्ति का विकास किया जाता है क्योंकि किसी भी बात को तर्क, विचार करके ही स्वीकार किया जाता है।

(B) सुकराती विधि के दोष

1. बालक प्रश्नों के जंजाल में फंस जाते हैं।
2. इस विधि में व्यंग्य का प्रमुख स्थान है। वयस्कों के लिए तो उनको किसी बात का ज्ञान नहीं है, व्यंग्य को प्रयोग किया जा सकता है। परन्तु बालकों के लिए ऐसा करना सर्वथा अनुचित है क्योंकि ज्ञानार्जन के लिए सहायता और सहानुभूति की आवश्यकता होती है।
3. शिक्षक के प्रश्न करने पर बालक भी प्रश्न करने लगते हैं परिणामतः प्रश्नमय वातावरण हो जाता है।
4. यह विधि बालकों के लिए उपयोगी नहीं है।
5. बालकों के मार्गदर्शन की व्यवस्था नहीं है।
6. इसमें व्याख्या, वर्णन चित्र आदि की व्यवस्था नहीं है।
7. अधिक प्रश्न वातावरण को प्रतिकूल बना देते है।

शिक्षाविदों ने सुकराती विधि में अनेक दोष बताये हैं। पेस्तालोंजी सुकराती विधि अनिवार्य रूप से बालकों के लिए असम्भव है क्योंकि उनके लिए प्रारम्भिक ज्ञान की पृष्ठभूमि और अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए बाह्य साधन–भाषा दोनों की आवश्यकता होती है। इस दोष के होते हुए भी सुकराती विधि का अपना एक विशिष्ट महत्व है।

9.3.12परिचर्चा विधि

जनतान्त्रिक शिक्षण नीतियों में परिचर्चा विधि को भी सम्मिलित किया जाता है। क्योंकि जनतन्त्र में प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचार अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता है। अतः ऐसी परिचर्चाए छात्रों की कक्षा–कक्ष में कराया जाना उन्हें जनतान्त्रिक नीतियों ओर विधियों के लिए तैयार करना है। विचार–विमर्श के अन्तर्गत जब छात्र किसी शैक्षिक समस्या को अलग–अलग दृष्टिकोंण से सोचते है तो उन्हें इस प्रक्रिया में विषय वस्तु की गहराई तक सोचना पड़ता है समस्या का बारीकी से विश्लेषण कर उसे तार्किक क्रम में प्रस्तुत करना होता है ये सभी शैक्षिक क्रियाएँ उसे उच्च मानसिक स्तर का प्रशिक्षण प्रदान करती है।

DISCUSS शब्द का विश्लेषण इसके अर्थोत्पत्ति का भेद स्पष्ट करता है। DISCUS का शाब्दिक अर्थ हिलाना अर्थात मन्थन या सच को खोजना या वादनुवाद गहन चर्चा करना। यह एक समाजीकृत विधि है। जिसमें अध्यापक और छात्र परस्पर मिलजुल कर किसी प्रकरण या समस्या पर स्वतन्त्र वातावरण में विचारों का आदान–प्रदान करते है।

जेम्स, एम. ली. के अनुसार ''वाद–विवाद या विचार–विमर्श एक शैक्षिक सामूहिक क्रिया है जिसमें शिक्षक तथा छात्र सहयोगी रूप से किसी समस्या या प्रकरण पर बातचीत करते है।''

बोध प्रश्न

प्रश्न 13: डाल्टन योजना का प्रतिपादन किसने किया?

....

....

प्रश्न 14: डाल्टन योजना को परिभाषित कीजिये?

....

....

प्रश्न 15: किसी एक शिक्षण सूत्र का नाम लिखिए?

....

....

(A) परिचर्चा विधि के प्रकार (Types of Discussion Method)

1. **अनौपचारिक**– इस प्रकार की परिचर्चा के लिए किन्हीं निर्धारित नियमों या किसी पूर्व निर्धारित पद्धति की आवश्यकता नहीं है। इसमें भाग लेने वाले प्रकरण पर स्वतन्त्र रूप से अपने विचारों की अभिव्यक्ति करते जिसे शिक्षक द्वारा नेतृत्व दिया जाता है। जो छात्रों को बोलने के लिए प्रेरित भी करता है। और प्रकरण की समीक्षा भी करता है।

2. **औपचारिक**– इसमें प्रत्येक कार्य विधिवत ढंग से किया जाता है इसका संचालन पूर्व निर्धारित नियमों या विशिष्ट पद्धति के अनुसार किया जाता है। इस प्रकार के वाद–विवाद (परिचर्चा) के लिए छात्र स्वयं में से सभापति, मन्त्री तथा अन्य पदाधिकारियों का चयन करते है। विचार–विमर्श में भाग लेने वाले सभी प्रतिभागी (छात्र) इनके निर्देशन में समस्त कार्यों को करते है। इसमें शिक्षक एक पथ–प्रदर्शक की भूमिका निभाता है। प्रस्तुत शोध में विधि के इसी स्वरूप का चयन व अनुसरण किया जायेगा। जिससे शोधकर्त्ता को अधिगम क्षेत्र में अपेक्षित व्यवहार गत परिवर्तनों की प्राप्ति हो सके।

(B) परिचर्चा की पूर्व तैयारी

किसी भी कार्य में पूर्ण सफलता प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि उसकी पूर्व योजना बना लेना आवश्यक है। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु इसके लिए निम्नांकित व्यवस्था अनिवार्य है–

1. कक्षा में छात्रों के बैठने की विशेष व्यवस्था की जानी चाहिए जिसमें अर्धचंद्राकार बैठक व्यवस्था सर्वोत्तम मानी जाती है।
2. शिक्षक के लिए ऐसा स्थान निर्धारित करें जहाँ से वह सभी छात्रों पर निगाह रख सके।
3. कक्षा का वातावरण ऐसा बनायें कि छात्र स्वतन्त्रता पूर्वक अपने विचारों की अभिव्यक्ति कर सके।
4. परिचर्चा की विषय वस्तु स्पष्ट होनी चाहिए।
5. परिचर्चा के लिए निर्धारित विषय के सम्बन्ध स्पष्टीकरण के साथ–साथ छात्रों को उससे सम्बन्धित साहित्य, पत्र–पत्रिकाएँ, पुस्तकालय आदि से महत्वपूर्ण अंश पढ़ने के लिए प्रेरित करें जिससे परिचर्चा का शैक्षिक दृष्टि से उपयोगी परिणाम प्राप्त हो सके।

(C) परिचर्चा विधि के गुण (Merits Discussion Method)

1. यह विधि स्वतन्त्र अध्ययन पर जोर देती है।
2. यह करके सीखना सिद्धान्त पर आधारित है।
3. यह स्वाध्याय की आदत को विकसित करने में सहायक है।
4. व्यक्तिगत विभिन्नताओं के होते हुए भी प्रत्येक को महत्व दिया जाता है।
5. छात्रों में उद्देश्य पूर्ण अध्ययन की आदत बनती है।
6. छात्र विषय वस्तु का चयन तथा संगठन करना सीखते है।
7. यह विषय मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त पर आधारित है।
8. इस विधि में अस्पष्ट तथ्यों को भी आपसी विचार–विमर्श द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।
9. इस पद्धति में विद्यार्थी स्वयं समस्या का निराकरण कर ज्ञान की खोज करते है।
10. इससे छात्रों में विचार अभिव्यक्ति के क्षेत्र में आत्मविश्वास बढ़ता है।

(D) परिचर्चा विधि के दोष (Demerits of Discussion Method)

1. प्रशिक्षित अध्यापक ही इसका सफल संचालन कर सकते है।
2. सन्तोषप्रद मूल्यांकन प्राप्ति में समय अधिक लगता है।
3. छोटे बच्चों पर इसका प्रयोग कठिन होता है।
4. वैचारिक वैमनस्य उत्पन्न होने का भय रहता हैं
5. विषय वस्तु का पूर्ण ज्ञान न होने पर सफलता संदिग्ध है।
6. मन्द बुद्धि व पिछड़े बालकों पर इसका प्रयोग कठिन है।
7. परिचर्चा के समय विषय से भटकने की सम्भावना अधिक है।
8. सफल आयोजन में समय अधिक लगता है।

9.3.13सीखने के स्टेशन

विद्यार्थियों को एक दूसरे से सीखने के अवसर प्रदान करने का यह सरल तरीका सीखने के स्टेशन वाली प्रणाली है। इसमें आवश्यकतानुसार विद्यार्थियों को 4 से 6 या अधिक समूह में बाँटा जाता है। एक–एक समूह को एक–एक स्टेशन के रूप में संबोधित किया जाता है। प्रत्येक प्रकरण को लर्निंग स्टेशन के रूप में संबोधित किया जाता है। प्रत्येक लर्निंग स्टेशन को किसी प्रकरण का एक हिस्सा दिया जाता है। इस प्रकार किसी प्रकरण में जितने हिस्से बन सके, उतने लर्निंग स्टेशन बनाने चाहिए। एक मुद्दे पर काम करने के लिए एक निश्चित समय निर्धारित करने के बाद सभी समूहों को एक–एक स्टेशन आगे बढ़ते हुए अगले हिस्से पर काम करने को कहा जाता है। इस प्रकार धीरे–धीरे आगे बढ़ते हुए पूरी कक्षा उस प्रकरण के समस्त हिस्सों पर अपनी समझ बना लेती है। शिक्षक लर्निंग स्टेशन के लिए आवश्यक संसाधन और आवश्यकता पड़ने पर मार्गदर्शन देने का कार्य करता है।

9.3.14ओपन स्पेस तकनीक

शिक्षक विद्यार्थियों को एक सामान्य मुद्दे पर चर्चा करने के लिए आमंत्रित करता है। बैठक के लिए एक बड़े गोल घेरे में व्यवस्था की जाती है, जिससे सभी विद्यार्थी एक–दूसरे को देख सकें। शिक्षक बैठक के मुद्दे से परिचित कराते हुए सम्पूर्ण प्रक्रिया से अवगत कराएगा। इसके बाद शिक्षक थीम या मुद्दे से जुड़े विभिन्न पहलुओं या विषय के लिए इच्छुक प्रतिभागी को आमंत्रित करेगा।

9.3.15क्लोज टेस्ट

बच्चों में तर्कशक्ति एवं शब्द ज्ञान को विकसित करने हेतु यह अत्यंत प्रभावी विधि है। इसे क्लोज ने विकसित किया था। इसमें कोई एक पैराग्राफ चयन कर उसे श्यामपट्ट पर लिखा या अभ्यास के लिए दिया जा सकता है। लिखते समय कुछ महत्वपूर्ण जानकारियों को गायब कर उसकी जगह खाली/रिक्त स्थान रखा जाता है। पूरे वाक्य को पढ़कर विद्यार्थी को सोच–समझकर, तर्क के आधार पर अपने शब्द ज्ञान एवं भावार्थ के आधार पर खाली स्थानों में उचित शब्द लिखने के लिए चयन करना पड़ता है। इसके माध्यम से विद्यार्थियों में चिंतन क्षमता, तार्किक क्षमता, शब्द ज्ञान, भावार्थ समझने की क्षमता, भाषाई पकड़, कल्पना शक्ति आदि का विकास होता है।

9.3.16 Wh–टेम्पलेट

प्रायः विद्यार्थियों को प्रकरण संबंधित मूलभूत बातें पता नहीं होती। कक्षा का वातावरण भी ऐसा होता है कि विद्यार्थी अपने शिक्षक से अपनी शंका/जिज्ञासाओं का समाधान नहीं कर पाते। इन परिस्थितियों में अध्ययन–अध्यापन का कार्य प्रायः अधूरा ही रह जाता है और मात्र एक औपचारिक शिक्षण ही हो पाता है। सीखने के क्रम में प्रश्न पूछना अथवा जिज्ञासा समाधान एक महत्वपूर्ण कड़ी होती है। इस कड़ी को बेहतर ढंग से संपन्न करवाने में Wh-टेम्पलेट महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। सर्वप्रथम विद्यार्थियों को प्रश्न पूछने का अवसर प्रदान करें। कक्षा में एक दीवार पर चार्ट में Wh-टेम्पलेट लगाए। जब भी कोई प्रकरण पढ़ाएँ Wh-टेम्पलेट के अनुसाार ही पढ़ाएं व विद्यार्थियों के प्रश्नों के उत्तर दें।

9.3.17 क्रोनो–लॉग

कई बार हमें कई ऐसी चीजें ध्यान में रखनी पड़ती हैं जिनमें एक विशेष क्रम होता है। कभी–कभी भौतिकीय विज्ञान में क्रम का बहुत महत्व होता है। ऐसी स्थिति में आप यदि इन घटनाओं को क्रम से क्रोनो–लॉग के रूप में लिखकर अपने सामने या कक्षा में एक विशेष स्थान पर प्रदर्शित कर सकें तो उन्हें देखकर बच्चे ऐसी घटनाओं को क्रम–सहित याद कर सकते हैं। इस प्रविधि के उपयोग से विद्यार्थियों की स्मरण शक्ति, जानकारियों का क्रमवार संयोजन करने, विश्लेषण व संश्लेषण करने के कौशल का विकास होता है।

9.3.18 माइन्ड मैप

जब किसी विषय–वस्तु की अवधारणा पर अच्छी तरह से समझ विकसित हो जाए एवं उसमें समाहित समस्त बिन्दुओं को मस्तिष्क में लंबे समय तक सुरक्षित रखा जाए तो अर्जित किया हुआ ज्ञान सदैव काम आता है। ऐसे कौशल को विकसित करने में सबसे अहम बात यह है कि हम यह समझ लें कि अध्ययन किए जा रहे प्रकरण की प्रकृति एवं उसमें उल्लिखित बातों का वर्गीकरण किस तरह किया है जैसे प्रकरण क्या है, उसके मुख्य तथ्य क्या हैं आदि। जब तथ्यों का वर्गीकरण हो जाता है तो प्रकरण पर एक समग्र समझ बन जाती है। इस दौरान हमें सूचनाओं का विश्लेषण करने का अभ्यास हो जाता है तथा सूचनाओं को उचित प्रारूप में रखने की समझ भी विकसित होती है। माइन्ड मैप किसी प्रकरण को लंबे समय तक याद रखने में सहायक होता है। किसी भी विषय के विभिन्न विषय–वस्तु पर उनकी प्रकृति एवं व्याख्या के आधार पर प्रमुख विचारों, तथ्यों, बिन्दुओं को चिन्हांकित किया जाए एवं उससे जुड़े समस्त सहायक विचारों, तथ्यों, बिन्दुओं को रेखाचित्र के माध्यम से कम से कम शब्दों या चित्रों या प्रतीकों द्वारा प्रस्तुत किया जाए–उसे माइंड मैप कहते हैं।

9.3.19 वेब थीम

अध्ययन व अध्यापन दोनों का क्रमबद्ध, चरणबद्ध एवं योजनाबद्ध होना आवश्यक होता है। यदि हम अपने पठन व लेखन को किसी प्रारूप में नहीं बाँधते, तो कुछ बिन्दू छूट जाते हैं। ऐसी परिस्थितियों में यदि हम पढ़ाए जाने वाले तथ्यों का संयोजन निर्धारित प्रारूप में चरणबद्ध रूप में कर सकें, तो उस प्रकरण का प्रभावी प्रस्तुतीकरण किया जा सकता है। ज्ञान के क्रमबद्ध, चरणबद्ध एवं योजनाबद्ध संयोजन को वेब थीम कहा जाता है। प्रकरण की कुछ प्रकृतियाँः घटनाओं का क्रम मुख्य विचार व उसके सहायक विचार कारण और प्रभाव आधारित प्रकरण वर्गीकरण आधारित प्रकरण आदि। इससे विद्यार्थियों में विषय की शीघ्र

समझ, चिंतन कौशल, संक्षिप्तीकरण, विश्लेषण, संश्लेषण, प्रस्तुतीकरण आदि कौशलों का विकास होगा।

9.3.20 अभिनय

सक्रिय शिक्षण का एक नया आयाम अभिनय है। इससे अध्ययन किए जाने वाले विषय को चलते–फिरते पात्रों के माध्यम से संप्रेषित किया जाए तो उसका प्रभाव चिरस्थाई हो सकता है। यदि शिक्षण सारगर्भित व मनोरंजक हो तो उसका प्रभाव विद्यार्थियों के मस्तिष्क में सदैव के लिए अंकित हो जाता है। स्थाई ज्ञानार्जन के साथ विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के विकास में भी यह विधि सहायक है। भौतिकीय विज्ञान में अनेक प्रकरण ऐसे होते हैं जिन्हें विद्यार्थी समूह में पढ़कर उन पर आधारित लघु–नाटिका तैयार कर सकते हैं। इससे विद्यार्थी प्रकरण को गहराई से समझ पाएँगे तथा इससे उनके लेखन कौशल का भी विकास हो सकेगा। इससे विद्यार्थियों की चिंतन शक्ति तार्कित शक्ति स्मरण शक्ति आदि का विकास होगा।

9.3.21 शैक्षिक खेल

समय–समय पर विद्यार्थियों को पढ़ाई की बोरियत दूर करने और पढ़ने में मज़ा लाने के लिए विभिन्न शैक्षिक खेल खिलाए जा सकते हैं। इन शैक्षिक खेलों को खिलाने से न केवल विद्यार्थियों को मजा आएगा वरन बच्चे विभिन्न अवधारणाओं को खेल के माध्यम से सीख सकते हैं। शिक्षक को पाठ की ऐसी अवधारणाओं/क्षेत्रों की पहचान करनी होगी जहाँ पर शैक्षिक खेल खिलाए जा सकें। इनका स्तर विद्यार्थियों के स्तर के अनुरूप होना चाहिए।

9.3.22 श्लोक सूत्र

प्रायः पुराने जमाने में लोग किसी कठिन चीज को याद करने के लिए श्लोक या किसी सूत्र का सहारा लेते थे। प्राचीन काल में लोग बड़ी–बड़ी चीजें याद रख लेते थे। ऐसा श्लोक सूत्रों की पहचान करके किया जा सकता है।

9.3.23 ह्ारेस्टिक विधि

ह्यूरेस्टिक विधि कोई नवीन विधि नहीं है। इस प्रकार की विधि का प्रयोग सदैव होता रहा है, जिसमें छात्र एक खोजकर्ता के रूप में अधिगम करता है। उसके स्वयं की खोज को प्रोत्साहित करना हैं। ग्रीक भाषा में 'ह्यूरेस्टिक' का अर्थ खोज अथवा अन्वेषण है और इस विधि का उद्देश्य छात्र को खोजकर्त्ता के रूप में रखना है। यह विधि प्रो. आर्मस्ट्रांग द्वारा प्रतिपादित की गई है, जिनका जन्म 1848 में तथा मृत्यु 1937 में हुई। वे इम्पीरियल कॉलेज, लन्दन में रसायनशास्त्र के प्रोफेसर थे। उन्होंने ह्यूरेस्टिक विधि को सन्त डंस्टन महाविद्यालय में प्रयोग में लिया तथा छात्र की उत्सुकता एवं रुचि पर बल देते हुए ज्ञान अर्जित करने पर बल दिया। इस प्रक्रिया में छात्र कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास करता है।

प्रो. आर्मस्ट्रांग ने द टीचिंग ऑफ साइंटिफिक मेथड नामक पुस्तक लिखी है, जिसमें उन्होंने लिखा है– ''शिशु अवलोकन एवं प्रयोग करके सीखता है। इस आयु में बुद्धि विकास अद्भुत होता है। हमें यह देखना है कि इस प्रकार की अभिवृत्ति को विद्यालयी स्तर पर कैसे बनाये रखा जाये और उसका क्या प्रभाव होगा।''

प्रो. आर्मस्ट्रांग का मत था कि अन्य शिक्षण विधियों के साथ–साथ ह्यूरेस्टिक विधि का प्रयोग किया जाये, क्योंकि ह्यूरेस्टिक विधि एक धीरे चलने वाली प्रविधि है। उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि प्रयोग करने के लिए शिक्षक द्वारा सुझाव दिये जाने चाहिए।

(A) ह्यूरेस्टिक विधि के लाभ (Merits of Heuristic Method)

प्रो. आर्मस्ट्रांग के अनुसार ह्यूरेस्टिक विधि के कुछ लाभ निम्नलिखित हैं–

1. ह्यूरेस्टिक विधि विज्ञान की प्रकृति के निकट है।
2. छात्रों में जिज्ञासा तथा खोज अभिवृत्ति का विकास होता है।
3. छात्रो में अनेक कौशल विकसित हैं, जैसे– उपकरणों को व्यवस्थित करना, प्रयोग करना आदि।
4. छात्रों में सावधानी और स्वच्छता की आदत विकसित होती है।
5. छात्रों में अवलोकन का कौशल विकसित होता है। यह सही एवं पर्याप्त होना चाहिए।
6. किसी भी कार्य को धैर्य से करने की क्षमता विकसित होती है।
7. तार्किक प्रविधि आधारित चिन्तन विकसित होता है।
8. निर्णय लेने की क्षमता आती है।
9. छात्र सामान्य तथ्यों में रुचि लेता है।
10. छात्र प्रयोगिक कार्य करने से गहन बोध अर्जित करते हैं।

(B) ह्यूरेस्टिक विधि की सीमाएँ (Limitations of Heuristic Method)

1. यह विधि अधिक समय लेती है।
2. इस विधि में छात्रों से शोधकर्त्ता के रूप में अधिक आशाएँ होती हैं।
3. यह विधि प्रयोग आधारित होने के कारण अधिक उपकरण एवं सुविधाएँ चाहती है इसलिए महँगी है।
4. सामान्यतः विज्ञान शिक्षक इस विधि में प्रशिक्षण प्राप्त नहीं है।
5. पाठ्यचर्या की सीमाएँ, छात्रों की विवशता तथा परम्परागत प्रविधियों का उपयोग इस विधि के प्रयोग में बाधक है।

9.3.24 खेल / गतिविधि प्रविधि

इस प्रविधि के अन्तर्गत खेल के माध्यम से शिक्षा देने की व्यवस्था की जाती है। हेनरी काल्डवेल कुक ने सर्वप्रथम बालकों की खेल की मूल प्रवृत्ति को शिक्षा हेतु प्रयोग करने पर बल दिया ताकि शिक्षा और शिक्षण के प्रति उनकी रुचि बनी रहे। भाषा, साहित्य, इतिहास, नागरिक शास्त्र आदि विषयों के शिक्षण के लिए निम्न स्तर पर इस प्रविधि को प्रयुक्त किया जा सकता है।

ह्यूजेज एवं ह्यूजेज के अनुसार– ''वह विधि जो बालकों को उसी उत्साह से सीखने की क्षमता देती है तथा जो उनमें स्वाभाविक रूप में पायी जाती है, प्रायः क्रीड़ा विधि कहलाती है।''

(A) खेल प्रविधि की विशेषताएँ (Characterstics of Play way Technique)

खेल प्रविधि की विशेषताएँ निम्न हैं–

1. खेल प्रविधि में बालकों की रुचि एवं क्रिया को अधिक महत्त्व दिया जाता है।
2. इसके प्रयोग द्वारा ज्ञान अधिक स्थायी हो जाता है।
3. खेल प्रविधि के माध्यम से कठिन विषय को भी सरल व रुचिकर बनाया जा सकता है।
4. खेल प्रविधि द्वारा बालकों में चरित्र निर्माण किया जाता है।
5. खेल के द्वारा अधिगमकर्ताओं में सामाजिकता की भावना का विकास होता है।
6. खेल द्वारा बालकों में समन्वय, सद्भावना एवं सहयोग की भावना का विकास होता है।
7. खेल द्वारा बालकों का शारीरिक एवं मानसिक विकास किया जाता है।
8. बालकों का ज्ञानात्मक विकास भी खेल प्रविधि द्वारा किया जा सकता है।

(B) खेल प्रविधि के दोष (Demerits of Play way Technique)

खेल प्रविधि के दोष निम्नलिखित हैं–

1. इस प्रविधि के माध्यम से समस्त विषयों का अध्ययन–अध्यापन सम्भव नहीं हो पाता है।
2. इस प्रविधि के माध्यम से शैक्षिक गतिविधियों एवं उत्कर्ष की प्राप्ति में व्यवधान उत्पन्न हो जाता है।
3. इस प्रविधि में शारीरिक विकास को मानसिक तथा संवेगात्मक विकास की तुलना में अधिक महत्त्व दिया जाता है।

9.3.25 रूचिपूर्ण / आनन्दयी शिक्षण

रुचिपूर्ण शिक्षण एक ऐसा उपागम है जिसके द्वारा रुचिपूर्ण ढ़ग से प्रत्यक्ष रूप से छात्रों में रुचि एवं जिज्ञासा उत्पन्न करने के लिए अधिगम कराया जाता है। रुचि उत्पन्न हो जाने पर छात्र स्वयं अधिगम के लिए प्रेरित होते हैं। शिक्षक विद्यालयी वातावरण को शिक्षण कार्यों के लिए अधिक रुचिकर एवं प्रभावशाली बना सकते हैं। वर्तमान समय में केवल पुस्तकीय ज्ञान ही जीवन के संघर्षों का सामना करने के लिए पूर्ण सफल नहीं है। अतः शिक्षकों को रूचिपूर्ण सामग्रियों का उपयोग करके अपने शिक्षण को प्रभावी एवं आकर्षक बनाने का प्रयास करना चाहिए। रुचिपूर्ण शिक्षण एक सुनियोजित प्रक्रिया है। यह विद्यालय का वातावरण रुचिपूर्ण एवं आनन्ददायी बनाकर छात्रों को सीखने के लिए प्रेरित करता है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 16: बेसिक शिक्षा या बुनियादी तालीम के बारे में सर्वप्रथम किसने बताया?

....

....

प्रश्न 17: सुकरात कहाँ के दार्शनिक और विचारक थे?

....

....

प्रश्न 18: ह्यूरेस्टिक विधि का विकास किसने किया?

....

....

रुचिपूर्ण शिक्षण का तात्पर्य शिक्षण की ऐसी विधाओं से है जो बालक की रुचियों को ध्यान में रखते हुए उनके सर्वांगीण विकास हेतु विकसित की गई हैं। वैयक्तिक भिन्नता के कारण प्रत्येक छात्र की रुचि भिन्न–भिन्न होती है। रुचि एक मानसिक संवेग है जिसके आधार पर कोई वस्तु एक छात्र को अच्छी लगती है तो दूसरे को खराब। इसलिए शिक्षक को छात्रों की रुचि के अनुरूप शिक्षण सहायक सामग्रियों का प्रयोग करना चाहिए। उदाहरण के लिए– विषयानुसार चार्ट, मॉडल, चित्र, प्रोजेक्टर आदि सामग्रियों के प्रयोग करना चाहिए। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि रुचिपूर्ण शिक्षण एक समयबद्ध क्रियाविधि तथा सुविचारित रणनीति है। यह शिक्षण के लिए रुचिपूर्ण बालकेन्द्रित प्रणाली है। इस उपागम में शिक्षक छात्रों को आनन्दित करने वाले क्रिया–कलाप करते हैं तथा शिक्षक मित्रवत् तथा आत्मीय व्यवहार करते हैं। रुचिपूर्ण शिक्षण एक ऐसी विधा है जो शिक्षण को रोचक एवं प्रभावी बनाकर शिक्षा के सार्वभौमिक लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायक होती है।

(A) रुचिपूर्ण शिक्षण की विशेषताएँ (Characterstics of Joyful Teaching)

रुचिपूर्ण शिक्षण की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं–

1. छात्रों की अन्तर्निहित शक्तियों का विकास करके उनका सर्वांगीण विकास किया जाता है।
2. शिक्षण के रुचिपूर्ण तरीकों को अपनाकर शिक्षण कार्य को छात्रों की रुचि के अनुरूप बनाया जाता है।
3. छात्र करके सीखने की प्रवृत्ति से प्रेरित होते है।
4. छात्रों के लिए रुचिपूर्ण एवं आनन्ददायी शिक्षण का प्रयोग किया जाता है।
5. उबाऊ एवं अनाकर्षक वातावरण को हटाकर रोचक वातावरण उत्पन्न किया जाता है।
6. शिक्षण सहायक सामग्रियो को उपयोग करके शिक्षण कार्य को रोचक बनाने का प्रयास किया जाता है।

(B) रुचिपूर्ण शिक्षण अधिगम की क्रियाविधि (Process of Joyful Teaching)

छात्रों के अधिगम में क्रियाविधियों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। जब शिक्षक किसी विशेष योग्यता के लिए कोई गतिविधि करते हैं तो उसका छात्रों पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार से उन्हें जो अधिगम होता है वह स्थायी होता है। छात्र जिन क्रियाविधियों के द्वारा सरलता से सीखते हैं वे निम्नलिखित हैं–

1. **गीत / कविता (Song/Poem)**– छात्रों को गीत, कहानी या कविताओं में रुचि होती है। इसलिए कविता या गीत को माध्यम बनाकर यदि शिक्षण किया जाए तो छात्रों को विषय–वस्तु रुचिकर लगती है तथा उनकी समझ में शीघ्र आ जाता है।
2. **कहानी चित्रण (Story Writing)**– शिक्षक कहानी शिक्षण को रोचक व आनन्दपूर्ण ढंग से सिखाने के लिए विभिन्न सामग्रियों का उपयोग करके शिक्षण कार्य को रोचक बना सकते हैं। छात्रों को कहानियों का चित्र बनाकर दिखाएँ तथा उसके आधार पर कहानी बनाने को कहें। इससे छात्र अधिगम के लिए प्रेरित होते हैं तथा शिक्षण अधिगम के प्रति उनमें रुचि जाग्रत होती है।
3. **खेल (Play)**– खेल के माध्यम से भी छात्रों में अधिगम के लिए रुचि उत्पन्न की जा सकती है। सभी छात्र खेल में सक्रिय रूप से भाग लेना चाहते हैं। अतः रुचिपूर्ण शिक्षण का वातावरण उत्पन्न करने के लिए शिक्षकों को खेल गतिविधि का प्रयोग करना चाहिए।
4. **नाटक (Drama)**– विद्यालयों में विभिन्न अवसरों पर नाटकों का आयोजन करके शिक्षक विद्यालय में रुचिपूर्ण अधिगम (वातावरण) निर्मित कर सकते हैं।
5. **भ्रमण (Excursion)**– रुचिपूर्ण शिक्षण के लिए छात्रों के भ्रमण का भी प्रबन्धन विद्यालय द्वारा किया जाना चाहिए। छात्र भ्रमण के माध्यम से बहुत सी वस्तुओं का निरीक्षण करते हैं तथा प्रत्यक्षरूप से अवलोकन करते हैं, जो उनके शैक्षिक अधिगम में सहायक होता है। अतः विद्यालय द्वारा भ्रमण की भी व्यवस्था की जानी चाहिए।
6. **पहेली (Puzzle)**– कक्षा–कक्ष में शिक्षण कार्य करते समय शिक्षक रुचिपूर्ण शिक्षण के लिए पहेलियों को सम्मिलित कर सकते हैं। कुछ विषय छात्रों को उबाऊ लगते हैं जिससे वे शीघ्र ही थकान अनुभव करने लगते हैं। ऐसी स्थिति में यदि शिक्षक कुछ सहायक सामग्री या मनोरंजन के लिए पहेलियों का प्रयोग करता है तो शिक्षण कार्य रुचिपूर्ण हो जाता है।
7. **वार्तालाप (Conversation)**– शिक्षक छात्रों से वार्तालाप करके भी रुचिपूर्ण शिक्षण का वातावरण बना सकते हैं। यदि शिक्षक छात्र के साथ मित्रवत व्यवहार करते हैं तो छात्र भी अपनी समस्याओं को सरलतापूर्वक शिक्षक के समक्ष प्रस्तुत कर देते हैं तथा शिक्षक भी उनकी समस्याओं का समाधान सरलता से कर ले जाते हैं। इससे छात्रों में शिक्षा के प्रति रुचि उत्पन्न होती है।
8. **विभिन्न वस्तुओं का प्रयोग (Uses of Different Things)**– सहायक सामग्री के रूप में शिक्षक विभिन्न वस्तुओं का प्रयोग करके शिक्षण को रुचिपूर्ण बना सकते हैं। नित्य नई–नई क्रियाविधियों के प्रयोग से छात्र शिक्षण अधिगम में अधिक रुचि लेते हैं।

9.4 सारांश

भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अनेक विधियाँ है जैसे केस स्टडी में छात्रों की उपलब्धियों में स्थान, कक्षा–शिक्षण के स्वरूप, प्रक्रिया, अनुदेशन प्रक्रिया को प्राथमिकता दी गयी है क्योंकि छात्रों की उपलब्धियों इन्हीं पर आश्रित होती है। शिक्षक छात्रों की व्यक्तिगत भिन्नता को शिक्षण में महत्व देते है। डाल्टन योजना में वर्ष भर का कार्य 9 या 10 भागों में बाँटकर निर्धारित कार्य (असाइनमेंट) के रूप में प्रत्येक छात्र को लिखित दिया जाता है। छात्र उस निर्धारित कार्य को अपनी रुचि के अनुसार विभिन्न प्रयोगशालाओं में जाकर पूरा करता है। निगमनात्मक में छात्रों को कोई सामान्य सिद्धांत बताकर उसकी जाँच या पुष्टि के लिए अनेक उदाहरण दिए जाते हैं। आगमनात्मक में पहले अनेक उदाहरण देकर छात्रों से कोई सामान्य नियम निकलवाया जाता है। संश्लेषणात्मक में पहले अंगों का ज्ञान देकर तब पूर्ण वस्तु का ज्ञान कराया जाता है तथा विश्लेषणात्मक में पूर्ण से अंगों की ओर चलते हैं। वस्तुविधि में बच्चों को पढ़ाने के लिए वस्तुओं का प्रदर्शन करके उनके विषय में ज्ञान प्रदान किया जाता है। ऐसे ही अन्य शिक्षण विधियाँ है जैसे दृष्टांत विधि में कथनविधि एवं व्याख्यानविधि, करके सीखना, शोधविधि, वर्धा योजना या बुनियादी तालीम, प्रश्नोत्तर विधि (सुकराती विधि), परिचर्चा विधि, सीखने के स्टेशन, ओपन स्पेस तकनीक, क्लोज टेस्ट, क्रोनो–लॉग, माइन्ड मैप, वेब थीम, अभिनय, शैक्षिक खेल, श्लोक सूत्र, ह्यूरेस्टिक विधि, खेल/गतिविधि प्रविधि और रुचिपूर्ण/आनन्ददायी शिक्षण।

9.5 अभ्यास प्रश्न

1. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम के अर्थ को स्पष्ट कीजिए?
2. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम को परिभाषित कीजिए?
3. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम के विभिन्न प्रकारों का विस्तार से वर्णन कीजिए?
4. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम के विभिन्न प्रकारों का वर्गीकरण कीजिए?
5. भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम के विभिन्न प्रकारों का विस्तार से वर्णन कीजिए?

9.6 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम पर चर्चा करेगें।
2. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में नवीन उपागम के विभिन्न प्रकारों पर चर्चा करेंगें।

9.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. पाठ्यक्रम के साथ जो भी सहायक क्रियाएं विद्यालय में विद्यार्थियों को उपलब्ध करवाई जाती हैं, उन्हें पाठ्य–सहगामी क्रियाएं कहा जाता है।
2. पाठ्य सहगामी क्रिया द्वारा व्यक्तिगत विभिन्नताओं के परिणाम स्वरूप विभिन्न योग्यताओं का विकास किया जाता है।

3. विज्ञान क्लब में अध्यक्ष चेयरमैन, सचिव, कोषाध्यक्ष, पुस्तकालयाध्यक्ष, प्रचार अधिकारी आदि पदाधिकारी सम्मिलित रहते है।

4. भौतिक विज्ञान मेलों का सरकारी आयोजन एन.सी.ई.आर.टी. (N.C.E.R.T) कराता है।

5. भौतिक विज्ञान मेलों का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों को अपने विचारों को प्रयोग करने और कक्षा अधिगम को अधिक सृजनात्मक ढंग से प्रयोग करने के लिए प्रोत्साहित करना है।

6. भौतिक विज्ञान अधिगम में भ्रमण से वास्तविक जीवन के अधिगम–अनुभव प्राप्त होते हैं। ये साधन विद्यार्थी को उनके सामाजिक और प्राकृतिक वातावरण के बारे में बताते हैं। इस प्रकार के भ्रमणों से पूर्व–अर्जित अर्थात् पहले से प्राप्त अधिगम को पुनर्बलन मिलता हैं।

7. अभिक्रमित अनुदेशन विधि एक संगणक सहायक अनुदेशन विधि है जो मनोवैज्ञानिक सिद्धांतो पर आधारित है, जिसमे छात्र को स्वंय सिखने के अवसर प्राप्त होते है।

8. अभिक्रमित अनुदेशन 5 प्रकार का होता है, रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन, शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन, मैथेटिक्स अभिक्रमित अनुदेशन, स्वनिर्देशित अभिदेशित अनुदेशन, कम्प्यूटर आधारित अभिक्रमित अनुदेशन।

9. रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन का प्रतिपादन बी. एफ. स्किनर ने किया।

10. रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन आपरेण्ट प्रतिबद्ध अनुक्रिया प्रतिमान सिद्धांत पर आधारित है।

11. रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन में सीखने की प्रक्रिया रेखीय अभिक्रम से अभिप्राय 'सीधी रेखा का अभिक्रम या कार्यक्रम' है जिसमें विद्यार्थी प्रारम्भिक व्यवहार से अन्तिम व्यवहार तक सीधी रेखा की तरह चलता रहता है।

12. मैथेटिक्स अभिक्रमित अनुदेशन का प्रतिपादन टी.एफ. गिल्बर्ट ने किया।

13. डाल्टन योजना का प्रतिपादन हेलेन पार्खर्स्ट्र ने किया।

14. प्रत्येक विषय की एक प्रयोगशाला होती है, जिसमें उस विषय के अध्ययन के लिए पुस्तकें, चित्र, मानचित्र तथा अन्य सामग्री के अतिरिक्त सन्दर्भग्रंथ भी रहते हैं। विषय का विशेषज्ञ अध्यापक प्रयोगशाला में बैठकर छात्रों की सहायता करता है, उनके कार्यों की जाँच तथा संशोधन करता है।

15. मूर्त से अमूर्त की ओर।

16. बेसिक शिक्षा या बुनियादी तालीम के बारे में सर्वप्रथम महात्मा गांधी ने बताया।

17. सुकरात यूनान के दार्शनिक और विचारक थे।

18. ह्यूरेस्टिक विधि का विकास प्रो. आर्मस्ट्रांग ने किया।

संदर्भ ग्रंथ

- **बहला, मुकुट बिहारी एवं अग्रवाल संजय (2011).** *सामान्य विज्ञान शिक्षण,* अग्रवाल पब्लिकेशनन्स, आगरा।

- **कुमार, दीपक, (2016).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* ओसीन पब्लिकेशन वाराणसी।

- **कुलश्रेष्ठ, एस. पी. (2009).** *शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार,* 9वाँ संस्करण, आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली।

- **मंगल, एस.के. (2002).** *भौतिक एवं जीव विज्ञान शिक्षण,* आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली।

- **मंगल, एस.के. (2008).** *साधारण विज्ञान शिक्षण,* आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली।

- **सिंह, बैस नेहरू (1999).** *शैक्षिक तकनीकी एवं कक्षा–कक्ष प्रबन्धन,* पाल पब्लिशर्ज, अमृतसर।

- **सिडाना, अशोक कुमार एवं सिडाना किरण (2002).** *विज्ञान शिक्षण, विषय वस्तु एवं शिक्षण विधियॉं,* विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

- **भौतिक विज्ञान का शिक्षणशास्त्र (2011).** शिक्षक–शिक्षा विभाग, शिक्षा विद्या शाखा, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी।

- **पुरोहित एवं जगदी□ा (1996).** *शिक्षण के लिए आयोजन,* हिन्दी ग्रन्थ अकादमी नई दिल्ली।

- **श्रीवास्तव, पी.सी. (2018).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।

- **रायजादा, रमाकर (2011).** *सामाजिक विज्ञान शिक्षण इक्कीसवीं सदी के सन्दर्भ में,* प्रवाचक क्षेत्रिय शिक्षा संस्थान–भोपाल।

- **शर्मा, एच. एस. एवं शर्मा पी. के. (1991).** *विज्ञान शिक्षण,* राधा प्रकाशन मंदिर, आगरा।

- **शर्मा, नरेन्द्र कुमार (1992).** *विज्ञान शिक्षण,* साहित्यागार, धामाणी मार्केट की गली, चौड़ा रास्ता, जयपुर।

- **शर्मा, आर. के. एवं दुबे, एस. के. (2014).** *भाषायी समझ प्रारम्भिक साक्षरता एंव हिन्दी शिक्षण,* राधा प्रकाशन मन्दिर प्रा. लि. आगरा।

- **शर्मा, आर.सी. (2008).** *आधुनिक विज्ञान शिक्षण,* धनपत राय एंड सन्स, नई दिल्ली।

- **सक्सेना, राधारानी (2006).** *नवाचार शिक्षण पद्धतियाँ,* शिक्षण आयोजन, आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली।
- **सोनी, अनिता त्यागी एवं ओंकार सिंह (2007).** *जीव विज्ञान शिक्षण,* अरिहंत शिक्षा प्रकाशन, जयपुर।
- **सुन्द्रियाल, सुनीता (2019).** *टीचिंग ऑफ फिजिकल साइंस,* अग्रवाल पब्लिकेशन, कानपुर।
- **सूद, जे.के. (2010).** *विज्ञान शिक्षण,* अग्रवाल पब्लिकेशनन्स, आगरा।
- **सूद, जे.के. (2017).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* अग्रवाल पब्लिकेशन, कानपुर।
- **वालिया, जे.एस. (1990).** *शैक्षिक तकनीकी,* पाल पब्लिशर्ज, अमृतसर।
- **चौहान, रीता (2016).** *हिन्दी शिक्षण,* अग्रवाल पब्लिकेशनन्स, आगरा।
- **नेगी, जे.एस. (2020).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* श्री विनोद पुस्तक मंदिर, वाराणसी।
- **अग्रवाल, वी.पी. सिडाना, किरण एवं पारीक कल्पना (2006).** *विज्ञान शिक्षण,* शिक्षा प्रकाशन, जयपुर।

B.Ed.-E-42/B.Ed-SE-42

भौतिकीय विज्ञान का अध्यापन विज्ञान

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड — 4

भौतिकीय विज्ञान अधिगम 'का' एवं 'के' लिए आंकलन

इकाई — 10 **141**

शिक्षण में मापनीय उदेश्यों का निर्धारण, सामान्यीकरण, समस्या समाधान विधि एवं योजना विधि

इकाई — 11 **161**

उत्पाद और प्रक्रिया परिणामों के आंकलन के लिए परीक्षण पदों का निर्माण, नैदानिक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण

इकाई — 12 **171**

इकाई परीक्षण का निर्माण, ब्लू प्रिंट, परीक्षण एवं प्रश्न पत्र निर्माण

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रोफेसर सीमा सिंह — उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज कुलपति

विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर पी० के० स्टालिन — निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय — प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर छत्रसाल सिंह — प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर के० एस० मिश्रा — पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर धनन्जय यादव — विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर मीनाक्षी सिंह — आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

डॉ० जी० के० द्विवेदी — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ० दिनेश सिंह — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ० सुरेन्द्र कुमार — सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ० दिलीप कुमार सिंह — सहायक आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, सी0एम0पी0डिग्री कॉलेज, प्रयागराज (इकाई 1,2,3,4,5,6,7,8,9,10,11,12,13,14,15)

सम्पादक

प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय — प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परिमापक

प्रोफेसर नागेन्द्र कुमार — आचार्य, शिक्षा संकाय, बी0एच0यू0 वाराणसी

समन्वयक

डॉ० दिनेश सिंह — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ० सुरेन्द्र कुमार — सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक

कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

ISBN: 978-81-963573-2-0

Registrar, U. P. Rajarshi Tandon Open University, Prayagraj

©UPRTOU, 2023. Pedagogy of Biological Science is made available under a Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0

http://creativecommons.org/licences/by-sa/4.0

खण्ड परिचय

भौतिकीय विज्ञान अधिगम 'का' एवं 'के' लिए आंकलन

प्रस्तुत खण्ड में भौतिकीय विज्ञान अधिगम के मूल्यांकन की चर्चा करेगें। प्रस्तुत खण्ड में शिक्षण में मापनीय उद्देश्यों का निर्धारण, समस्या समाधान विधि एवं योजना विधि, नैदानिक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण, वस्तुनिष्ठ परीक्षण के निर्माण का विवेचन करेगें। भौतिकीय विज्ञान अधिगम के मूल्यांकन की चर्चा तीन इकाईयों में विभाजित कर करेंगे, जिनका विवरण इस प्रकार है–

इकाई–10 : प्रस्तुत इकाई में शिक्षण में मापनीय उद्देश्यों का निर्धारण, समस्या समाधान विधि एवं कार्य विधि के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में शिक्षण में मापनीय उद्देश्यों का निर्धारण, संज्ञानात्मक क्षेत्र के उद्देश्य, भावनात्मक क्षेत्र के उद्देश्य, क्रियात्मक क्षेत्र के उद्देश्य, समस्या समाधान विधि, समस्या की विशेषताएं, समस्या समाधान विधि के चरण, समस्या समाधान विधि के गुण, समस्या समाधान विधि के दोष, प्रोजेक्ट विधि, प्रोजेक्ट की विशेषताएं, कार्य विधि के सिद्धान्त, कार्य विधि के चरण, कार्य विधि के गुण, कार्य विधि के दोष और कार्य विधि में अध्यापक की भूमिका के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई–11 : प्रस्तुत इकाई में नैदानिक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में नैदानिक परीक्षण, अच्छे नैदानिक परीक्षण की विशेषताएँ, नैदानिक परीक्षण की रचना, नैदानिक परीक्षण की आवश्यकता, नैदानिक परीक्षण के उपयोग, उपचारात्मक शिक्षण, उपचारात्मक शिक्षण के उद्‌देश्य, उपचारात्मक शिक्षण का महत्व, उपचारात्मक शिक्षण की पद्धतियॉ, उपचारात्मक शिक्षण प्रदान करने की विधियाँ और उपचारात्मक शिक्षण के समय सावधानियाँ के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई–12 : प्रस्तुत इकाई में वस्तुनिष्ठ परीक्षण का निर्माण के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में वस्तुनिष्ठ परीक्षण, उद्देश्यों का निर्धारण, प्रश्नों की रचना एवं उनका मूल्याकन, निर्मित प्रश्नों को लागू करना, प्रश्न–विश्लेषण, पद विश्लेषण की विधि, सामान्य–स्तर निर्धारण, विश्वसनीयता निर्धारण, वैधता निर्धारण और परीक्षण का अन्तिम प्रारूप के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई–10 सामान्यीकरण, समस्या विधि एवं योजना विधि

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 शिक्षण में मापनीय उद्देश्यों का निर्धारण

10.3.1 संज्ञानात्मक क्षेत्र के उद्देश्य

10.3.2 भावनात्मक क्षेत्र के उद्देश्य

10.3.3 क्रियात्मक क्षेत्र के उद्देश्य

10.4 समस्या समाधान विधि

10.4.1 समस्या की विशेषताएं

10.4.2 समस्या समाधान विधि के चरण

10.4.3 समस्या समाधान विधि के गुण

10.4.4 समस्या समाधान विधि के दोष

10.5 योजना विधि

10.5.1 योजना की विशेषताएं

10.5.2 योजना विधि के सिद्धान्त

10.5.3 योजना विधि के चरण

10.5.4 योजना विधि के गुण

10.5.5 योजना विधि के दोष

10.5.6 योजना विधि में अध्यापक की भूमिका

10.6 सारांश

10.7 अभ्यास प्रश्न

10.8 चर्चा के बिन्दु

10.1 प्रस्तावना

शिक्षा जगत में शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण और उनका वर्गीकरण एक महत्वपूर्ण पद है यह विद्यार्थी के बौद्धिक विकास में योगदान देती है। इसके वर्गीकरणों के उपयोग से विद्यार्थी एक विषय को अपने तरीके से समझ सकता है और उसके समाधानो पर अपनी सोच से विचार कर सकता है। शैक्षिक उद्देश्यों के निर्धारण और उनके वर्गीकरण माध्यम से विद्यार्थी के विचारों की गहराईयों का विश्लेषण बड़े उपयोगी रूप से कर सकता है। यहाँ अध्यापक एक सहायक की तरह होता है जो विचारों को समझने में केवल सहायता करता है। इस तरह विद्यार्थी स्वतंत्र चिंतक बन जाता है। मानव जीवन में अनेक समस्याएं आती

है, जिससे उसमें तनाव, द्वन्द, संघर्ष, विफलता, निराशा जैसी प्रवृतियाँ जन्म लेती है। किसी समस्या का समाधान प्राप्त करने के लिए क्रमबद्ध तरीके से किसी सामान्य विधि तथा प्रदर्शित विधि का उपयोग करना पड़ता है समस्या समाधान अधिगम के अंतर्गत जीवन में आने वाली नवीन समस्याओं को हल करने के तरीकों का सीखना आता है। प्रोजेक्ट (योजना) विधि शिक्षण की नवीन विधि मानी जाती है। इसका विकास शिक्षा में सामाजिक प्रवृत्ति के फलस्वरूप हुआ। शिक्षा इस प्रकार दी जानी चाहिए जो जीवन को समर्थ बना सके। इसके प्रवर्तक जान डीवी के शिष्य डब्ल्यू.एच. किलपैट्रिक थे। यह विधि अनुभव केन्द्रित होती है। यह बालकों के समाजीकरण पर विशेष बल देती है। योजना विधि में छात्रों के जीवन से संबंधित समस्याओं को वास्तविक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। विद्यार्थी समस्या की अनुभूति करते हैं। समस्या समाधान की योजना तैयार की जाती है। इसके लिए अनेक सूचनाओं को एकत्रित किया जाता है। शिक्षक केवल निर्देशक/सुगमकर्ता का कार्य करता है। विद्यार्थी स्वंय विषय वस्तु सामग्री का अध्ययन करके समस्या का समाधान करते है।

प्रस्तुत इकाई में हम शिक्षण में मापनीय उद्देश्यों का निर्धारण, संज्ञानात्मक क्षेत्र के उद्देश्य, भावनात्मक क्षेत्र के उद्देश्य, क्रियात्मक क्षेत्र के उद्देश्य, समस्या समाधान विधि, समस्या की विशेषताएं, समस्या समाधान विधि के चरण, समस्या समाधान विधि के गुण, समस्या समाधान विधि के दोष, प्रोजेक्ट विधि, प्रोजेक्ट की विशेषताएं, कार्य विधि के सिद्धान्त, कार्य विधि के चरण, कार्य विधि के गुण, कार्य विधि के दोष और कार्य विधि में अध्यापक की भूमिका के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको शिक्षण में मापनीय उद्देश्यों का निर्धारण, समस्या समाधान विधि एवं कार्य विधि को समझने में सुविधा होगी।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेगें कि–

- शिक्षण में मापनीय उद्देश्यों को परिभाषित कर सकेंगे।
- शिक्षण में मापनीय उद्देश्यों के विभिन्न प्रकारों का वर्गीकरण कर सकेंगे।
- समस्या समाधान विधि का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
- समस्या समाधान विधि के विभिन्न चरणों का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
- कार्य विधि का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
- कार्य विधि के विभिन्न चरणों का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।

10.3 शिक्षण में मापनीय उद्देश्यों का निर्धारण

शिक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें बहुत से कारक शामिल होते हैं। सीखने वाला अपने लक्ष्यों की ओर बढ़ते हुए नया ज्ञान, आचार और कौशल को समाहित करता है ताकि उसके सीखने के अनुभवों में विस्तार हो सके, वैसे ही ये सारे कारक आपस में संवाद की स्थिति में आते रहते हैं। शिक्षण की इस प्रक्रिया में सर्वप्रथम शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। शिक्षण के उद्देश्यों के निर्धारण के लिए ब्लूम द्वारा वर्गीकृत, ब्लूम की वर्गिकी (Blooms Taxonomy) का प्रयोग किया जाता है। ब्लूम की वर्गिकी शिक्षा के अन्तर्गत 'सीखने के उद्देश्यों' के वर्गीकरण से सम्बन्धित है। यह नाम बेंजामिन ब्लूम के नाम पर रखा गया है जो उक्त वर्गीकरण सुझाने वाली समिति के अध्यक्ष थे। ब्लूम टेक्सॉनोमी 1956 में विकसित किया गया था। इसके निर्माता महान शैक्षिक मनोवैज्ञानिक बेंजामिन ब्लूम हैं। उन्होंने इसका निर्माण शिक्षा के क्षेत्र में सोच के उच्च्च प्रपत्र को बढ़ावा देने के लिए

किया था। इसका प्रथम उद्देश्य शिक्षा के अवधारणाओं, प्रक्रियाओं और सिद्धांतों के विश्लेषण और मूल्यांकन का है। शिक्षण में सीखने के एक से अधिक प्रकार हैं। बेंजामिन ब्लूम के नेतृत्व में, कॉलेजों की एक समिति ने शैक्षिक गतिविधियों के तीन डोमेनों की पहचान की है–

1. संज्ञानात्मक क्षेत्र के उद्देश्य
2. भावनात्मक क्षेत्र के उद्देश्य
3. क्रियात्मक क्षेत्र के उद्देश्य

10.3.1 संज्ञानात्मक क्षेत्र के उद्देश्य

संज्ञानात्मक क्षेत्र के उद्देश्य में ज्ञान तथा बौद्धिक कौशलों का विकास शामिल है। इसमें विशेष तथ्यों का पुनःस्मरण या पहचान, प्रक्रियागत स्वरूप एवं परिकल्पनाएं शामिल हैं जो बौद्धिक क्षमताओं तथा कौशलों के विकास में मदद करती हैं। कुल छः मुख्य श्रेणियां हैं, जो सरलतम से आरम्भ होकर सबसे जटिल तक के क्रम में नीचे सूचीबद्ध हैं। इन श्रेणियों को कठिनाइयों के क्रम के रूप में सोचा जा सकता है। यानि, इसके पहले कि दूसरा सीखा जाए, पहले पर महारथ हासिल करनी होगी।

1. **ज्ञान (Knowledge)** – इस वर्ग में विद्यार्थियों को पाठ्यवस्तु के विशिष्ट तथ्य पदों, परंपराओं, प्रचलनों, वर्गो, कसौटियों का प्रत्यय विज्ञान, प्रत्यास्मरण कराने का प्रयास किया जाता है।

   कार्य सूचक शब्दः परिभाषित करना, वर्णन करना, पहचान करना, जानता करना, लेबल्स, सूचियां, मिलान, नाम, रूपरेखाएं, याद रखकर दोहराना, पहचानना, पुनरुत्पादित करना, चुनना आदि है।

   उदाहरणः कोई नीति बोलें। स्मृति द्वारा ग्राहक को मूल्य बताएं। सुरक्षा नियमों की जानकारी रखें।

2. **बोध (Comprehension)** – ज्ञान वर्ग में बच्चों को जो ज्ञान कराया जाता है। बोध में उसके बारे में समझ विकसित की जाती है। अनुवाद, प्रक्षेप, एवं निर्देशों के अर्थ समझना तथा समस्याओं की व्याख्या। अपने शब्दों में समस्या का कथन। ज्ञान के बिना अवबोध करना आसान नहीं है।

   कार्य सूचक शब्दः समझना, परिवर्तित करना, बचाव करना, अंतर करना, अनुमान करना, वर्णन करना, सामान्यीकरण करना, उदाहरण करना, निष्कर्ष निकालना, व्याख्या करना, सविस्तार व्याख्या करना, अनुवाद करना, भविष्यवाणी करना, पुनर्लेखन करना, सारांश देना, अनुवाद करना आदि है।

   उदाहरणः टेस्ट राइटिंग के सिद्धांतों का पुनर्लेखन। एक जटिल कार्य करने के चरणों का स्वयं के शब्दों में वर्णन करना। एक समीकरण का कम्प्यूटर स्प्रेडशीट में अनुवाद करता है।

3. **प्रयोग (Application)** – आत्मसात किए हुए ज्ञान को परिस्थितियों के अनुसार प्रयोग करना। किसी परिकल्पना का नई परिस्थिति में उपयोग या एक अमूर्त कल्पना का स्वतः उपयोग करें। कक्षा में सीखी गई बातों का कार्यस्थल पर नई स्थितियों में अनुप्रयोग होता है।

   कार्य सूचक शब्दः अनुप्रयोग करना, बदलाव, गणना करना, निर्माण करना, प्रदर्शित करना, खोज करना, हेरफेर करना, रूपांतरण करना, भविष्यवाणी करना,

तैयार करना, उत्पादित करना, सम्बन्ध स्थापित करना, दिखाना, हल करना, उपयोग करना आदि है।

उदाहरणः किसी कर्मचारी की छुट्टी की अवधि की गणना के लिए एक मैनुअल का उपयोग करना। एक लिखित परीक्षा की विश्वसनीयता के आकलन के लिए सांख्यिकी के सिद्धांतों का अनुप्रयोग करना।

4. **विश्लेषण (Analysis)** – आत्मसात किये हुए ज्ञान में से अलग–अलग करने की क्षमता। वस्तु या परिकल्पना को विभिन्न भागों में अलग करना ताकि उसका संगठनात्मक ढांचा समझा जा सके। तथ्यों एवं निष्कर्षों के बीच अंतर कर सकना।

   कार्य सूचक शब्दः विश्लेषण करना, विखंडित करना, तुलना करना, विषमता दिखलाना, चित्र, विनिर्माण, अंतर करना, भेद करना, पहचानना, दर्शाना, निष्कर्ष, रूपरेखा बनाना, सम्बन्ध स्थापित करना, चुनना, अलग–अलग करना आदि है।

   उदाहरणः तार्किक अनुमान द्वारा एक उपकरण की समस्या दूर करना। तर्कों में तार्किक दोष पहचानना। किसी विभाग से सूचना एकत्रित करता है तथा प्रशिक्षण के लिए आवश्यक कार्य चुनता है।

5. **संश्लेषण (Synthesis)** – पाठ्यवस्तु में दिए हुए संप्रत्यय, नियमों के आधार पर उनमें से अपने अनुसार संप्रत्य निकालना। विविध तत्वों से एक ढांचा या पैटर्न बनाता है। एक नए अर्थ या ढांचे पर जोर देकर हिस्सों को जोडकर सम्पूर्ण बनाता है।

   कार्य सूचक शब्दः श्रेणीबद्ध करना, मिलाना, एकत्रित करना, तैयार करना, बनाना, सृजित करना, डिजाइन करना, वर्णन करना, जनित करना, संशोधित करना, संगठित करना, योजना बनाना, पुनर्व्यवस्थित करना, पुनर्निर्माण करना, सम्बन्ध स्थापित करना, पुनर्संगठित करना, दोहराना, पुनर्लेखन करना, सारांशीकृत करना, बताना, लिखना आदि है।

   उदाहरणः किसी कम्पनी के ऑपरेशन या प्रक्रिया का मैनुअल लिखना। एक विशिष्ट कार्य के लिए एक मशीन डिजाइन करना। एक समस्या के हल के लिए स्रोतों से प्राप्त प्रशिक्षण को एकीकृत करता है। नतीजे की बेहतरी के लिए प्रक्रिया में संशोधन करता है।

6. **मूल्यांकन (Evaluation)** – विचारों तथा सामग्रियों के मूल्य पर निर्णय करना। सीखे हुए ज्ञान का मूल्यांकन करना कि ज्ञान को कितनी हद तक आत्मसात किया है ।

   कार्य सूचक शब्दः मूल्यांकन करना, तुलना करना, निष्कर्ष निकालना, विषमता पहचानना, आलोचना करना, बचाव करना, वर्णन करना, भेद करना, आकलन करना, वर्णन करना, व्याख्या करना, औचित्य सिद्ध करना, सम्बन्ध बनाना, सारांशीकृत करना, समर्थन करना आदि है।

   उदाहरणः सबसे असरदार हल चुनना। सबसे योग्य उम्मीदवार चुनना। एक नए बजट का वर्णन करना तथा औचित्य सिद्ध करना।

10.3.2 भावत्मक क्षेत्र के उद्देश्य

भावात्मक डोमेन (क्रेथवोल, ब्लूम, मासिआ, 1973) में वे तरीके शामिल हैं जिनसे हम बातों का भावात्मक रूप से सामना करते हैं, जैसे कि भावनाएं, मूल्य, तारीफ, उत्साह, प्रेरणा

एवं वृत्तियां। पांच मुख्य श्रेणियां सरलतम व्यवहार से अत्यंत जटिल के क्रम में सूचीबद्ध की गई हैं:

1. **आग्रहण या ध्यान देना (Receving or Attending)** – बच्चों को अभिप्रेरित करना ताकि बच्चे अध्यापक द्वारा पढ़ाई गई सामग्री में इच्छित हो। बच्चों को इस प्रकार से अभी प्रेरित करना कि विद्यार्थियों में मानवीय मूल्यों को भली भांति ग्रहण करने के लिए पर्याप्त इच्छा जागृत हो जाए।

   कार्य सूचक शब्दः पूछना, चुनना, वर्णन करना, अनुसरण करना, देना, रखना, पहचान करना, जगह मालूम करना, नाम बताना, इंगित करना, बैठना, खड़ा करना, उत्तर देना, उपयोग करना आदि है।

   उदाहरणः अन्य को सम्मानपूर्वक सुनना। नए परिचय कराए गए लोगों के नाम सुनकर याद रखना।

2. **अनुक्रिया (Responding)** – सीखने वालों की ओर से सक्रिय भागीदारी। एक विशेष परिघटना को समझकर उसपर प्रतिक्रिया देता है। सीखने के नतीजे उत्तर देने में अचूकता पर या उत्तर देने में संतुष्टि (प्रेरकता) बल दे सकते हैं।

   कार्य सूचक शब्दः उत्तर देना, मदद करना, सहायता करना, पालन करना, सदृश बनाना, विचार विमर्श करना, अभिवादन करना, सहायता करना, लेबल करना, अनुशीलन करना, प्रस्तुत करना, पढ़ना, बांचना, रिपोर्ट देना, चुनना, बताना, लिखना आदि है।

   उदाहरणः कक्षा में विचार विमर्श में भाग लेना। प्रस्तुतिकरण देना। नए आदर्शों, परिकल्पनाओं, प्रारूपों आदि को पूरी तरह समझने के लिए प्रश्न करना। सुरक्षा नियमों की जानकारी होना तथा उनका उपयोग।

3. **आकलन (Value)** – इस स्तर पर विद्यार्थियों में किसी विशेष मूल्य को स्वीकार करने व किसी विशेष मूल्य के प्रति अधिक लगाव या अभिरुचि प्रकट करते हुए उसके पालन के लिए वचनबद्ध होने की योजना को विकसित करने का प्रयास किया जाता है।

   कार्य सूचक शब्दः पूरा करना, प्रदर्शित करना, अंतर करना, समझाना, अनुसरण करना, बनाना, पहल करना, आमंत्रित करना, जुड़ना, औचित्य सिद्ध करना, प्रस्तावित करना, पढ़ना, रिपोर्ट देना, चुनना, बांटना, अध्ययन करना, कार्य करना आदि है।

   उदाहरणः जनतांत्रिक प्रक्रिया में भरोसा दर्शाना। व्यक्तिगत एवं सांस्कृतिक अंतरों (मूल्यों में विविधता) के प्रति संवेदनशील होना। सामाजिक सुधार के लिए योजना प्रस्तावित करना और संकल्पित होकर फॉलोअप करना।

4. **संगठन (Organization)** – पूर्व अनुभव को संगठित करना। असमान मूल्यों की तुलना कर प्राथमिकता के आधार पर उन्हें जमाना, उनके बीच मतभेद दूर करना एवं अनूठा मूल्य प्रणाली सर्जित करना। तुलना करने, सम्बन्ध स्थापित करने तथा मूल्य बनाने पर जोर दिया जाता है।

   कार्य सूचक शब्दः पालन करना, बदलना, जमाना, मिलाना, तुलना करना, पूरा करना, बचाव करना, वर्णन करना, बनाना, सामान्यीकरण करना, पहचानना, एकीकृत करना, संशोधित करना, आदेश देना, संगठित करना, तैयार करना, सम्बन्ध स्थापित करना, संश्लेषित करना आदि है।

उदाहरणः स्वतंत्रत तथा जिम्मेदार रवैये के बीच संतुलन की जरूरत पहचानना, किसी के व्यवहार के लिए जिम्मेदारी स्वीकार करना। समस्याओं के हल के लिए व्यवस्थित नियोजन की भूमिका का वर्णन करना। व्यावसायिक नैतिक मानक स्वीकार करना। क्षमताओं, रुचियों एवं मान्यताओं के सामंजस्य से जीवन की योजना बनाना। संगठन, परिवार एवं स्वयं की जरूरतें पूरी करने के लिए प्रभावी तरीके से समय की प्राथमिकता तय करना आदि है।

5. **मूल्यों का चरित्रीकरण/विशेषीकरण करना (Characterization)** – इसमें विद्यार्थियों के व्यक्तिगत और सामाजिक मूल्यों के समन्वय से उत्पन्न जिस मूल्य प्रणाली अथवा चरित्र की भूमिका बन चुकी होती है उसे विशेष रूप से प्रदान करने का प्रयत्न किया जाता हैं। एक मूल्य प्रणाली, जो उनके व्यवहारों को नियंत्रित करती है। यह व्यवहार व्यापक है, एक समान, अनुमान योग्य एवं सबसे महत्वपूर्ण रूप से शिक्षार्थी के लिए चरित्रगत है। निर्देशात्मक लक्ष्य छात्र के समायोजन के सामान्य पैटर्न (व्यक्तिगत, सामाजिक, भावनात्मक) से ताल्लुक रखते हैं।

   कार्य सूचक शब्दः कार्य करना, अंतर करना, प्रभावित करना, सुनना, संशोधित करना, प्रदर्शित करना, अभ्यास करना, प्रस्तावित करना, योग्यता हासिल करना, प्रश्न करना, सुधारना, देना, हल करना, पुष्टि करना आदि है।

   उदाहरणः स्वतंत्र रूप से कार्य करते हुए भरोसा दर्शाना। समूह गतिविधियों में सहयोग करना (टीमवर्क दर्शाता है)। समस्या के हल के लिए विषयाश्रित पद्धति अपनाना। रोजमर्रा की गतिविधियों में नैतिक कार्यों के लिए व्यावसायिक प्रतिबद्धता दर्शाना। निर्णय संशोधित करना तथा नए साक्ष्य के आधार पर व्यवहार परिवर्तन करना। लोगों का मूल्यांकन वे क्या हैं, इसके आधार पर करना, न कि वे कैसे दिखते हैं, इस आधार पर।

10.3.3 क्रियात्मक क्षेत्र के उद्देश्य

क्रियात्मक क्षेत्र के उद्देश्य (सिम्पसन, 1972) में शारीरिक हलचल, समन्वय एवं मोटर–कौशल क्षेत्र शामिल हैं। इन कौशलों के विकास के लिए अभ्यास की आवश्यकता होती है तथा इसका मापन गति, अचूकता, दूरी, प्रक्रिया या निष्पादन में तकनीकों के तौर पर किया जाता है। पांच मुख्य श्रेणियां सरलतम से सर्वाधिक जटिल व्यवहार के रूप में सूचीबद्ध हैंः

1. **प्रत्यक्षीकरण (Perception)** – महसूस कर सकने वाले संकेतों का उपयोग कर मोटर गतिविधि के मार्गदर्शन करने की क्षमता। यह संकेत के चयन द्वारा इंद्रियगत उत्तेजन से लेकर अनुवाद तक होता है।

   कार्य सूचक शब्दः चुनना, वर्णन करना, पहचानना, अंतर करना, विभेद करना, अलग करना, सम्बन्ध जोड़ना, चुनना आदि है।

   उदाहरणः .गैर–संवादी, संवाद–संकेत पहचानना। फेंकने के बाद गेंन्द कहां गिरेगी इसका अनुमान लगाना और उसके बाद गेंन्द को पकड़ने के लिए सही जगह पर जाना। भोजन की गन्ध और स्वाद के हिसाब से सही तापमान रखने के लिए स्टोव का ताप बदलना।

2. **व्यवस्था (Mental Set)** – कार्य करने की तैयारी। इसमें मानसिक, शारीरिक तथा भावनात्मक समूह शामिल हैं। ये तीन समूह वे स्थितियां हैं जो विभिन्न स्थितियों के

लिए एक व्यक्ति की प्रतिक्रिया पूर्वनिर्धारित करती हैं (इन्हें मानसिकता भी कहा जाता है)।

कार्य सूचक शब्दः आरम्भ करना, प्रदर्शित करना, समझाना, हटाना, आगे बढ़ना, प्रतिक्रिया व्यक्त करना, दर्शाना, कथन करना, स्वेच्छा से करना आदि है।

उदाहरणः एक उत्पादन प्रक्रिया के विभिन्न चरणों के क्रम जानना और उनके अनुसार क्रिया करना। किसी की क्षमताएं एवं सीमाएं समझना। एक नई प्रक्रिया सीखने की इच्छा दर्शाना (प्रेरणा)।

नोटः साइकोमोटर का यह उपविभाजन प्रभावी डोमेन के उपविभाजन "परिघटनाओं के लिए अनुक्रिया" से नजदीक से जुड़ा है।

3. **निर्देशित अनुक्रिया (Guided Response)** – एक जटिल कौशल सीखने में आरम्भिक अवस्थाएं जिनमें अनुकृति तथा प्रयास एवं त्रुटि शामिल है।

कार्य सूचक शब्दः नकल करना, अनुसरण करना, प्रतिक्रिया करना, पुनरोत्पादन करना, प्रतिक्रिया करना आदि है।

उदाहरणः दर्शाए अनुसार एक गणितीय समीकरण करना। प्रारूप बनाने के लिए निर्देशों का पालन करना। फोर्कलिफ्ट चलाना सीखते समय इंस्ट्रक्टर के हाथ के संकेतों के अनुसार कार्य करना आदि है।

4. **कार्यप्रणाली (Machanism)** – यह एक जटिल कौशल सीखने की मध्यवर्ती अवस्था है। बुद्धिमत्तापूर्वक प्रतिक्रिया आदत में आ गई होती है तथा गतिविधियां कुछ विश्वास एवं दक्षता के साथ की जा सकती हैं।

कार्य सूचक शब्दः जोड़ना, कैलिब्रेट करना, बनाना, खोल कर अलग करना, प्रदर्शित करना, जोड़ना, लगाना, पीसना, गर्म करना, मैनिपुलेट करना, मापना, सुधारना, मिलाना, संगठित करना, चित्र बनाना आदि है।

उदाहरणः पर्सनल कम्प्यूटर का उपयोग। रिस रहे फॉसेट को सुधारना। कार चलाना।

5. **जटिल प्रत्यक्ष अनुक्रिया (Complex-overt Machanism)** – मोटर कार्यों का कुशल निष्पादन जिसमें जटिल आंदोलन पैटर्न शामिल है। प्रवीणता को एक त्वरित, और उच्च–समन्वित प्रदर्शन द्वारा दर्शाया जाता है, जिसमें ऊर्जा की न्यूनतम आवश्यकता हो। इस श्रेणी में बिना किसी हिचकिचाहट के तथा स्वतः होने वाले प्रदर्शन शामिल हैं। उदाहरण के लिए, खिलाडी टेनिस बॉल या फुटबॉल को मारते ही अक्सर संतोष के या अपशब्द बोलने लगता है क्योंकि वह कार्य के बाद महसूस कर बता सकता है कि परिणाम क्या होगा?

कार्य सूचक शब्दः जोड़ना, कैलिब्रेट करना, बनाना, खोल कर अलग करना, प्रदर्शित करना, जोड़ना, लगाना, पीसना, गर्म करना, मैनिपुलेट करना, मापना, सुधारना, मिलाना, संगठित करना, चित्र बनाना आदि है।

उदाहरणः कार को संकरे समांतर पार्किंग में चलाना। कम्प्यूटर तेजी से एवं सही संचालित करना। पिआनो बजाते समय दक्षता प्रदर्शित करना।

बोध प्रश्न

प्रश्न 1: शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण सर्वप्रथम किसने किया? इसके कार्य सूचक शब्दों को लिखे।

....

....

प्रश्न 2: भावात्मक क्षेत्र के उद्देश्यों का वर्गीकरण किसने किया? इसके कार्य सूचक शब्दों को लिखे।

....

....

प्रश्न 3: क्रियात्मक क्षेत्र के उद्देश्यों का वर्गीकरण किसने किया? इसके कार्य सूचक शब्दों को लिखे।

....

....

10.4 समस्या समाधान विधि

समस्या समाधान विधि विज्ञान शिक्षण की महत्वपूर्ण विधि है। इसे वैज्ञानिक विधि के नाम से भी जाना जाता है। इस विधि में गहन चिन्तन और तर्क सम्मिलित होता है। यह विधि विज्ञान की महत्वपूर्ण देन है और विद्यार्थियों को इसका उचित प्रकार से प्रशिक्षण देना चाहिए। यदि एक बार विद्यार्थी इस विधि में प्रशिक्षित हो जाते हैं तो वे सभी प्रकार की समस्याओं का समाधान कर सकते हैं यहां तक कि ऐसी स्थिति में भी जिससे वे सर्वथा अनभिज्ञ हों।

समस्या समाधान विधि में विद्यार्थियों के समक्ष विषय से सम्बन्धित किसी समस्या को इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है जिससे वे उद्देश्यपूर्ण गहन चिन्तन कर सकें। विद्यार्थी अपने पूर्व ज्ञान एवं अनुभवों के आधार पर समस्या समाधान सम्बन्धी विकल्प प्रस्तुत कर सकते हैं। इस कार्य में अध्यापक उनकी सहायता करता है। विद्यार्थी प्रयोग अथवा अनुभव द्वारा विकल्पों की पुष्टि करने का प्रयत्न करते हैं और इस प्रकार वे समस्या के समाधान का मार्ग खोजकर नवीन ज्ञान और कौशल अर्जित करते हैं। इससे विद्यार्थी न केवल समस्या का समाधान करने का प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं अपितु इससे उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है, वे वैज्ञानिक विधि में कार्य करने का प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं, विषय–सम्बन्धी ज्ञान एवं अनुभव अर्जित करते हैं और जीवन के प्रति उनमें एक स्वस्थ विचारधारा का विकास भी होता है।

10.4.1 समस्या की विशेषताएं

अध्ययन के लिए चुनी गई समस्या में निम्नलिखित विशेषताएं होनी चाहिए–

1. विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत की गई समस्या का शिक्षात्मक मूल्य होना चाहिए। यह यथासंभव उनके वास्तविक जीवन अथवा परिवेश से सम्बन्धित होनी चाहिए जैसे – आकाश में इन्द्रधनुष का अध्ययन, वर्षा के समय बिजली की चमक एवं बादल का गरजना।
2. समस्या विद्यार्थियों की शारीरिक क्षमताओं तथा मानसिक स्तर के अनुकूल होनी चाहिए।

3. समस्या विद्यार्थियों की रूचि तथा दृष्टिकोण के अनुरूप होनी चाहिए।

4. समस्या चुनौतीपूर्ण होनी चाहिए जिससे विद्यार्थियों की तर्क एवं चिन्तन शक्ति का विकास हो सके।

5. समस्या पाठ्यक्रम के अनुसार, तर्कसंगत, व्यावहारिक तथा उपयोगी होनी चाहिए।

6. समस्या विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान से सम्बन्धित होनी चाहिए जिससे उसका समाधान करने में अत्यधिक कठिनाई न हो।

7. समस्या के समाधान में उपयोग किये जाने वाले उपकरण विद्यालय की प्रयोगशाला में उपलब्ध होने चाहिए।

8. समस्या विद्यार्थियों पर एक भार की तरह नहीं होनी चाहिए। समस्या ऐसी हो जिसे विद्यार्थी प्रसन्नतापूर्वक समाधान करने के लिए प्रयत्न करें।

10.4.2 समस्या समाधान विधि के चरण

विज्ञान शिक्षण में प्रयुक्त समस्या समाधान विधि में विद्यार्थी किसी भी समस्या का समाधान करने के लिए किसी प्रकार के पूर्वाग्रहों अथवा दूसरों द्वारा कही गई बातों पर आश्रित न हो कर अपने प्रयत्नों एवं पूर्व अनुभवों द्वारा समस्या का हल ढूंढता है। इस विधि के निम्नलिखित चरण हैं:

1. **समस्या को महसूस करना (Sensing a Problem)** – अध्यापक को इस प्रकार की स्थिति उत्पन्न करनी चाहिए जिससे विद्यार्थी प्रश्न पूछने की आवश्यकता अथवा समस्या को महसूस करे। अध्यापक स्वयं भी ऐसे प्रश्न पूछ सकता है जिनमें गहन चिन्तन की आवश्यकता हो और इस प्रकार विद्यार्थी समस्या को पहचान सकें। कभी–कभी विद्यार्थी स्वयं भी पुस्तकालय में पुस्तक पढ़ते हुए, प्रयोगशाला में कार्य करते समय अथवा प्रकृति में होने वाली घटनाओं से सम्बन्धित कोई शंका होने पर समस्या को महसूस कर सकते हैं। कक्षा में समस्या का प्रस्तुतीकरण अध्यापक एवं विद्यार्थियों के सहयोग से होना चाहिए। समस्या का चयन करते समय विद्यार्थियों की आयु, रूचि, उद्देश्य, योग्यता आदि का ध्यान रखना चाहिए।

2. **समस्या को परिभाषित करना (Defining a Problem)** – समस्या को ठीक प्रकार से समझने एवं उसका समाधान करने से पूर्व यह आवश्यक है कि उसे स्पष्ट, सरल एवं सुनिश्चित भाषा में परिभाषित किया जाए। समस्या को परिभाषित करते समय उसकी सीमाओं और विस्तार पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। समस्या की परिभाषा, सीमाओं आदि को स्पष्ट रूप से लिखा जाना चाहिए।

3. **समस्या का विश्लेषण (Analysis of Problem)** – समस्या को परिभाषित करने के पश्चात् उसका सावधानीपूर्वक विश्लेषण किया जाना चाहिए जिससे विद्यार्थियों को समस्या की प्रकृति और मुख्य बिन्दुओं का ज्ञान हो जाए। इसके अतिरिक्त वे समस्या समाधान की दृष्टि से उपलब्ध संसाधन, पूर्व ज्ञान आदि सम्बन्धित जानकारी भी प्राप्त कर सकते हैं।

4. **उपयुक्त आंकड़ों का संकलन (Collection of Relevant Data)** – इस चरण में विद्यार्थियों को समस्या से संबंधित आंकड़ों या सूचनाओं को एकत्रित करने के लिए प्रेरित किया जाता है। इस संबंध में अध्यापक विद्यार्थियों को निर्देश या संदर्भ देता है। ये आंकड़े पुस्तकालय निरीक्षण, प्रयोग, मॉडलों, भ्रमण, विचार–विनिमय द्वारा एकत्रित किये जाने चाहिए। इससे विद्यार्थियों में विभिन्न कौशलों का विकास

होता है। आंकड़ों का संकलन करते समय विद्यार्थियों को निम्नलिखित त्रुटियों से सावधान रहना चाहिए–

(a) यांत्रिक त्रुटियां (Mechanical Errors)– यांत्रिक त्रुटियों से अभिप्राय ऐसी त्रुटियों से है जो उस उपकरण अथवा सामान से सम्बन्धित हो जिसका उपयोग समस्या समाधान के लिए किया जाता है।

(b) व्यक्तिगत त्रुटियां (Personal Errors)– इसमें व्यक्ति द्वारा की जाने वाली त्रुटियां जैसे पक्षपात, उद्वेगपूर्ण निर्णय, असम्बन्धित तथ्यों या आंकड़ों का संग्रह आदि सम्मिलित हैं।

5. **परिकल्पनाओं का निर्माण (Formulation of Hypotheses)** – परिकल्पना से अभिप्राय समझदारीपूर्वक लगाए गए अनुमान अथवा कल्पित समाधान से है। समस्या से सम्बन्धित सूचनाओं एवं आंकड़ों के विश्लेषण और पूर्व ज्ञान एवं अनुभवों के आधार पर समस्या के कल्पित समाधान का निर्माण किया जाता है। विद्यार्थियों को अपने–अपने ढंग से परिकल्पना का निर्माण करने की स्वतन्त्रता प्रदान की जाती है जिससे समस्या के एक से अधिक कल्पित समाधान मिल जायें।

6. **परिकल्पनाओं का परीक्षण (Testing of Hypotheses)** – विद्यार्थी जितनी भी परिकल्पनाओं अर्थात् किसी समस्या के संभावित समाधानों का निर्माण करते हैं उनमें से कौन सा उचित एवं सार्थक है, इसका निर्णय इस चरण में किया जाता है। इसमें एक–एक करके सभी परिकल्पनाओं का परीक्षण किया जाता है। यह कार्य स्वाध्याय, गोष्ठी, सामूहिक विचार–विनिमय तथा प्रयोगशाला परीक्षणों आदि के आधार पर किया जाता है। इस प्रकार प्राप्त सबसे सार्थक परिकल्पना अथवा समाधान को निष्कर्ष रूप में स्वीकार कर लिया जाता है। परिकल्पनाओं का परीक्षण करते समय निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए–

(a) परिकल्पना समस्या का यथार्थ और विश्वसनीय समाधान प्रस्तुत कर सकें।

(b) समाधान पूर्व स्थापित तथ्यों एवं सिद्धान्तों के अनुकूल हो।

(c) ऐसे सभी नकारात्मक उदाहरणों तथा परिस्थितियों को ध्यान में रखा जाना चाहिए जिससे परिकल्पना की सत्यता पर संदेह उत्पन्न होता हो।

7. **निष्कर्ष निकालना**– प्रयोग तथा परीक्षण के पश्चात जो परिकल्पनाएं सही पायी जाती हैं, उन्हें स्वीकार कर लिया जाता है तथा असत्य व अपूर्ण परिकल्पनाओं को अस्वीकार कर दिया जाता है। इस प्रकार समस्या का समाधान निष्कर्ष रूप में प्राप्त किया जाता है। यह समाधान किन–किन परिस्थितियों अथवा साधनों की उपस्थिति में किस प्रकार की समस्याओं के लिए उपयोगी रहेगा, यह सामान्यीकरण भी इसी चरण में किया जाता है। इस सामान्यीकरण का प्रयोग दैनिक जीवन में आने वाली समस्याओं के समाधान में किया जा सकता है।

10.4.3 समस्या समाधान विधि के गुण

1. समस्या समाधान विधि में समस्या के समाधान का प्रयत्न किया जाता है जिससे यह विधि विज्ञान की प्रकृति से मिलती जुलती है। इसलिए विज्ञान विषय को समझने के लिए यह विधि सहायक सिद्ध होती है।
2. यह विधि विद्यार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करने में सहायक है।
3. यह विधि विद्यार्थियों को वैज्ञानिक विधि में कार्य करने का प्रशिक्षण प्रदान करती है।

4. यह विधि विद्यार्थियों और अध्यापक के मध्य मधुर सम्बन्धों के निर्माण में सहायता करती है।

5. यह विधि मनोविज्ञान के सिद्धान्तों पर आधारित है। इसमें विद्यार्थी समस्या को स्वयं महसूस करके उसके समाधान से सम्बन्धित आंकड़े एवं सूचनाएं एकत्रित करते हैं। इन आंकड़ों व सूचनाओं के विश्लेषण के आधार पर वे परिकल्पनाओं का निर्माण एवं पुष्टि करके निष्कर्ष निकालते हैं।

6. समस्या का स्वयं समाधान करने की प्रक्रिया से उनकी छिपी हुई प्रवृत्तियों जैसे रचनात्मकता, आलोचनात्मक निरीक्षण आदि का विकास होता हैं और समस्या का हल उन्हें परम सुख की अनुभूति प्रदान करता है। इस प्रकार प्राप्त ज्ञान व अधिगम स्थायी एवं प्रभावपूर्ण होते हैं।

7. विद्यार्थी समस्या समाधान विधि का प्रयोग अपने दैनिक जीवन में आने वाली समस्याओं को हल करने के लिए कर सकते हैं।

8. इस विधि के प्रयोग द्वारा गृहकार्य देना, कॉपियां जाँचना, कक्षा में अनुशासन बनाए रखना आदि कई समस्याओं का स्वतः ही निपटारा हो जाता है।

10.4.4 समस्या समाधान विधि के दोष

1. यह विधि वर्तमान भारतीय शिक्षण परिस्थितियों के अनुरूप नहीं है। इस विधि का प्रयोग करने में निम्नलिखित व्यावहारिक बाधाएं हैं—

   (a) पुस्तकालय में संसाधनों का अभाव।

   (b) अच्छी प्रयोगशालाओं का अभाव।

   (c) पाठ्यक्रम को समाप्त करने का दबाव।

   (d) अध्यापक विद्यार्थी अनुपात अधिक होना।

   (e) अनुभवी एवं सुयोग्य विज्ञान शिक्षकों की अनुपलब्धता।

   (f) शिक्षण एवं मूल्यांकन में कौशलों के विकास का कम महत्व दिया जाना।

2. इस विधि में विद्यार्थियों से अत्यधिक अपेक्षाएं की जाती हैं। वैज्ञानिक विधि से समस्या का विश्लेषण करना एवं उसका समाधान ढूंढना सभी विद्यार्थियों के लिए संभव नहीं होता।

3. पाठ्यक्रम में दिए गए सभी उपविषयों से सम्बन्धित समस्या का चयन एवं उसका नियोजन संभव नहीं होता। यदि अध्यापक समस्या—चयन कर भी ले तो भी अधिकांशतः वह समस्या विद्यार्थियों की रूचि, मानसिक स्तर, योग्यताओं आदि के अनुसार नहीं होती।

4. इस विधि में संसाधनों का अपव्यय होता है। विद्यार्थी समस्या समाधान संबंध आंकड़े एकत्रित करने, उनका विश्लेषण करने और परिकल्पनाओं का निर्माण करते समय अटकलें लगाते हैं जिससे धन, शक्ति और समय का अपव्यय होता है।

5. यह विधि विद्यार्थियों की व्यक्तिगत विभिन्नताओं के अनुरूप नहीं है।

6. इस विधि द्वारा प्राप्त ज्ञान को कहीं लिख कर नहीं रखा जाता जिससे कुछ समय पश्चात् वह विस्मृत हो सकता है।

10.5 योजना विधि

कार्य विधि प्रसिद्ध अमेरिकन शिक्षाशास्त्री जॉन डीवी के प्रयोजनवाद पर आधारित है। इस विधि के प्रवर्तक जॉन डीवी के शिष्य, कोलंबिया यूनिवर्सिटी के डॉ. विलियम. एच. किलपैट्रिक थे एवं श्री जे.ए. स्टीवेन्सन ने इसे पूर्णता प्रदान की। डीवी के अनुसार जो कार्य भोजन ग्रहण तथा सन्तानोत्पादन की क्रिया शारीरिक जीवन के लिए करती है, वही कार्य सामाजिक जीवन के लिए शिक्षा करती है। शिक्षा की प्रक्रिया सामाजिक है अर्थात् व्यक्ति को सामाजिक वातावरण में रखकर ही शिक्षा का उचित प्रबन्ध किया जा सकता है। इसीलिए डीवी ने विद्यालय को समुदाय का एक अभिन्न अंग माना है। परन्तु विद्यालय में जिन बहुत से विषयों की शिक्षा दी जाती है तथा जिस प्रकार का योजना रहित वातावरण होता है वह बाह्य संसार में वांछित सामाजिक जीवन से मेल नहीं खाता। प्रयोजन विधि इस पुस्तकीय तथा अकर्मण्य पद्धति एक खुला विद्रोह है क्योंकि इस विधि द्वारा विद्यार्थियों को सावधानीपूर्वक प्रशिक्षित किया जाता है। उन्हें वास्तविक जीवन से सम्बन्धित बातों का उचित रूप से ज्ञान करवाया जाता है जिससे वे श्रेष्ठ सामाजिक जीवनयापन कर सकें तथा सामाजिक विकास में योगदान दे सकें।

10.5.1 योजना की विशेषताएं

कार्य विधि के स्वरूप को समझने से पूर्व प्रोजेक्ट का अर्थ समझना आवश्यक है। प्रोजेक्ट के अर्थ को समझाने के लिए विभिन्न शिक्षा शास्त्रियों ने इसकी अपने–अपने ढंग से व्याख्या की है। कुछ मुख्य परिभाषाएं इस प्रकार हैं–

डॉ. विलियम किलपैट्रिक के अनुसार, "योजना अथवा प्रयोजन एक तन्मयतापूर्ण तथा उद्देश्यपूर्ण क्रिया है जिसका सामाजिक वातावरण में विकास होता है।"

स्नेडेन के अनुसार, "योजना शिक्षात्मक कार्य की वह कड़ी है जिसका महत्वपूर्ण तत्व है निश्चित तथा ठोस निष्पत्ति।"

इन परिभाषाओं के विश्लेषण के आधार पर प्रोजेक्ट की निम्नलिखित विशेषताएं कही जा सकती हैं–

1. उद्देश्यपूर्ण क्रियाशीलता– प्रत्येक योजना का कुछ निश्चित उद्देश्य होता है और इन पूर्वनिश्चित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए विभिन्न क्रियाओं का आयोजन किया जाता है।

2. तन्मयतापूर्ण क्रियाशीलता– योजना को पूरे मनोयोग से अर्थात् पूरी लगन के साथ किया जाता है जिससे इच्छित परिणामों की प्राप्ति हो सके।

3. प्राकृतिक वातावरण में क्रियाशीलता– योजना वास्तविक जीवन से जुड़ी समस्याओं पर आधारित होता है इसलिए प्रोजेक्ट को कृत्रिम परिस्थितियों में आयोजित करने से कोई लाभ नहीं हो सकता। जहाँ तक सम्भव हो, प्रोजेक्ट से सम्बन्धित सभी क्रियाओं को प्राकृतिक वातावरण में ही करना चाहिये।

4. समस्यामूलक क्रियाशीलता– योजना का आधार एक समस्या होती है जिसके परिणामस्वरूप क्रियाशीलता उत्पन्न होती है। किसी समस्या का समाधान ढूंढने के लिए प्रोजेक्ट की रचना की जाती है और उसी समस्या के स्वरूप के आधार पर प्रोजेक्ट में की जाने वाली क्रियाओं का आयोजन किया जाता है। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि समस्या ही प्रोजेक्ट है, जिसका परिणाम होता है क्रियाशीलता। परन्तु यह बात ध्यान देनी चाहिए कि केवल यांत्रिक तत्वों से ही

कोई प्रोजेक्ट नहीं हो जाता अपितु किसी स्वाभाविक समस्या को कार्यशील रहकर सुलझाने से ही कोई प्रोजेक्ट बनता है।

5. सामाजिक वातावरण में क्रियाशीलता– योजना में व्यक्ति को वास्तविक जीवन सम्बन्धी ज्ञान प्रदान किया जाता है जिससे वह सामाजिक कुशलता प्राप्त कर सके और श्रेष्ठ सामाजिक जीवनयापन कर सके। इसीलिए प्रोजेक्ट को सामाजिक वातावरण में किया जाता है।

6. ठोस तथा निश्चित उपलब्धि– एक ऐसी क्रियाशीलता जिसके द्वारा अनेकानेक समस्याओं के हल निकाले जाते हैं।

7. स्कूल में वास्तविक जीवन की प्रस्तावना।

8. व्यावहारिक समस्याओं का समाधान।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि प्रोजेक्ट विद्यार्थियों के वास्तविक जीवन से सम्बन्धित किसी समस्या का समाधान खोजने के लिए अच्छी प्रकार से चुना हुआ तथा पूर्ण लगन से किया जाने वाला वह कार्य है जिसे स्वाभाविक परिस्थितियों में सामाजिक वातावरण में पूरा किया जाता है। इस विधि का केन्द्र प्रोजेक्ट होता है। विद्यार्थी किसी समस्या के समाधान के लिये किसी प्रोजेक्ट का चयन करते हैं तथा योजनाबद्ध रूप से उसे पूरा करने का प्रयत्न करते हैं। प्रोजेक्ट पर कार्य करते समय उन्हें जिस प्रकार के ज्ञान की आवश्यकता होती है, वह उसी समय ग्रहण कर लिया जाता है चाहे वह किसी भी विषय से सम्बन्धित क्यों न हो। इस प्रकार इस विधि में प्रासंगिक ढंग से पढ़ाई की जाती है। विज्ञान सम्बन्धी जिन तथ्यों, सिद्धान्तों, नियमों एवं व्यावहारिक ज्ञान आदि की भी जहाँ आवश्यकता होती है, वह ज्ञान उसी समय विद्यार्थियों को प्रदान कर दिया जाता है।

10.5.2 योजना विधि के सिद्धान्त

कार्य विधि व्यावहारिकतावाद दर्शन पर आधारित है। व्यावहारिकतावादी उपयोगिता को सबसे अधित महत्व देते हैं इसलिए इस विधि में उपयोगी प्रोजेक्टों को ही चुना जाता है। जॉन डीवी की भांति किलपैट्रिक का भी यह विश्वास था कि मनुष्य में कुछ जन्मजात् शक्तियाँ होती हैं जिनका वांछित विकास उचित सामाजिक परिस्थितियों में ही किया जा सकता है। किलपैट्रिक के अनुसार यह विधि शिक्षण के निम्नलिखित मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है–

1. **प्रयोजन अथवा निश्चित उद्देश्य का सिद्धान्त (Principle of Purpose or specific objective)** – विद्यार्थी प्रयोजनयुक्त क्रियाओं में अधिक रूचि लेते हैं। इसलिए ऐसे प्रोजेक्ट का चयन किया जाना चाहिए जिसको पूरा करने से विद्यार्थियों का कोई प्रयोजन सिद्ध होता हो अथवा किसी उद्देश्य की प्राप्ति हो सके। उद्देश्यपूर्ण क्रियाओं की ओर विद्यार्थी स्वाभाविक रूप से आकृष्ट होते हैं और उन्हें रूचि एवं लगन के साथ करते हैं।

2. **क्रियाशीलता का सिद्धान्त (Principle of Activity)** – मनोविज्ञान के अनुसार 'स्वयं करके सीखना' सबसे अधिक प्रभावशाली और स्थायी सीखना होता है। कार्य विधि 'स्वयं करके सीखने' के सिद्धान्त पर आधारित है। इसमें विद्यार्थी किसी भी प्रोजेक्ट को चुनने, पूरा करने के लिए स्वयं विचार करते हैं और स्वयं क्रिया करते हैं। अध्यापक इस कार्य में केवल विद्यार्थियों की सहायता करता है।

3. **वास्तविकता का सिद्धान्त (Principle of Reality)** – योजना में किसी भी ऐसे कार्य का चयन नहीं किया जाता जो वास्तविकता से सम्बन्धित न हो। इसमें विद्यार्थियों के 'जीवन से सम्बन्धित' वास्तविक प्रोजेक्ट ही चुने जाते हैं और उन्हें इस प्रकार पूरा किया जाता है जैसे विद्यार्थी अपने वास्तविक जीवन की क्रियाएं करते हैं।

4. **सह–सम्बन्ध का सिद्धान्त (Principle of Correlation)** – ज्ञान अपने आप में पूर्ण इकाई है। हमने अपनी सुविधा के लिए एवं विशिष्ट ज्ञान प्रदान करने के लिए इसे विभिन्न विषयों में बांटा है। कार्य विधि में सभी विषयों के ज्ञान एवं क्रियाओं के प्रशिक्षण को एक इकाई के रूप में प्रदान किया जाता है। एक प्रोजेक्ट को पूरा करने के लिए अनेक विषयों के ज्ञान को एक–दूसरे से सम्बन्धित करके दिया जाता है।

5. **स्वतन्त्रता का सिद्धान्त (Principle of Freedom)** – विद्यार्थी स्वतन्त्र रहना चाहते हैं। उनकी स्वतन्त्रता में किसी भी प्रकार की बाधा उनके व्यक्तित्व के विकास में अवरोध पैदा करती है। इसलिए आधुनिक शिक्षा विद्यार्थियों को अपना विकास अपने तरीके से करने की स्वतन्त्रता देने के पक्ष में हैं। कार्य विधि में विद्यार्थी अपनी रूचि, योग्यता, आवश्यकता एवं अभिवृत्ति के अनुसार प्रोजेक्ट का चयन कर सकते हैं। इससे प्राप्त अधिगम स्थाई रहता है और विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का विकास भी उचित ढंग से होता है।

6. **सामाजिक विकास का सिद्धान्त (Principle of Social Development)** – किलपैट्रिक के अनुसार विद्यार्थियों का विकास उचित सामाजिक पर्यावरण में ही सम्भव होता है और सामाजिक पर्यावरण को उचित बनाने के लिए समाज के प्रत्येक व्यक्ति में सामाजिक गुणों का विकास करना आवश्यक होता है। कोई भी राष्ट्र तब तक उन्नति नहीं कर सकता जब तक उसके नागरिकों में सामाजिक भावना का विकास न हो। इसलिए कार्य विधि में सामूहिक क्रियाओं को महत्व दिया जाता है। विद्यार्थी मिल–जुल कर एक दूसरे के सहयोग से प्रोजेक्ट को पूरा करते हैं और सामाजिक भावना के आधार पर प्रेम, सहानुभूति, सहयोग, स्वस्थ प्रतिस्पर्धा आदि का व्यावहारिक पाठ पढ़ते हैं।

7. **उपयोगिता का सिद्धान्त (Principle of Utility)** – ज्ञान तभी वास्तविक जीवन में उपयोग किया जा सकता है जब वह क्रियात्मक तथा उपयोगी हो। शिक्षण के परम्परागत सिद्धान्त में मौखिक शिक्षा एवं पुस्तकीय ज्ञान को ही महत्व दिया जाता था जो किसी भी रूप में उपयोगी नहीं था। कार्य विधि द्वारा विभिन्न रूचियों तथा मूल्यों का निर्माण होता है जो व्यावहारिक तथा रचनात्मक दृष्टि से अत्याधिक लाभदायक सिद्ध होती है। इस प्रकार कार्य विधि द्वारा अर्जित ज्ञान वास्तविक जीवन में उपयोगी होता है।

8. **अनुभव का सिद्धान्त (Principle of Experience)** – कहा जाता है कि अनुभव एक श्रेष्ठ अध्यापक है। जो कुछ वास्तविक है वह अनुभव से सिद्ध होना चाहिए। कार्य विधि में विद्यार्थी स्वयं अनुभव करके ज्ञान अर्जित करता है। यही कारण है कि कार्य विधि द्वारा प्राप्त किये गए ज्ञान को रटना नहीं पड़ता और यह अपेक्षाकृत अधिक स्थायी रहता है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 4: योजना विधि का प्रतिपादन किसने किया?

....

....

प्रश्न 5: योजना विधि को परिभाषित कीजिये?

....

....

प्रश्न 6: सीखने के तत्परता का नियम किसने बताया?

....

....

10.5.3योजना विधि के चरण

किसी प्रोजेक्ट के आयोजन के मुख्यतः छः चरण होते हैं। ये चरण निम्नलिखित हैं–

1. स्थिति प्रदान करना
2. चुनाव तथा उद्देश्य
3. नियोजन
4. योजना का क्रियान्वयन
5. मूल्यांकन
6. अभिलेखन

1. **स्थिति प्रदान करना (Providing a Situiation)** – विद्यार्थियों पर किसी भी प्रोजेक्ट को अनावश्यक थोपना अहितकर हो सकता है। प्रोजेक्ट का आरम्भ करने के लिये यह आवश्यक है कि विद्यार्थी प्रोजेक्ट पर काम करने के लिए अभिप्रेरित हों और स्वयं प्रोजेक्ट का चयन करें। अध्यापक के लिये यह आवश्यक है कि वह उचित स्थिति का आयोजन करें। अध्यापक विद्यार्थियों की रूचियों, योग्यताओं, अभिरूचियों, अभिवृत्तियों आदि का अध्ययन करके इस प्रकार की स्थिति का आयोजन करें जिसमें विद्यार्थी अपनी आवश्यकताओं के अनुसार स्वयं कार्य करने के लिए प्रेरित हो जाएं। उचित स्थिति विभिन्न साधनों के प्रयोग द्वारा प्रदान की जा सकती है जैसे सामान्य रूचि से सम्बन्धित विषयों पर बात करके, दैनिक जीवन से सम्बन्धित वस्तु आदि द्वारा। प्रो. स्टीवेन्सन ने बिजली की घण्टी का प्रयोग करना, विद्यार्थियों को कार्य विधि द्वारा ही सिखाया था। स्कूल में घण्टी को पूर्णतया सही करने की आवश्यकता पड़ी और उसने इसी अवसर को एक स्थिति के रूप में उपस्थित कर दिया।

2. **चुनाव तथा उद्देश्य (Choosing and Purposing)** – किसी भी कार्य को करने से पूर्व उसका उद्देश्य निश्चित करना बहुत आवश्यक है। उद्देश्य ही वह केन्द्र–बिन्दु है जिस पर प्रोजेक्ट आधारित होता है। जिस प्रोजेक्ट का चुनाव किया जाये, वह किसी न किसी उद्देश्य अथवा आवश्यकता की पूर्ति करने में सक्षम होना चाहिए।

जहां तक संभव हो, ऐसे उद्देश्य आधारित प्रोजेक्ट का चयन करना चाहिये जिसे सभी विद्यार्थी स्वीकार करें। डॉ. किलपैट्रिक के अनुसार, "स्कूल के कार्यों में अध्यापकों तथा विद्यार्थियों के कार्यों के वही निश्चित करता है जो उद्देश्य को निश्चित करता है। क्रियात्मक रूप से यही मूल कार्य है। विद्यार्थियों को प्रोजेक्ट स्वयं चुनना चाहिए। अध्यापक को जल्दी–जल्दी अधीर होकर स्वयं प्रोजेक्ट का चुनाव नहीं कर देना चाहिए। श्रेष्ठ परिणाम तथा पूर्ण सन्तुष्टि तभी होती है यदि प्रोजेक्ट बच्चे स्वयं चुनें।"

योजना का निश्चय प्रजातंत्रात्मक ढंग से होना चाहिए। अध्यापक को केवल विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करना चाहिए न कि अपनी राय विद्यार्थियों पर थोपनी चाहिये। अध्यापक विद्यार्थियों को प्रेरणा तो दे सकता है परन्तु अन्तिम चुनाव विद्यार्थियों द्वारा ही होना चाहिये। अध्यापक को यह ध्यान रखना चाहिए कि विद्यार्थियों को प्रोजेक्ट का उद्देश्य उचित रूप से समझ आ जाये। यदि विद्यार्थियों द्वारा प्रोजेक्ट का चुनाव बुद्धिमत्तापूर्ण न हो तो अध्यापक का यह कर्तव्य है कि वह चतुरता से किसी अन्य स्थिति द्वारा विद्यार्थियों का किसी अन्य उत्तम प्रोजेक्ट की ओर मार्गदर्शन करे।

3. **नियोजन (Planning)** – योजना के चुनाव एवं उद्देश्य निर्धारण के पश्चात् प्रोजेक्ट का नियोजन किया जाता है। अच्छी योजना अच्छे परिणाम की ओर ले जाती है। एक अच्छी योजना बनाना अत्यन्त कठिन कार्य है। अध्यापक को विद्यार्थियों से विचार–विमर्श करके, उनके कार्य क्षमताएं, उपलब्ध संसाधनों, प्रोजेक्ट में आने वाली कठिनाइयों आदि का विवेचन करके योजना बनानी चाहिए। एक अच्छी योजना में प्रोजेक्ट से सम्बन्धित कार्यक्रम इस प्रकार बनाना चाहिए कि प्रत्येक विद्यार्थी उसमें हाथ बंटा सके। सबसे पहले मौखिक विचार–विमर्श किया जाना चाहिए, उसके पश्चात् विद्यार्थियों को पूरी योजना अपनी कॉपी में लिखने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। यह आवश्यक है कि अध्यापक पहले से ही योजना के सम्बन्ध में कुछ धारणायें निश्चित कर ले ताकि वह योजना बनाने में विद्यार्थियों की श्रेष्ठतम ढंग से सहायता कर सके।

4. **योजना का क्रियान्वयन (Executing the Plan)** – यह योजना का चौथा एवं अत्यन्त महत्वपूर्ण चरण होता है। योजना के क्रियान्वयन से अभिप्राय है – योजना को कार्यरूप में परिणित करना। यह चरण सबसे अधिक लम्बा होता है और इसमें पर्याप्त परिश्रम करना पड़ता है। इस चरण में सभी विद्यार्थी सहयोगात्मक रूप से प्रोजेक्ट को पूरा करने में प्रयत्नशील रहते हैं। अध्यापक कक्षा के विभिन्न विद्यार्थियों को उनकी रूचियों, अभिरूचियों, योग्यताओं, क्षमताओं आदि के अनुसार कार्य निर्धारित करता है प्रोजेक्ट में प्रत्येक विद्यार्थी को उसकी क्षमता के अनुसार कुछ न कुछ काम दिया जाना चाहिए। एक विद्यार्थी किसी क्षेत्र विशेष में कमजोर हो सकता है परन्तु किसी दूसरे क्षेत्र में वह अपनी क्षमता का उचित प्रदर्शन कर सकता है। उदाहरण – एक विद्यार्थी गणना करने में कठिनाई अनुभव कर सकता है परन्तु वह चित्र बनाने, मानचित्र का अध्ययन करने जैसे काम कुशलतापूर्वक कर सकता है। अध्यापक का कार्य केवल इतना है कि वह विद्यार्थियों को उचित रूप से उत्साहित करें, उनका मार्गदर्शन करे, उनकी क्षमता के अनुरूप उन्हें कार्य निर्धारित करे और प्रोजेक्ट कार्यों को पूरा करने के अवसर प्रदान करे।

5. **मूल्यांकन (Evaluation)** – यह कार्य विधि का पांचवां चरण है। प्रोजेक्ट के समाप्त होने पर सारे कार्य की जाँच अत्यंत महत्वपूर्ण है। प्रोजेक्ट पर कार्य करते हुए यदि कोई त्रुटि रह गई है तो उसे पहचान कर उससे शिक्षा ग्रहण की जाती है। विद्यार्थी अपने कार्य की स्वयं आलोचना करना सीखते हैं। आत्म आलोचना

प्रशिक्षण का एक बहुमूल्य रूप है। विद्यार्थी अपनी उपलब्धियों एवं सफलताओं का भी आकलन करते हैं।

6. **अभिलेखन (Recording)** – यह कार्य विधि का छटा एवं अन्तिम चरण होता है। प्रोजेक्ट से सम्बन्धित सभी क्रियाओं जैसे–सुझाव, योजना सम्बन्धी विचार–विमर्श, कार्य–निर्धारण, पुस्तकें, रेखा–चित्र, सर्वेक्षित स्थानों, भवनों आदि का पूरा रिकार्ड रखा जाना चाहिए। विद्यार्थियों को सभी क्रियाओं को अपनी कॉपी में लिखना चाहिए। विभिन्न चरणों में आई सूक्ष्मताओं का पूरा लेखा जोखा तैयार करना चाहिए। प्रोजेक्ट की कॉपी या 'प्रोजेक्ट रिपोर्ट' ऐसी हो जो प्रोजेक्ट का विस्तृत चित्र प्रस्तुत कर सके। यह स्थिति का निर्माण, प्रोजेक्ट का चुनाव, उत्तरदायित्वों का निर्धारण, प्रोजेक्ट में आई कठिनाइयों तथा प्राप्त किये गये अनुभवों आदि का स्पष्ट वर्णन करने योग्य होनी चाहिए।

10.5.4 योजना विधि के गुण

1. यह विधि मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है। इसमें शिक्षण के मुख्य सिद्धान्त, रूचि का सिद्धान्त, करके सीखने का सिद्धान्त और जीवन से सम्बन्ध स्थापित करने का सिद्धान्त, सभी का पालन किया जाता है। विद्यार्थी स्वयं प्रोजेक्ट का चयन करते हैं, उसको पूरा करने में कोई उद्देश्य निहित होता है और यह विद्यार्थियों के जीवन से सम्बन्धित भी होता है इसलिए इसमें विद्यार्थियों की रूचि बनी रहती है प्रोजेक्ट को पूरा करने के लिए सभी विद्यार्थी शारीरिक और मानसिक दोनों रूपों से क्रियाशील रहते हैं और स्वयं करके सीखते हैं। जो कुछ भी विद्यार्थी करते हैं उसका उनके जीवन से सम्बन्ध भी होता है। दूसरे शब्दों में, यह विधि थार्नडाइक द्वारा प्रतिपादित सीखने के नियमों के अनुसार है। सीखने का पहला नियम 'तत्परता का नियम' है। समस्या को उपस्थित कर उसे हल करने के लिए विद्यार्थी प्रोजेक्ट को पूरा करने के लिए तत्पर हो जाते हैं। सीखने का दूसरा नियम 'अभ्यास का नियम' है। स्वयं करके सीखना इस विधि की सबसे बड़ी विशेषता है। सीखने का तीसरी नियम 'प्रभाव का नियम' होता है। प्रोजेक्ट की समाप्ति पर विद्यार्थी अपने परिश्रम का फल देखकर सन्तोष अनुभव करते हैं। इससे सीखा हुआ ज्ञान स्थायी होता है और विद्यार्थी नये प्रोजेक्टों को पूरा करने के लिए तैयार होते हैं।

2. इस विधि में विद्यार्थियों को स्वतन्त्र रूप से सोचने, विचारने तथा कार्य करने का अवसर प्रदान किया जाता है अर्थात् यह विधि निष्क्रिय रहकर ज्ञान प्राप्त करने का विरोध करती है। इसमें विद्यार्थी ज्ञान के तथ्यों, संप्रत्ययों आदि को दूसरों के कहने मात्र से नहीं मान लेते अपितु उन्हें खोज कर ग्रहण करते हैं। इस प्रकार यह विधि विद्यार्थियों को अन्वेषण करने का अवसर प्रदान करती है। इस विधि से कार्य करके विद्यार्थी उस ज्ञान और कौशल को स्वयं ही प्राप्त करता है जिसकी वास्तविक जीवन में आवश्यकता पड़ती है। इससे विद्यार्थियों को स्वयं निर्णय करने का अवसर मिलता है। इस प्रकार इस विधि द्वारा विद्यार्थियों की अनेक शक्तियों का विकास होता है।

3. इस विधि में रटने की प्रवृत्ति का कोई स्थान नहीं है। इसमें रहने तथा स्मरण करने की क्रिया की अपेक्षा सोचने तथा कार्य करने की प्रवृत्ति पर बल दिया जाता है। कार्य करके जो ज्ञान प्राप्त किया जाता है, वह अधिक स्थायी होता है।

4. इसके अनुसार पाठ्य विषयों का विभाजन और उनका पृथक–पृथक रूप से पढ़ाया जाना अवांछनीय है। यह विधि पाठ्यक्रम के विषयों में परस्पर सम्बन्ध तथा पाठ्यक्रम का जीवन से सम्बन्ध स्थापित करती है। इसमें पाठ्यक्रम के समस्त विषय समन्वित रूप में प्रस्तुत किये जाते हैं। समन्वित शिक्षा का विचार नया नहीं है किन्तु क्रिया द्वारा समन्वय स्थापित करने का विचार इस विधि की विशेषता है। किसी विशेष समस्या के हल करने में विद्यार्थी अनेक विषयों का ज्ञान प्राप्त कर लेता है। पाठ्य विषयों के स्थान पर विद्यार्थी को शिक्षा का केन्द्र माना जाता है और उसकी आवश्यकताओं के अनुसार उसे प्रोजेक्ट दिया जाता है। इससे विद्यार्थी पाठ्य विषयों में अधिक रूचि लेता है और अपने जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है।

5. कार्य विधि में विद्यार्थियों को मिल जुलकर कार्य करने के अवसर प्रदान किये जाते हैं। विद्यार्थी सांझे उद्देश्यों की पूर्ति के लिए मिल–जुलकर प्रयत्न करते हैं। सभी कार्य प्रजातान्त्रिक ढंग से किये जाते हैं। विद्यार्थी जो कार्य करते हैं या जो योजना बनाते हैं, उस विषय में अपनी सहमति अथवा असहमति प्रकट कर सकते हैं। अध्यापक विद्यार्थियों की इच्छाओं एवं क्षमताओं के अनुरूप प्रोजेक्ट का चयन करता है और कार्यों का बंटवारा करता है। विद्यार्थियों के मिल–जुलकर काम करने से उनमें सहिष्णुता, आत्मनिर्भरता, उदारता, सहयोग भावना आदि गुणों का विकास होता है। इस प्रकार यह विधि प्रजातन्त्रात्मक जीवनयापन का प्रशिक्षण करती है।

6. यह विधि पिछड़े एवं कमजोर विद्यार्थियों के लिए विशेष रूप से सहायक है क्योंकि इसमें प्रत्येक विद्यार्थी को अपनी रूचि एवं क्षमता के अनुसार रचनात्मक कार्य करने की सुविधा प्रदान की जाती है। ऐसे विद्यार्थी जो अमूर्त परिभाषाओं एवं प्रत्ययों पर सोच–विचार नहीं कर सकते, वे मूर्त प्रत्ययों तथा रचनात्मक कार्य में व्यस्त रहते हैं।

7. इससे विद्यालय का बाह्य संसार के साथ सम्बन्ध स्थापित होता है और विद्यालयी शिक्षा सजीव एवं जीवन से जुड़ी हुई प्रतीत होती है। सीखने की स्थितियों और विद्यार्थियों के परिवेश में सम्बन्ध स्थापित हो जाता है जिससे अधिगम अधिक स्थायी होता है।

8. इससे उपक्रम तथा आत्म–क्रियात्मक का विकास होता है इसमें विद्यार्थी 'स्वयं अपने हाथों से कार्य' करते हैं और कार्य में आनन्द का अनुभव करते हैं। विद्यार्थी केवल निष्क्रिय ग्रहणकर्त्ता न रह कर सक्रिय बनते हैं और उनमें कार्य के प्रति सम्मान का भी विकास होता है।

10.5.5 योजना विधि के दोष

1. कार्य विधि में प्रयोजन को पूरा करने में बहुत अधिक समय व्यय होता है।
2. इस विधि में अध्यापक पर काम का अत्यधिक बोझ बढ़ जाता है। अध्यापक पूरा समय योजना बनाने, तैयारी करने, निरीक्षण तथा मूल्यांकन करने में व्यस्त रहता है।
3. भारतीय विद्यालयों में प्रोजेक्ट के लिये आवश्यक सन्दर्भ सामग्री का अभाव रहता है।
4. उच्च कक्षाओं का पाठ्यक्रम प्रोजेक्ट द्वारा पूरा नहीं किया जा सकता।

5. प्रोजेक्ट के लिये सुसज्जित प्रयोगशालाओं एवं पुस्तकालयों की आवश्यकता होती है। अतः यह विधि अत्यधिक खर्चीली होती है।

6. भौतिक विज्ञान में प्रोजेक्ट के लिये अध्यापक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह सभी विषयों के ज्ञाता हो और सभी विषयों एवं प्रकरणों को समावयवित करके पढ़ाये। यह बहुत कठिन कार्य है और इसके लिये विशेष कौशलयुक्त अध्यापकों की आवश्यकता होती है। हमारी शिक्षण व्यवस्था में ऐसे अध्यापकों का अभाव है।

7. कार्य विधि द्वारा शिक्षण कार्य संगठित रूप से और निरन्तर नहीं हो सकता। इसमें विषय–वस्तु का विकास भी क्रमबद्ध रूप से न होकर अंशों में एवं अस्त व्यस्त रूप से होता है।

8. कार्य विधि में विभिन्न कार्यों से संबंधित कौशलों के अभ्यास के लिए अवसर प्रदान नहीं किये जाते। विज्ञान विषयों के लिये ये अभ्यास अति आवश्यक होते हैं। इस प्रकार यह विधि विज्ञान विषयों के लिए उपयुक्त नहीं है।

9. कार्य विधि से पढ़ाने के लिए विद्यालय की सम्पूर्ण समय–सारणी में परिवर्तन करना पड़ता है जिससे दूसरे विषयों अथवा कक्षाओं में बाधा पहुंचती है।

10. इस विधि द्वारा किसी भी प्रकरण का विस्तृत ज्ञान नहीं दिया जा सकता। केवल प्रारंभिक ज्ञान ही दिया जाता है।

11. कार्य विधि के विभिन्न चरणों के अनुरूप लिखी गई पुस्तकें उपलब्ध नहीं हैं। इससे विद्यार्थियों एवं अध्यापक को प्रोजेक्ट की स्पष्ट दिशा निर्धारित करने में कठिनाई होती है।

10.5.6 योजना विधि में अध्यापक की भूमिका

योजना विधि या कार्य विधि विद्यार्थी केन्द्रित विधि है। इसमें विद्यार्थी को सक्रिय करना अत्यन्त आवश्यक होता है। विद्यार्थी की सक्रियता के बिना प्रोजेक्ट की सफलता अनिश्चित होती है। विद्यार्थियों को सक्रिय बनाने एवं अभिप्रेरित करने में अध्यापक की विशेष भूमिका होती है। इसके निम्नलिखित महत्वपूर्ण बिन्दु हैं–

1. अध्यापक योजना में एक मार्गदर्शक, सहयोगी तथा मित्र के रूप में कार्य करता है न कि तानाशाह के रूप में।

2. अध्यापक विद्यार्थियों के साथ घनिष्ठ एवं स्वस्थ सम्बन्ध (Healthy Relations) स्थापित करता है। वह उनकी समस्याओं को ध्यानपूर्वक सुनता है, समझता है और उन्हें हल करने में सहायता करता है।

3. अध्यापक योजना के किसी भी भाग को स्वयं कार्यान्वित नहीं करता, वह अपनी इच्छा को विद्यार्थियों पर थोपता नहीं है अपितु वह उन्हें उनकी त्रुटियों और असफलताओं के कारणों के बारे में बताता है। वह उन्हें यह भी बताता है कि किन उत्तम प्रणालियों या शैलियों को अपनाया जाये।

4. इस विधि में अध्यापक शर्मीले, पिछड़े हुए तथा कम बुद्धि वाले विद्यार्थियों को भी अवसर प्रदान करता है कि वे अपने सहपाठियों के साथ मिल कर प्रोजेक्ट के सम्पन्न होने में अपना योगदान दें।

5. अध्यापक कक्षा में प्रजातन्त्रात्मक वातावरण का विकास करता है और विद्यार्थियों को स्पष्ट एवं स्वतन्त्र अभिव्यक्ति के लिये प्रेरित करता है।

6. अध्यापक विद्यार्थियों के साथ–साथ स्वयं भी सीखता है। वह कभी भी स्वयं सब कुछ जानने का दावा नहीं करता।

7. वह विद्यार्थियों को जिम्मेवारी सौंप कर उनके चरित्र एवं व्यक्तित्व के विकास में सहायता करता हैं

8. वह सारा समय सक्रिय एवं सचेत रहता है और इस बात का ध्यान रखता है कि प्रोजेक्ट से सम्बन्धित कार्य उचित रूप से विकसित हो।

9. अध्यापक विद्यार्थियों को उनकी क्षमता के अनुसार कार्य सौंपता है। वह कक्षा में विद्यार्थियों की स्वतन्त्रता बनाये रखता है और उनके भय एवं हिचकिचाहट को दूर करता है।

10.6 सारांश

शिक्षण की इस प्रक्रिया में सर्वप्रथम शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। शिक्षण के उद्देश्यों के निर्धारण के लिए ब्लूम द्वारा वर्गीकृत, ब्लूम की वर्गिकी का प्रयोग किया जाता है। संज्ञानात्मक क्षेत्र में विशेष तथ्यों का पुनःस्मरण या पहचान, प्रक्रियागत स्वरूप एवं परिकल्पनाएं शामिल हैं जो बौद्धिक क्षमताओं तथा कौशलों के विकास में मदद करती हैं। भावात्मक क्षेत्र में वे तरीके शामिल हैं जिनसे हम बातों का भावात्मक रूप से सामना करते हैं, जैसे कि भावनाएं, मूल्य, तारीफ, उत्साह, प्रेरणा एवं वृत्तियां। क्रियात्मक क्षेत्र के उद्देश्य में शारीरिक हलचल, समन्वय एवं मोटर–कौशल क्षेत्र शामिल हैं। समस्या समाधान विधि में विद्यार्थियों के समक्ष विषय से सम्बन्धित किसी समस्या को इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है जिससे वे उद्देश्यपूर्ण गहन चिन्तन कर सकें। विद्यार्थी अपने पूर्व ज्ञान एवं अनुभवों के आधार पर समस्या समाधान सम्बन्धी विकल्प प्रस्तुत कर सकते हैं। इस कार्य में अध्यापक उनकी सहायता करता है। प्रोजेक्ट विद्यार्थियों के वास्तविक जीवन से सम्बन्धित किसी समस्या का समाधान खोजने के लिए अच्छी प्रकार से चुना हुआ तथा पूर्ण लगन से किया जाने वाला वह कार्य है जिसे स्वाभाविक परिस्थितियों में सामाजिक वातावरण में पूरा किया जाता है। प्रोजेक्ट का निश्चित उद्देश्य होता है और इन पूर्वनिश्चित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए विभिन्न क्रियाओं का आयोजन किया जाता है।

10.7 अभ्यास प्रश्न

1. शिक्षण में मापनीय उद्देश्यों को परिभाषित कीजिए?
2. शिक्षण में मापनीय उद्देश्यों के विभिन्न प्रकारों का वर्गीकरण कीजिए?
3. समस्या समाधान विधि को स्पष्ट कीजिए?
4. समस्या समाधान विधि के विभिन्न चरणों का विस्तार से वर्णन कीजिए?
5. कार्य विधि को स्पष्ट कीजिए?
6. कार्य विधि के विभिन्न चरणों का विस्तार से वर्णन कीजिए?

10.8 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में शिक्षण में मापनीय उद्देश्यों के विभिन्न प्रकारों पर चर्चा करेंगे।
2. छात्राध्यापक आपस में समस्या समाधान विधि पर चर्चा करेंगे।
3. छात्राध्यापक आपस में योजना विधि पर चर्चा करेंगे।

इकाई–11 उत्पाद और प्रक्रिया परिणामों के आंकलन के लए परीक्षण पदों का निर्माण, नैदानिक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 नैदानिक परीक्षण

11.3.1 अच्छे नैदानिक परीक्षण की विशेषताएँ

11.3.2 नैदानिक परीक्षण की रचना

11.3.3 नैदानिक परीक्षण की आवश्यकता

11.3.4 नैदानिक परीक्षण के उपयोग

11.4 उपरचारात्मक शिक्षण

11.4.1 उपचारात्मक शिक्षण के उद्देश्य

11.4.2 उपचारात्मक शिक्षण का महत्व

11.4.3 उपचारात्मक शिक्षण की पद्धतियाँ

11.4.4 उपचारात्मक शिक्षण प्रदान करने की विधियाँ

11.4.5 उपचारात्मक शिक्षण के समय सावधानियाँ

11.5 सारांश

11.6 अभ्यास प्रश्न

11.7 चर्चा के बिन्दु

11.1 प्रस्तावना

नैदानिक परीक्षण उपलब्धि परीक्षण का ही एक रुप है जिसका महत्व उपलब्धि परीक्षणों की तुलना में कहीं अधिक है। उपलब्धि परीक्षण एक ऐसा अभिकल्प है जो एक विषय या पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों में विद्यार्थियों के समझ, कौशल एवं ज्ञान का मापन करता है। इसके उद्देश्यों के रुप में ज्ञान, संबोधन, अनुप्रयोग, विश्लेषण, संश्लेषण एवं मूल्यों की ओर संकेत किया जा सकता है जबकि निदानात्मक परीक्षण वे परीक्षण कहे जाते हैं जो सुधार, निदान आदि से संबंधित होते हैं। नैदानिक परीक्षण विद्यार्थियों के गुणों एवं अवगुणों दोनों से ही संबंधित ज्ञान प्रस्तुत करते है। उपचारात्मक शिक्षण एक प्रकार का शिक्षण या अनुदेशात्मक कार्य होता है जिसे किसी एक विद्यार्थी या विद्यार्थियों के समूह को किसी विषय विशेष या प्रकरण विशेष से संबंधित किसी विशेष समस्या या कठिनाई के निवारण

हेतु प्रयोग में लाया जाता है। उपचारात्मक शिक्षण का मुख्य आधार निदानात्मक प्रक्रिया होती है। निदान के बाद ही उपचार किया जाता है। निदानात्मक प्रक्रिया का उद्देश्य होता है कि कोई छात्र विशेष या अनेक विद्यार्थी किसी विषय वस्तु या प्रकरण को ठीक से क्यों नहीं समझ पा रहे हैं।

प्रस्तुत इकाई में हम नैदानिक परीक्षण, अच्छे नैदानिक परीक्षण की विशेषताएँ, नैदानिक परीक्षण की रचना, नैदानिक परीक्षण की आवश्यकता, नैदानिक परीक्षण के उपयोग, उपचारात्मक शिक्षण, उपचारात्मक शिक्षण के उद्देश्य, उपचारात्मक शिक्षण का महत्व, उपचारात्मक शिक्षण की पद्धतियॉ, उपचारात्मक शिक्षण प्रदान करने की विधियाँ और उपचारात्मक शिक्षण के समय सावधानियाँ के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको नैदानिक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण को समझने में सुविधा होगी।

11.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेगें कि–

- नैदानिक परीक्षण का प्रत्याभिज्ञान कर सकेंगे।
- अच्छे नैदानिक परीक्षण की विशेषताएँ का से वर्णन कर सकेंगे।
- अच्छे नैदानिक परीक्षण की रचना कर सकेंगे।
- उपचारात्मक शिक्षण को परिभाषित कर सकेंगे।
- उपचारात्मक शिक्षण के महत्व को निर्धारित कर सकेंगे।
- उपचारात्मक शिक्षण प्रदान करने की विभिन्न विधियों का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।

11.3 नैदानिक परीक्षण

नैदानिक परीक्षण उपलब्धि परीक्षण का ही एक रुप है जिसका महत्व उपलब्धि परीक्षणों की तुलना में कहीं अधिक है। उपलब्धि परीक्षण एक ऐसा अभिकल्प है जो एक विषय या पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों में विद्यार्थियों के समझ, कौशल एवं ज्ञान का मापन करता है। इसके उद्देश्यों के रुप में ज्ञान, संबोधन, अनुप्रयोग, विश्लेषण, संश्लेषण एवं मूल्यों की ओर संकेत किया जा सकता है जबकि निदानात्मक परीक्षण वे परीक्षण कहे जाते हैं जो सुधार, निदान आदि से संबंधित होते हैं। नैदानिक परीक्षण विद्यार्थियों के गुणों एवं अवगुणों दोनों से ही संबंधित ज्ञान प्रस्तुत करते है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि यही परीक्षण ऐसे अधिक संपूर्णक प्रदान करते हें। कुछ शिक्षाशास्त्री इस परीक्षणों को नैदानिक मानते हैं, वहीं कुछ शिक्षाशास्त्री परीक्षण में नैदानिक विशेषताओं का अभाव देखकर उसे न प्रयोग करने की सलाह देते हैं। यदि एक विद्यार्थी गणित परीक्षण के एक भाग गणितीय गणना पर अधिक अंक नहीं प्राप्त करता है। वरन् वह परीक्षण के दूसरे भाग गणितीय तर्कणा पर अधिक अंक प्राप्त करता है तो निःसंदेह यह परीक्षण उसके कमियों की और संकेत करता है तथा हमें यह संकेत प्रदान करता है कि गणितीय तर्कणा में अधिक अंक प्राप्त करने के कारण वह अपने जीवन में समस्याओं का समाधान अधिक तर्कपूर्ण ढंग से करेगा। इस सूचना से एक निदानात्मक संकेत मात्र होता है।

निदान वास्तव में मात्रा का विषय है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि एक या अधिक क्षेत्रों की विशेषताओं, कमियों, कठिनाइयों, हीनता आदि के बारे में नैदानिक परीक्षणों के द्वारा सूचना प्राप्त की जा सकती है। यह सत्य है कि नैदानिक परीक्षण भी एक प्रकार के उपलब्धि परीक्षण ही हैं, परन्तु दोनों के उद्देश्यों में भिन्नता पाई जाती है। नैदानिक परीक्षणों में संपूर्ण प्राप्तांक महत्वपूर्ण होते हैं जो विद्यार्थी में पाये जाने वाली विशेषताओं तथा कमियों को इंगित करते हैं। नैदानिक परीक्षण प्रायः परीक्षण माला के रुप में होते हैं जिसके अलग–अलग खण्डों से हमें भिन्नतापरक जानकारी प्राप्त होता है। जिससे शिक्षक आवश्यकतानुसार अपने शिक्षण शैली में परिवर्तन लाकर विद्यार्थियों का समुचित विकास कर सकता है। पठन–पाठन की क्रिया को प्रभावशाली बनाने के लिए नैदानिक परीक्षणों का अधिकतम उपयोग शिक्षकों द्वारा किया जाता रहा है।

क्रो व क्रो – ''निदानात्मक परीक्षणों का निर्माण, विद्यार्थियों की अधिगम संबंधी विशिष्ट कठिनाइयों का ज्ञान प्राप्त करने या निदान करने के लिए किया जाता है। पूर्ण सावधानी से निर्मित किए गए निदानात्मक परीक्षण में किसी विशेष विषय के अधिगम के किसी विशेष पक्ष पर बल दिया जाता है ताकि छात्र की योग्यताओं और कमजोरियों को ज्ञान किया जा सके और उपचारात्मक शिक्षण का प्रयोग किया जा सके।''

योकम व सिम्पसन – ''निदानात्मक परीक्षण वह साधन है, जो शैक्षिक वैज्ञानिकों के द्वारा विद्यार्थियों की कठिनाईयों को ज्ञात करने और यथासंभव उन कठिनाइयों के कारणों को व्यक्त करने के लिए निर्मित किया गया है।''

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते है, कि विद्यार्थी की अधिगम संबंधी कुछ कठिनाईयाँ ऐसी होती हैं, जिनको शिक्षक साधारण अवलोकन या निरीक्षण से ज्ञान नहीं कर सकता है। उसे इस कार्य में सहायता देते हैं–प्रमापीकृत नैदानिक परीक्षण।

11.3.1 अच्छे नैदानिक परीक्षण की विशेषताएँ

एक अच्छे नैदानिक परीक्षण में सामान्यतः निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं –

1. नैदानिक परीक्षण किसी पाठ्यक्रम विशेष तक ही सीमित होते हैं।
2. नैदानिक परीक्षण विद्यार्थी की विषय–संबंधित तथा योग्यताओं का माप नहीं करता हैं वरन् किसी विषय विशेष में उस विषय के किसी क्षेत्र में छात्र की कमजोरियों का पता लगाता है।
3. नैदानिक परीक्षण इस बात को महत्व नहीं देता है कि विद्यार्थी के परीक्षा में कितने प्राप्तांक आये हैं। यहाँ तो इस बात पर महत्व दिया जाता है कि विद्यार्थी किस क्षेत्र या प्रकार की विषय–वस्तु से संबंधित प्रश्नों को हल कर लेता है अथवा हल नहीं कर पाता है।
4. नैदानिक परीक्षण स्वभाव से विश्लेषणात्मक होते है। परिणामस्वरुप विद्यार्थी की उपलब्धियों तथा कमजोरियों का विस्तृत तथा स्पष्ट विश्लेषण कर देता है।
5. इन परीक्षणों की व्याख्या किन्हीं सुस्थापित मानकों के आधार पर की जाती है।
6. ये परीक्षण पूर्णरुपेण उद्देश्य आधारित होते है।
7. स्वभाव से ये शक्ति परीक्षण वर्ग में आते हैं जिनमें प्रश्नों का कठिनाई स्तर क्रमशः बढ़ता चला जाता है। इनमें समय सीमा भी लगभग अनिश्चित होती है

11.3.2 नैदानिक परीक्षण की रचना

नैदानिक परीक्षण की योजना बड़ी ही सावधानीपूर्वक की जानी चाहिए। इस परीक्षण के निर्माण के लिए अनुभवी व्यक्ति या शिक्षक की जरुरत होती है। निम्नलिखित पदों को ध्यान में रखते हुए नैदानिक परीक्षण की तैयारी की जानी चाहिए:–

1. विद्यार्थी को जिस विषय में कठिनाइयाँ हैं या इकाई विषय जिसमें कठिनाई है, उसमें किस प्रकार की भूल होती है उसका विश्लेषण करना।
2. जब विश्लेषण द्वारा यह पता चल जाता है कि अमुक कौशल की कमी है तो उसके लिए परीक्षण तैयार करना।
3. अधिकतर प्रश्न वस्तुनिष्ठ या लघुउत्तर वाले होने चाहिए।
4. विशिष्ट अधिगम एवं व्यवहारगत परिवर्तन के रुप में सम्प्रत्यय का विश्लेषण करना।

11.3.3 नैदानिक परीक्षण की आवश्यकता

यदि विद्यार्थियों की कठिनाईयों का पता लगाकर उसको दूर किया न गया तो वह कक्षा में पिछड़ जायेगा। यदि किसी विषय के शिक्षण में इकाई योजना को सफल बनाना चाहते हैं तो प्रत्येक विद्यार्थी की आवश्यकताओं का ध्यान रखना पड़ेगा और उस दशा में प्रत्येक विद्यार्थी की शैक्षिक प्रगति में कमी का दायित्व शिक्षक का ही होगा।

नैदानिक परीक्षण द्वारा शिक्षक को उन विद्यार्थियों का पता लगाना होगा, जो किसी विषय को सीखने में कठिनाई का अनुभव कर रहे हैं। उसे यह भी पता लगाना होगा कि उन विद्यार्थियों को किस–किस स्थल पर कठिनाई होती है? उन कठिनाइयों और दोषों का क्या कारण है? जैसे – किस शासक ने कब शासन किया, महत्वपूर्ण घटनाएँ नागरिक जीवन में व्यक्ति के अधिकार एवं कर्तव्य क्या हैं? नैदानिक विद्यार्थियों द्वारा उन सभी सम्भव कारणों का विश्लेषण करना होगा, जिनके कारण कोई विद्यार्थी त्रुटियाँ करता है।

11.3.4 नैदानिक परीक्षण के उपयोग

कक्षा में पाठन करते समय विद्यार्थी जो अशुद्धियाँ करते है, उन्हें दूर करने के लिए शैक्षिक निदान की आवश्यकता होती है, हम कह सकते हैं, कि शिक्षक अधिगम संबंधी कठिनाईयों का निदान कर उपयुक्त उपचार देता है। शैक्षिक निदान हेतु नैदानिक परीक्षण बनाए जाते हैं।

कुप्पूस्वामी ने नैदानिक परीक्षण की उपयोगिता के विषय में लिखा है कि नैदानिक परीक्षणों को हमें यह बतलाना चाहिए कि बालक क्या कर सकता है, और क्या नहीं कर सकता है क्योंकि जब हमें इस बात का ज्ञान हो जाएगा कि वे विषयों में उनकी रुचियाँ और अभियोग्यताएं हैं, तब हम उनके प्रति अपने कर्तव्य का पालन कर सकेगें।

जैसा कि हम जानते है कि स्कूलों में उपलब्धि परीक्षणों को उपयोग किया जाता है जिससे यह पता चलता है कि विद्यार्थी ने क्या और कितना सीखा। इसी आधार पर सफल एवं असफल घोषित किया जाता है तथा वर्गीकरण भी किया जाता है। लेकिन जो विद्यार्थी असफल हो गये उसका क्या कारण है? इसका पता उपलब्धि परीक्षणों से नहीं होता है। इसके लिए नैदानिक परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। ये परीक्षण एक दूसरे के पूरक होते है। शैक्षिक मापन में दोनों परीक्षाओं को सम्मिलित किया जाता है। नैदानिक परीक्षण के उपयोग निम्नलिखित है –

1. अधिगम की प्रक्रिया के अवरोधक कारणों को ढूंढ़ना।

2. विद्यार्थियों एवं अभिभावकों को उचित सुझाव या निर्देशन देना।

3. शिक्षक–शिक्षण प्रक्रिया में सुधार लाना।

4. कमजोर विद्यार्थियों की पहचान करना।

5. विद्यार्थियों की विषयगत कठिनाईयों के कारण का पता करना।

6. शिक्षण प्रक्रिया में सुधार हेतु उपचारात्मक शिक्षण की दिशा निदेर्शित करना।

7. विद्यार्थियों की कमियों को जानने हेतु उपयुक्त मूल्यांकन प्रक्रिया को अपनाना।

8. भाषा के संदर्भ में विद्यार्थियों की न्यूनताओं एवं विशिष्टताओं का मूल्यांकन करना।

9. सामाजिक पर्यावरणीय अध्ययन में सुधार लाना। यह छात्र तथा शिक्षक दोनों के लिए लाभप्रद होता है। यदि छात्र सामाजिक पर्यावरण के किन्हीं प्रत्ययों को स्पष्ट नही समझते तो शिक्षक को अपनी विधि में परिवर्तन लाना होता है।

10. सामाजिक पर्यावरणीय विषय के अंतर्गत पिछड़े छात्रों को पहचानना, जिससे सुधार हेतु निदान संभव हो सके।

11. विद्यार्थियों के विषय संबंधित विकास में रुकावट आने वाले तत्वों को जानना तथा उपचारात्मक सुझाव देना।

12. अध्ययन पद्धतियों का दिशा–निर्देशन करना।

13. सामाजिक पर्यावरणीय विषय दुर्बलता को आंकना और उसके आधार पर सामूहिक उपचारात्मक पद्धति अपनाना।

14. विद्यार्थियों की कमियों को जानने हेतु उपयुक्त मूल्यांकन प्रक्रिया का प्रयोग करना।

15. पाठ्यक्रम तथा पाठ्य–वस्तु में कमियों के आधार पर परिवर्तन लाना, जिससे वे विद्यार्थियों के लिये उपयोगी हो।

16. नैदानिक परीक्षण को प्रयोग से शिक्षण एवं मूल्यांकन दोनों में गतिशीलता बनी रहती है। यह गतिशीलता शिक्षक तथा विद्यार्थियों दोनों में समयानुकूल आचरण का विकास करती है। उन्हें पिछड़ेपन से बचाती हैं।

17. शिक्षक तथा विद्यार्थियों के आत्म–विश्वास में वृद्धि होती है और वह आगे बढ़ने के लिये स्व–प्रेरणा संचालित होती है।

18. इससे सुधारवादी दृष्टिकोण का प्रार्दुभाव होता है। इसके आयोजन से विद्यार्थियों की क्षमताओं का उच्चतम सीमा तक किया जा सकता है तथा उसको अधिकतम समाजोपयोगी बनाया जा सकता है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 7: उपलब्धि परीक्षण किसे कहते है?

....

....

प्रश्न 8: निदानात्मक परीक्षण को परिभाषित कीजिये?

....

....

प्रश्न 9: नैदानिक परीक्षण की क्या उपयोगिता है?

....

....

11.4 उपचारात्मक शिक्षण

निदान में जहॉ बच्चों की कठिनाइयों का पता लगाया जाता है वहीं उपचारात्मक शिक्षण में इन कठिनाइयों को दूर करते हुय शिक्षण किया जाता है। रोग के निदान के उपरान्त उसका उपचार आवश्यक होता है। शिक्षा क्षेत्र में उपचारात्मक शिक्षण एक नवीन प्रयोग है। यह सामान्य शिक्षण से अधिक प्रभावकारी, सरल एवं मनोवैज्ञानिक है। यह शिक्षण व सीखने के दूषित एवं अशुद्ध ढ़ग को मिटाने के लिये तथा उन्हें सुधारात्मक रूप व दिशा प्रदान करता है। यह प्रत्येक प्रकार के सीखने की अशुद्धियों में सुधार करके विकासात्मक एवं उपचारात्मक शिक्षण दोनों एक दूसरे के सहयोगी है। निदान के बिना उपचार नहीं हो सकता है। उसी प्रकार निदानात्मक शिक्षण के बिना उपचारात्मक शिक्षण नहीं दिया जा सकता।

निदानात्मक एवं उपचारात्मक शिक्षण एक ही सिक्के के दो पहलू के समान है। बिना एक दूसरे के दोनों अधूरे है। जिस प्रकार स्वास्थ्य के नियमों का उल्लंघन करने से उत्पन्न विकार चिकित्सा द्वारा दूर किए जाते हैं उसी प्रकार आदर्श परिस्थितियों के अभाव में शिक्षा विषयक विकार उत्पन्न हो जाने की सम्भावना रहती है। विकार उत्पन्न हो जाने पर उसे चिकित्सात्मक अध्यापन द्वारा ही दूर किया जा सकता है। आदर्श वैद्य की भाँति ही आदर्श शिक्षक को भी विकार को जन्म देने वाले कारण या कारणों की जानकारी होना आवश्यक है। जिसे रोग का पता नहीं वह उपचार क्या करेगा? शिक्षक को प्रयत्नशील रहना चाहिये जब तक कि वह शिक्षा विषयक विकार का पता न चला सके वह अपने लक्ष्य की प्राप्ति आत्म–चिन्तन, स्वाध्याय एवं परिश्रम के सहारे कर सकता है।

चिकित्सा अध्यापन द्वारा आदर्श परिस्थितियों की स्थापना में होना चाहिए। आजकल विशेष रूप से शिक्षा के प्रसार के कारण एक–एक कक्षा में अत्यधिक छात्र, छात्रायें होते हैं जिससे प्रत्यके विद्यार्थी पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना असम्भव तो नहीं कठिन आवश्यक है जिससे कुछ विद्यार्थी कक्षा में पिछड़ जाते हैं। ऐसी परिस्थिति में आध्यापक को योग्य चिकित्सक की भाँति ऐसे विद्यार्थियों की सहायता हेतु चिकित्सात्मक अध्यापन करना चाहिय।

ब्लायर नामक विद्वान का कहना है कि ''चिकित्सात्मक अध्यापन का प्रमुख कार्य है दोषपूर्ण अध्ययन एवं अध्यापन के प्रभाव को दूर करना इसका मुख्य लक्ष्य है इन दोषों और दोषों के कारणों को खोजना व कमजोरियों का निराकरण करना व दुरभ्यास को समाप्त करना।''

11.4.1 उपचारात्मक शिक्षण के उद्देश्य

1. शिक्षण परिपाटी में मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों को लागू करने हेतु।
2. विद्यार्थियों की ज्ञान संबंधी त्रुटियों को दूर करने हेतु।
3. विद्यार्थियों के अधिगम संबंधी दोषों को दूर करने हेतु।
4. विद्यार्थियों के बाधित आदर्श–रुचि दृष्टिकोणों को सामाजिक रुप से समायोजित करने हेतु।
5. विद्यार्थियों की दोष प्रवृत्ति को समाप्त करके उत्तम स्वरुप प्रदान करने हेतु।
6. विद्यार्थियों को अधिगम के लिए अपेक्षित कुशल प्रवृत्ति एवं मनोवृत्ति के आधार पर ज्ञान प्रदान करने हेतु।
7. विद्यार्थियों में हीन भावना को दूर करने हेतु।
8. विषय के प्रति रुचि उत्पादित करने हेतु।
9. विद्यार्थियों में प्रतिस्पर्धा की भावना विकसित करने हेतु।

11.4.2 उपचारात्मक शिक्षण का महत्व

वस्तुतः उपचारात्मक शिक्षण का मूल उद्देश्य है, छात्रों की त्रुटियों का निवारण। त्रुटियाँ किन कारणों से हो रही हैं, सर्वप्रथम नीर–क्षीर विवेक द्वारा पता लगाना चाहिये बिना इसके निवारण कठिन है। उच्चारण की भूल है तो कारण क्या है, वाचन की भूल है, तो कारण क्या है इसे स्पष्ट करने के उपरान्त ही सच्चा निवारण सम्भव है। उपचार करते समय सदा छात्रों के प्रति प्रेम एवं सहानुभूति का भाव रखना चाहिये उन्हें प्रेरित एवं प्रोत्साहित करते रहना चाहिये। प्रोत्साहन से छात्रों में प्रेरणा आती है, उन्हें बल मिलता है और वे अपेक्षित सुधार करते हैं। उपचारात्मक शिक्षण से छात्रों की कठिनाइयों का पता लगाता है। कठिनाइयों का जब ठीक पता लग जाये तो उपचार बड़ी ही आसानी के साथ हो सकता है। कठिनाइयाँ जहाँ दूर हुई, छात्रों द्वारा प्रगति प्रारम्भ हो जाती है।

उपचारात्मक शिक्षण छात्रों को हीन ग्रन्थियों से बचाता है। वह उन्हें कुसामंजस्य की हीन भावना से मुक्त कर देता है। जब तक हीन भावना बनी रहेगी, छात्र प्रगति नही कर सकते। इसलिये, उपचारात्मक शिक्षण में इस भावना को समाप्त किया जाता है। कभी–कभी देखा जाता है कि बुरी संगति के कारण भी छात्र अध्ययन में मन नहीं लगाते और पिछड़ने लगते हैं। ऐसी स्थिति में अध्यापक को बुरी संगति से मुक्ति दिलाने के लिये उपचरात्मक शिक्षण का सहारा लेना चाहिये और छात्रों को आदर्श पुरूषों के उदाहरण से एवं अच्छे छात्रों के सहयोग से लाभान्वित करना चाहिये इससे बालकों का अपेक्षित विकास होता है और अच्छें समाज का निर्माण होता है।

11.4.3 उपचारात्मक शिक्षण की पद्धतियाँ

उपचारात्मक शिक्षण की अनेक विधियाँ व्यवहृत होती है। इन पद्धतियों को हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं – सामूहिक एवं व्यक्तिगत।

1. **सामूहिक उपचार** :– भाषा के व्यवहार में कतिपय त्रुटियाँ व्यापक होती है और अधिकाधिक छात्र उनसे मुक्त नहीं हो पाते हैं। अतः इन त्रुटियों का सामूहिक उपचार करने से पूरे समूह को लाभ होता है। हिन्दी में उच्चारण सम्बन्धी त्रुटि इसी के अन्तर्गत आती है।

2. **व्यक्तिगत उपचार** :– इसके अन्तर्गत निम्न बातों पर ध्यान चाहिये–

   i- व्यक्तिगत उपचार में बालकों की व्यक्तिगत विभिन्नता का ध्यान रखना चाहिये।

   ii- व्यक्तिगत अध्ययन करना चाहिये तथा उपचार–गृह पद्धति का सहारा लेना चाहिये।

   iii- उपचार करते समय परिस्थिति, मजबूरियों एवं वातावरण का ध्यान रखना चाहिए।

   iv- उपचार हेतु दण्ड आवश्यक नहीं है। प्रेम एवं सहानुभूति के साथ व्यक्तिगत उपचार करना चाहिये।

   v- कक्षा के छात्र पृथक्–पृथक् ढंग से भूल करते हैं। इसीलिये उपचार भी पृथक्–पृथक् ढ़ंग से किया जाना चाहिये।

   vi- सामूहिक उपचार व्यक्तिगत रूप से भी कराये जा सकते हैं, सामूहिक उपचार में सम्भव हैं व्यक्तिगत उपचार न हो सके। बिना व्यक्तिगत ध्यान दिये सच्चाई का पता लगाना कठिन हो जाता है।

11.4.4 उपचारात्मक शिक्षण प्रदान करने की विधियाँ

1. प्रति विद्यार्थी अधिगम संबंधी दोषों को व्यक्तिशः ज्ञात करके उनके निवारण के उपाय के लिए कथन।
2. विद्यार्थियों का त्रुटि संशोधन।
3. छोटे–छोटे समूहों में विद्यार्थियों को बाँट कर उनकी समस्या के आधार पर शिक्षण व्यवस्था करना।
4. विद्यार्थियों की व्यक्तिगत विभिन्नता को आधार मानकर उनके शिक्षण की व्यवस्था करना।
5. विद्यार्थियों के अधिगम संबंधी दोषों का निदान करके उनका परीक्षण करना।

11.4.5 उपचारात्मक शिक्षण के समय सावधानियाँ

1. अगर बालक उपकरणों से ऊब कर भूलें कर रहा हो, तो उपकरण बदल देना चाहिये।
2. शिक्षण विधियाँ, जिनका अध्यापक प्रयोग कर रहा है, अगर प्रभावात्मक नहीं हैं , तो उन्हें बदल देना चाहिये।
3. शैक्षणिक उपचार में कभी–कभी वातावरण सम्बन्धी परिवर्तन लाभदायक होते हैं।

4. छात्रों का मूल्यांकन ठीक ढ़ग से होना चाहिये। आवश्यकता पड़ने पर परीक्षा पद्धति बदल देनी चाहिये।
5. समय–समय पर बालकों की मानसिक एवं शारीरिक अवस्था का निरीक्षण किया जाना चाहिये। इससे बालकों का स्वास्थ एवं सन्तुलन ठीक रहता है।
6. सीखने के बाधक तत्वों का पता लगा कर उन्हें दूर करना चाहिये।
7. सीखने के साधन तत्वों का पता लगा कर उन्हें प्रयुक्त करना चाहिये।
8. छात्रों को शैक्षणिक निर्देशन देते रहना चाहिये।
9. छात्रों की सामाजिक, आर्थिक एवं परिवेश सम्बन्धी परिस्थितियों की जॉच करके उन्हे अपने वातावरण से सामजस्य स्थापित करने योग्य बनाना चाहिये।
10. विद्यालय का वातावरण रूचिकर एवं स्वास्थ्यप्रद होना चाहिये।

बोध प्रश्न

प्रश्न 10: उपचारात्मक शिक्षण का प्रयोग कहाँ किया जाता है?

....

....

प्रश्न 11: उपचारात्मक शिक्षण का मूल उद्देश्य क्या है?

....

....

प्रश्न 12: उपचारात्मक शिक्षण की कितनी पद्धतियाँ है?

....

....

11.5 सारांश

निदानात्मक परीक्षण वे परीक्षण कहे जाते हैं जो सुधार, निदान आदि से संबंधित होते हैं। नैदानिक परीक्षण विद्यार्थियों के गुणों एवं अवगुणों दोनों से ही संबंधित ज्ञान प्रस्तुत करते है। नैदानिक परीक्षण प्रायः परीक्षण माला के रुप में होते हैं जिसके अलग–अलग खण्डों से हमें भिन्नतापरक जानकारी प्राप्त होता है। नैदानिक परीक्षण विद्यार्थी की विषय–संबंधियों तथा योग्यताओं का माप नहीं करता हैं वरन् किसी विषय विशेष में उस विषय के किसी क्षेत्र में छात्र की कमजोरियों का पता लगाता है। उपचारात्मक शिक्षण सीखने के दूषित एवं अशुद्ध ढंग को मिटाने के लिये तथा उन्हें सुधारात्मक रूप व दिशा प्रदान करता है। यह प्रत्येक प्रकार के सीखने की अशुद्धियों में सुधार करके विकासात्मक एवं उपचारात्मक शिक्षण दोनों एक दूसरे के सहयोगी है। कभी–कभी देखा जाता है कि बुरी संगति के कारण भी छात्र अध्ययन में मन नहीं लगाते और पिछड़ने लगते हैं। ऐसी स्थिति में अध्यापक को बुरी संगति से मुक्ति दिलाने के लिये उपचरात्मक शिक्षण का सहारा लेना चाहिये।

11.6 अभ्यास प्रश्न

1. नैदानिक परीक्षण को परिभाषित कीजिए?
2. अच्छे नैदानिक परीक्षण की विशेषताओं का वर्णन कीजिए?
3. अच्छे नैदानिक परीक्षण की रचना कीजिए?
4. उपचारात्मक शिक्षण को परिभाषित कीजिए?
5. उपचारात्मक शिक्षण के महत्व को निर्धारित कीजिए?
6. उपचारात्मक शिक्षण प्रदान करने की विभिन्न विधियों का विस्तार से वर्णन कीजिए?

11.7 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में नैदानिक परीक्षण पर चर्चा करेगें।
2. छात्राध्यापक आपस में अच्छे नैदानिक परीक्षण की रचना पर चर्चा करेंगें।
3. छात्राध्यापक आपस में उपचारात्मक शिक्षण पर चर्चा करेंगें।

इकाई–12 इकाई परीक्षण का निर्माण, ब्लू प्रिंट, परीक्षण एवं प्रश्न पत्र निर्माण

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 वस्तुनिष्ठ परीक्षण

12.3.1 उद्देश्यों का निर्धारण

12.3.2 प्रश्नों की रचना एवं उनका मूल्यांकन

12.3.3 निर्मित प्रश्नों को लागू करना

12.3.4 प्रश्न–विश्लेषण

12.3.5 पद विश्लेषण की विधि

12.3.6 सामान्य–स्तर निर्धारण

12.3.7 विश्सनीयता निर्धारण

12.3.8 वैधता निर्धारण

12.3.9 परीक्षण का अन्तिम प्रारूप

12.4 सारांश

12.5 अभ्यास प्रश्न

12.6 चर्चा के बिन्दु

12.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.1 प्रस्तावना

एक वस्तुनिष्ठ परीक्षा या उपलब्धि परीक्षा विकसित कौशल या ज्ञान का एक परीक्षण है। वस्तुनिष्ठ परीक्षण का सबसे आम प्रकार एक मानकीकृत परीक्षण है जो किसी दिए गए ग्रेड स्तर में सीखने वाले कौशल और ज्ञान को मापने के लिए विकसित किया जाता है, आमतौर पर नियोजित निर्देश, जैसे प्रशिक्षण या कक्षा निर्देश के माध्यम से। वस्तुनिष्ठ परीक्षण अक्सर परीक्षणों से अलग होते हैं जो योग्यता को मापते हैं, एक अधिक सामान्य और स्थिर संज्ञानात्मक विशेषता। छात्रवृत्ति तैयार किए जाने वाले निर्देश के स्तर को निर्धारित करने के लिए उपलब्धि परीक्षा स्कोर अक्सर शैक्षणिक प्रणाली में उपयोग किए जाते हैं। उच्च उपलब्धि स्कोर आमतौर पर ग्रेड–स्तरीय सामग्री की निपुणता और उन्नत

निर्देश के लिए तैयारी का संकेत देते हैं। कम उपलब्धि स्कोर उपचार के लिए आवश्यकता या पाठ्यक्रम ग्रेड दोहरा सकते हैं।

प्रस्तुत इकाई में हम वस्तुनिष्ठ परीक्षण, उद्देश्यों का निर्धारण, प्रश्नों की रचना एवं उनका मूल्याकन, निर्मित प्रश्नों को लागू करना, प्रश्न–विश्लेषण, पद विश्लेषण की विधि, सामान्य–स्तर निर्धारण, विश्वसनीयता निर्धारण, वैधता निर्धारण और परीक्षण का अन्तिम प्रारूप के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको वस्तुनिष्ठ परीक्षण का निर्माण को समझने में सुविधा होगी।

12.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेगें कि–

- वस्तुनिष्ठ परीक्षण को परिभाषित कर सकेंगे।
- वस्तुनिष्ठ परीक्षण के उद्देश्यों को निर्धारित कर सकेंगे।
- वस्तुनिष्ठ परीक्षण हेतु प्रश्नों की रचना कर सकेंगे।
- वस्तुनिष्ठ परीक्षण हेतु प्रश्नों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- वस्तुनिष्ठ परीक्षण हेतु विभिन्न पदों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- वस्तुनिष्ठ परीक्षण हेतु मानक, वैधता एवं विश्वसनीयता निर्धारित कर सकेंगे।

12.3 वस्तुनिष्ठ परीक्षण

परीक्षा का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों की उपलब्धि या निष्पत्ति की जांच करना होता है। हमारी आधुनिक परीक्षा प्रणाली दोषपूर्ण है। इससे विद्यार्थियों की उपलब्धि का उचित मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। ऐसा देखा गया है कि विद्यार्थी वर्ष के अन्तिम समय में पढ़ कर ही अच्छे अंक प्राप्त कर लेते हैं और सत्र/वर्ष भर किए गए कार्यों की परीक्षा में विशेष महत्व नहीं दिया जाता। इसका मुख्य कारण प्रश्न पत्रों के निर्माण एवं उत्तर पुस्तिकाओं के मूल्यांकन की प्रक्रिया में दोष होना है। यदि प्रश्न पत्रों अर्थात् उपलब्धि परीक्षणों का निर्माण उचित रूप से किया जाए तो इन समस्याओं को दूर किया जा सकता है। उपलब्धि परीक्षण से अभिप्राय ऐसे परीक्षण से है जो एक निश्चित कार्य क्षेत्र में अर्जित ज्ञान का मापन करता है। विभिन्न विषयों मे अर्जित ज्ञान का तथा वर्तमान योग्यता का मापन भी इनकी सहायता से किया जाता है। एक उपलब्धि परीक्षण (वस्तुनिष्ठ) के निर्माण हेतु निम्नलिखित सोपानों का अनुसरण करना पड़ता है–

12.3.1 उद्देश्यों का निर्धारण

यह वस्तुनिष्ठ उपलब्धि परीक्षण की रचना का प्रथम चरण होता है। इस चरण में हम परीक्षण के उद्देश्य निर्धारित करते हैं। उद्देश्य निर्धारित हो जाने से परीक्षण की सार्थकता तथा उपादेयता बढ़ जाती है। कोई परीक्षण पर्याप्त रूप से उपादेय है अथवा नहीं, यह ज्ञात

करने के लिए आवश्यक है कि उसके द्वारा सिद्ध होने वाले उद्देश्यों का ज्ञान प्राप्त कर लिया जाए। उपलब्धि परीक्षण में उद्देश्य निर्धारित करते समय निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए–

(a) निर्धारित पाठ्यक्रम (Syllabus) का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन करना।

(b) मनोनीत (Prescribed) पाठ्य पुस्तकों का सर्वेक्षण (Survey)।

(c) विषय से संबंधित विद्वानों के विचारों का संकलन।

(d) शिक्षकों की सम्मतियां प्राप्त करना।

इस प्रकार पाठ्यक्रम, पाठ्य–पुस्तकें, अनुभवी विद्वानों के मत तथा शिक्षकों के विचार आदि स्त्रोतों की सहायता से उपलब्धि परीक्षण के उद्देश्य निर्धारित किए जाते हैं। परीक्षण निर्माण के इस चरण में योजना बनायी जाती है। परीक्षण के लिए विषयवस्तु, शिक्षण उद्देश्य, प्रश्नों के प्रकार, प्रश्नों की संख्या, समयावधि, अंकनविधि, परीक्षण का प्रारूप जैसी बातों को निर्धारित किया जाता है। परीक्षण की विषयवस्तु, शिक्षण उद्देश्य, प्रश्नों के प्रकार तथा प्रश्नों की संख्या निश्चित करने के उपरान्त ब्लूप्रिंट (Blue Print) तैयार की जाती है।

जिस प्रकार इमारत का निर्माण करने से पूर्व आर्किटेक्ट अथवा कारीगर द्वारा एक अच्छा एवं नया मानचित्र बना लिया जाता है और कारीगर उसी के अनुसार इमारत का निर्माण करता है। उसी प्रकार अच्छे प्रश्न–पत्र का निर्माण करने से पूर्व शिक्षक द्वारा एक ब्लूप्रिंट तैयार किया जाता है, उसी आधार पर प्रश्न–पत्र का निर्माण करते हैं।

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान के अनुसार, ''उद्देश्यों, उपइकाइयों तथा प्रश्नों के प्रकारों के विभिन्न पक्षों हेतु अंक भार संबंधी किये गये निर्णयों को व्यावहारिक रुप में परिभाषित किया जाता है, जिसे आधार पत्रक कहते हैं।''

यह ब्लूप्रिंट (Blue Print) इकाई की जाँच करता है। शिक्षा के पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की समप्राप्ति की जाँच हेतु जो प्रश्न–पत्र निर्मित किया जाता है तथा छात्रों द्वारा हल किया जाता है, उसे इकाई परीक्षण कहते हैं। इसकी अवधि 35–40 मिनट की होती है तथा इसी मूल्यांकन द्वारा यह पता लगाया जाता है कि उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हुई है?

12.3.2 प्रश्नों की रचना एवं उनका मूल्यांकन

उपलब्धि परीक्षण के उद्देश्य निर्धारित करने के उपरान्त प्रश्नों अथवा परीक्षण पदों की रचना निम्नलिखित दो रूपों में की जाती है–

(a) पहचान रूप (Recognition Type): ऐसे प्रश्न जो विद्यार्थियों की पहचानने की क्षमता का परीक्षण करते हैं।

(b) प्रत्यास्मरण रूप (Recall Type): ऐसे प्रश्न जो विद्यार्थियों की प्रत्यास्मरण क्षमता का परीक्षण करते हैं।

परीक्षण पदों की रचना करते समय निम्नलिखित सामान्य सावधानियों पर ध्यान देना आवश्यक है–

1. परीक्षण–पदों या प्रश्नों की भाषा सरल, स्पष्ट, असंदिग्ध तथा बोधनीय होनी चाहिए।
2. प्रश्नों को हल करने के लिए लिखित निर्देश भी सरल तथा बोधगम्य भाषा में दिए जाने चाहिए।
3. प्रश्न न तो अत्याधिक कठिन और न ही अधिक सरल हो। प्रश्नों की रचना विद्यार्थियों की आयु एवं स्तर के अनुरूप की जानी चाहिए।
4. एक प्रकार के प्रश्नों को इकट्ठा करके उन्हें व्यवस्थित रूप में रखना चाहिए। इससे अंकन में सुविधा होती है।
5. प्रत्येक प्रकार के प्रश्न में उदाहण के रूप में प्रथम प्रश्न हल कर देना चाहिए।
6. प्रत्येक प्रश्न उद्देश्य पर आधारित होना चाहिए।
7. प्रश्नों में प्रयुक्त होने वाले शब्दों तथा विकल्पों की पूर्ण समीक्षा कर लेनी चाहिए।
8. प्रश्नों द्वारा विषय–वस्तु के अधिक से अधिक अंशों का मापन होना चाहिए।
9. प्रश्नों की शुद्धता, यथार्थता, अपर्याप्तता तथा तर्कसंगतता के सम्बन्ध में अनुभवी अध्यापकों की सम्मति ले लेनी चाहिए।

बोध प्रश्न

प्रश्न 13: उपलब्धि परीक्षण निर्माण का प्रथम चरण कौन सा है?

....

....

प्रश्न 14: ब्लू प्रिंट या आधार पत्रक किसे कहते है?

....

....

प्रश्न 15: पहचान प्रश्न किसे कहते है?

....

....

12.3.3 निर्मित प्रश्नों को लागू करना

प्रश्नों की रचना हो जाने के उपरान्त, परीक्षण–कर्त्ता एक प्रतिनिधि समूह अथवा न्यादर्श का चयन करता है। यह समूह उन्हीं विद्यार्थियों का होता है जिनके लिए परीक्षण बनाया गया है। इस समूह के चयन में दो बिन्दुओं पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाता है–

1. प्रतिनिधित्व (Representativeness): समूह उस बड़े समुदाय का प्रतिनिधि होना चाहिए जिसके लिए परीक्षण की रचना की गई है।
2. निष्पक्षता (Absence of Bias): समूह का चयन परीक्षणकर्त्ता एवं अध्यापक के व्यक्तिगत पक्षपातों से अलग रहकर किया जाना चाहिए।

समूह का चयन करने के पश्चात् सभी प्रश्नों को उस समूह पर लागू किया जाता है। प्रश्न हल करने के लिए परीक्षार्थियों को उदारतापूर्वक समय देना चाहिए परन्तु व्यवहारिक कठिनाइयों को ध्यान में रखकर 90% परीक्षार्थियों द्वारा सभी प्रश्न हल कर लेने पर, अन्य सभी परीक्षार्थियों से भी उत्तर पुस्तिकाएं ले लेनी चाहिए।

उत्तर पुस्तिकाओं को सावधानीपूर्वक इकट्ठा करना चाहिए। इसके पश्चात् उत्तर पुस्तिकाओं का अंकन किया जाता है। अंकन के लिए पूर्वनिर्मित अंकन कुंजी (Scoring Key) के अनुसार ही अंकन करना चाहिए। अंकन में एक प्रश्न के लिए एक अंक रखने की प्रथा मितव्ययी एवं व्यावहारिक दृष्टि से अधिक उपयोगी सिद्ध हुई है परन्तु यह कोई अनिवार्य नियम नहीं है। कई विकल्प वाले प्रश्नों अथवा एकान्तर–प्रत्युत्तर रूप प्रश्नों के अंकन में शुद्धि–सूत्र का प्रयोग किया जाना चाहिए। इससे अनुमान तत्वों का प्रायः निवारण हो जाता है। सामान्यतः निम्नांकित शुद्धि–सूत्र का प्रयोग किया जाता है–

$$S = R - \frac{W}{N-1}$$

S = शुद्ध किया हुआ अंक (Score Corrected for Guessing Factor)

R = शुद्ध उत्तरों की संख्या (No. of Right Answers)

W= गलत उत्तरों की संख्या (No. of Wrong Answers)

N = प्रत्येक प्रश्न में विकल्पों की संख्या (No. of Alternatives in each question)

12.3.4 प्रश्न–विश्लेषण

यह उपलब्धि परीक्षण के निर्माण का चौथा सोपान होता है। प्रश्न–विश्लेषण से अभिप्राय है–प्रश्न की उपयोगिता (Utility), कुशलता (Efficiency) तथा तर्कशीलता की व्याख्या करना। उदाहरण के लिए किसी परीक्षण के लिए निर्मित अमुक प्रश्न अपना कार्य किस रूप में कर रहा है? उस प्रश्न की सहायता से विद्यार्थियों की योग्यता का मापन कहां तक सम्भव हो सका है प्रश्न–विश्लेषण मुख्यतः दो तथ्यों पर केन्द्रित होता है–

(a) प्रश्नों का कठिनाई स्तर (Difficulty Level of Items): परीक्षार्थियों के समूह का वह अनुपात जो किसी प्रश्न को शुद्ध रूप में हल करता है अथवा वास्तविक रूप में जानता है, उस प्रश्न का 'कठिनाई–स्तर' माना जाता है।

$$D.V. = 100 - \frac{(RH - RL)}{2n} \times 100$$

D.V. = कठिनाई–स्तर

RH = उच्च वर्ग में शुद्ध उत्तरों की संख्या

RL = निम्न वर्ग में शुद्ध उत्तरों की संख्या

n = विद्यार्थियों की संख्या

(b) प्रश्नों का विभेदीकरण मान (Discriminatory Value of Items): विभेदीकरण मान की सहायता से उच्च योग्यता एवं निम्न योग्यता वाले विद्यार्थियों में अन्तर किया जा सकता है। यदि प्रश्न–समूह सीमित हो तो साधारण सांख्यिकीय विधियों

(Statistical Techniques) द्वारा प्रश्नों का कठिनाई स्तर तथा विभेदीकारी मान ज्ञात किया जा सकता है परन्तु गणना (Computation) की सुविधा के लिए आजकल प्रश्न–विश्लेषण तालिकाओं (Item Anslysis Talbes) का उपयोग किया जा रहा है।

$$D.P. = \frac{(RH - RL)}{n}$$

D.P. = विभेदीकरण मान

RH = उच्च वर्ग में शुद्ध उत्तरों की संख्या

RL = निम्न वर्ग में शुद्ध उत्तरों की संख्या

n = विद्यार्थियों की संख्या

12.3.5 पद विश्लेषण की विधि

परीक्षार्थियों को परीक्षा देने के बाद उनका परीक्षण कर लिया जाता है। फिर कॉपियों को अंकों के अनुसार क्रम से रख लिया जाता है। सबसे ऊपर उस विद्यार्थी की कॉपी होगी जिसको सबसे अधिक अंक मिले हैं। इसके बाद उससे कम वाले की और इसी प्रकार अन्तिम कॉपी उसकी होगी जिसके सबसे कम अंक आये हैं। इसके पश्चात् उन्हें हम तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं। केली के अनुसार प्रथम भाग में ऊपर की 27 प्रतिशत कॉपी होनी चाहिए, दूसरे भाग में बीच की 46 प्रतिशत और तीसरे भाग में नीचे की 27 प्रतिशत कॉपिया होनी चाहिए। परन्तु भागों को हम 25 प्रतिशत प्रथम व तृतीय और 50 प्रतिशत द्वितीय भाग में ही बांट सकते हैं। इतना ध्यान में रखना चाहिए कि उच्च अथवा प्रथम भाग और तृतीय भाग अथवा निम्न भाग में विद्यार्थियों की संख्या समान होनी चाहिए। क्योंकि हम बीच के भाग को छोड़ देते हैं और अन्तिम तथा प्रथम भाग की ही तुलना करते हैं। मान लीजिए जिस कक्षा में परीक्षा दी गई उसमें विद्यार्थी 74 है तो उच्च वर्ग में 74 का 27 प्रतिशत अर्थात् 20 विद्यार्थी होंगे। इसी तरह निम्न वर्ग में भी 20 विद्यार्थी होंगे और 34 विद्यार्थी के बीच के वर्ग में होंगे, जिनका अध्ययन नहीं किया जाएगा। इसके पश्चात् निम्न सूत्र से प्रत्येक पद का विभेदकारी मान निकाल सकते हैं।

12.3.6 सामान्य–स्तर निर्धारण

सामान्य स्तर से अभिप्राय एक ऐसे मानदण्ड से है जिसके द्वारा अन्य परीक्षार्थियों के अंक सरलतापूर्वक समझे जा सकते हैं। ये सामान्य स्तर निम्नलिखित प्रकारके होते हैं।

1. श्रेणी सम्बन्धी सामान्य स्तर (Grade Norms)
2. आयु सम्बन्धी सामान्य स्तर (Age Norm)
3. लिंग सम्बन्धी सामान्य स्तर (Sex Norm)
4. नगर तथा ग्राम सम्बन्धी सामान्य स्तर (Urban and Rural Norms)
5. प्रतिशतीय सामान्य स्तर (Percentile Norm)

आजकल प्रतिशतीय सामान्य स्तर ज्ञात करना अधिक उपयुक्त समझा जाता है। इन सामान्य–स्तरों पर यह ज्ञात किया जा सकता है कि अमुक परीक्षार्थी की स्थिति पूर्ण समूह में कैसी है। उसके ऊपर तथा नीचे कितने प्रतिशत विद्यार्थी हैं।

12.3.7 विश्वसनीयता निर्धारण

वही परीक्षण विश्वसनीय माना जाता है जिस पर विद्यार्थियों द्वारा प्राप्तांकों मे देश, काल, परीक्षक तथा परीक्षार्थी के व्यक्तिगत अंशों का लेश–मात्र भी प्रभाव न पड़े। ऐसे परीक्षणों के प्राप्तांक स्थिर और अपरिवर्तनशील होते हैं। किसी परीक्षण की विश्वसनीयता का निर्धारण करने के लिए विभिन्न विधियों का उपयोग किया जाता है परन्तु सबसे अधिक तर्कसंगत विधि तर्क–युक्त समानता विधि (Method of Rational Equivalence) होती है। इस विधि द्वारा अन्य सभी विधियों के दोषों का निवारण हो जाता है। इस विधि का प्रतिपादन कूडर एवं रिचर्डसन (Kuder & Richardson) ने किया। इस विधि की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें सभी प्रश्नों का पारस्परिक सम्बन्ध सुगमतापूर्वक ज्ञात किया जा सकता है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक एवं शिक्षाशास्त्री गिलफोर्ड (Guilford) ने इस विधि के प्रयोग पर विशेष बल दिया है।

12.3.8 वैधता निर्धारण

वैधता से अभिप्राय किसी कसौटी के साथ परीक्षण के सह–सम्बन्ध से है। यह उपलब्धि परीक्षण के निर्माण का अन्तिम–चरण होता है। वैधता मुख्यतः निम्नलिखित प्रकार की होती है।

1. **पाठ्य सम्बन्धी वैधता (Content Validity):** –इस प्रकार की वैधता का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से होता है अर्थात् जब परीक्षण और पाठ्यक्रम में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है तो वह पाठ्यक्रम सम्बन्धी वैधता होती है। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक है–

    (a) सर्वप्रथम पूर्ण पाठ्यक्रम को पांच भागों में बांट लिया जाए और उसके पश्चात् प्रत्येक भाग को पांच पाठों (Lessons) में बांट लिया जाए और प्रत्येक पाठ पर दस प्रश्नों की रचना की जाए। इस प्रकार प्रश्नों की कुल संख्या 250 हो जाएगी। प्रश्नों की संख्या भागों के अनुसार कम या अधिक भी की जा सकती है।

    (b) प्रश्नों की भाषा सरल तथा विद्यार्थियों के स्तर के अनुरूप होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त परीक्षण में पाठ्यक्रम से सम्बन्धित मुख्य बिन्दुओं से सम्बन्धित प्रश्नों का समावेश होना चाहिए।

2. **समवर्ती वैधता (Concurrent Validity):** –इसमें एक उपलब्धि परीक्षण द्वारा प्राप्त किए हुए अंकों का सहसम्बन्ध किसी दूसरे प्रचलित परीक्षण के अंकों से किया जाता है। विद्यार्थियों द्वारा परीक्षण में प्राप्त अंकों का सह सम्बन्ध किसी पहले से प्रमापीकृत परीक्षण के प्राप्तांकों से किया जा सकता है। इस प्रकार की वैधता को समवर्ती वैधता कहा जाता है। समवर्ती वैधता के लिए यह आवश्यक है कि हम एक वैध परीक्षण के साथ अपने बनाये परीक्षण की वैधता ज्ञात करें।

3. **निर्वचन वैधता** –किसी परीक्षण को देने के पश्चात् उस परीक्षण का फलांक हमारे सम्मुख आता है जिसे देख कर हम कह सकते हैं कि इसका परिणाम क्या होगा अथवा इस फलांक के आने पर क्या निष्कर्ष निकाला जा सकता है? इसका उत्तर प्राप्त करने के लिए हमें यह देखना पड़ता है कि हमारे परीक्षण के निर्वचन में कौन–कौन से विचारों अथवा अवधारणाओं (Concepts) पर बल दिया जाए और उनमें से किन विचारों में विद्यार्थियों ने औसत अंक प्राप्त किए हैं अथवा औसत से कम या अधिक। इस प्रकार की वैधता में हमें पाठ्यक्रम का निर्वचन नहीं करना पड़ता। इसमें हम किसी अन्य विशेषज्ञ की राय भी ले सकते हैं।

4. **रूप वैधता (Face Validity):** –जब एक परीक्षण को देखकर यह बताया जा सके की वह किस योग्यता का मापन करेगा अथवा वह गुण को मापन के लिए निर्मित किया गया है तो उसे रूप वैधता कहा जाता है।

12.3.9 उद्देश्य

पद विश्लेषण के पश्चात् हमें प्रत्येक पद/प्रश्न की स्थिति का पता चल जाता है अर्थात् हमें प्रत्येक पद की कठिनाई, सरलता तथा विभेदकारिता का ज्ञान हो जाता है। हमें यह ज्ञात हो जाता है कि कौन से प्रश्न ऐसे हैं जिनका उत्तर कोई विद्यार्थी नहीं दे सका और कौन से ऐसे हैं जिन्हें सभी विद्यार्थियों ने किया है और कौन से ऐसे प्रश्न हैं जिन्हें 70 प्रतिशत विद्यार्थी सही कर सके। उपलब्धि परीक्षण का अन्तिम प्रारूप निर्धारण करने के लिए प्रश्नों के 'कठिनाई स्तर' तथा 'विभेदीकरण मान' को एक साथ तालिका में लिख लिया जाता है। उसके पश्चात् दोनों मानों की तुलनात्मक समीक्षा करके प्रत्येक प्रश्न की कुशलता का विश्लेषण किया जाता है और उचित कठिनाई स्तर तथा संतोषप्रद विभेदीकरण मान रखने वाले प्रश्नों का चयन किया जाता है। शेष प्रश्नों का बहिष्कार कर दिया जाता है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 16: प्रत्यास्मरण प्रश्न किसे कहते है?

....

....

प्रश्न 17: प्रश्नों के कठिनाई स्तर से क्या तात्पर्य है?

....

....

प्रश्न 18: प्रश्नों के विभेदन क्षमता से क्या तात्पर्य है?

....

....

12.4 सारांश

उपलब्धि परीक्षण से अभिप्राय ऐसे परीक्षण से है जो एक निश्चित कार्य क्षेत्र में अर्जित ज्ञान का मापन करता है। विभिन्न विषयों मे अर्जित ज्ञान का तथा वर्तमान योग्यता का मापन भी इनकी सहायता से किया जाता है। उपलब्धि परीक्षण के निर्माण हेतु निश्चित सोपानों का अनुसरण करना पड़ता है। प्रथम चरण परीक्षण के उद्देश्य निर्धारित करते हैं। उद्देश्य निर्धारित हो जाने से परीक्षण की सार्थकता तथा उपादेयता बढ़ जाती है। उपलब्धि परीक्षण के उद्देश्य निर्धारित करने के उपरान्त दुसरें चरण में प्रश्नों अथवा परीक्षण पदों की रचना की जाती है। प्रश्नों की रचना हो जाने के उपरान्त, परीक्षण–कर्त्ता एक प्रतिनिधि समूह अथवा न्यादर्श का चयन करता है। इसके बाद तीसरे चरण में प्रश्न–विश्लेषण, पद विश्लेषण की विधि, सामान्य–स्तर निर्धारण, विश्वसनीयता निर्धारण, वैधता निर्धारण और परीक्षण का अन्तिम प्रारूप तैयार किया जाता है।

12.5 अभ्यास प्रश्न

- वस्तुनिष्ठ परीक्षण को परिभाषित कीजिए?
- वस्तुनिष्ठ परीक्षण के उद्देश्यों को निर्धारित कीजिए?
- वस्तुनिष्ठ परीक्षण हेतु प्रश्नों की रचना कीजिए?
- वस्तुनिष्ठ परीक्षण हेतु प्रश्नों का विश्लेषण कैसे करेंगें?
- वस्तुनिष्ठ परीक्षण हेतु विभिन्न पदों का विश्लेषण कैसे करेंगें?
- वस्तुनिष्ठ परीक्षण हेतु मानक, वैधता एवं विश्वसनीयता कैसे निर्धारित करेंगें?

12.6 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में वस्तुनिष्ठ परीक्षण पर चर्चा करेगें।
2. छात्राध्यापक आपस में वस्तुनिष्ठ परीक्षण हेतु प्रश्नों के विश्लेषण पर चर्चा करेंगें।
3. छात्राध्यापक आपस में वस्तुनिष्ठ परीक्षण हेतु मानक, वैधता एवं विश्वसनीयता निर्धारण पर चर्चा करेंगें।

12.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण सर्वप्रथम ब्लूम ने किया।
2. भावात्मक क्षेत्र के उद्देश्यों का वर्गीकरण क्रेथवोल, ब्लूम, मासिआ ने किया।
3. क्रियात्मक क्षेत्र के उद्देश्यों का वर्गीकरण सिम्पसन ने किया।
4. प्रोजेक्ट विधि का प्रतिपादन विलियम. एच. किलपैट्रिक ने किया।

5. प्रोजेक्ट अथवा प्रयोजन एक तन्मयतापूर्ण तथा उद्देश्यपूर्ण क्रिया है जिसका सामाजिक वातावरण में विकास होता है।

6. सीखने के तत्परता का नियम थार्नडाइक ने बताया।

7. उपलब्धि परीक्षण एक ऐसा अभिकल्प है जो एक विषय या पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों में विद्यार्थियों के समझ, कौशल एवं ज्ञान का मापन करता है।

8. निदानात्मक परीक्षण वह साधन है, जो शैक्षिक वैज्ञानिकों के द्वारा विद्यार्थियों की कठिनाईयों को ज्ञात करने और यथासंभव उन कठिनाइयों के कारणों को व्यक्त करने के लिए निर्मित किया गया है।

9. कुप्पूस्वामी ने नैदानिक परीक्षण की उपयोगिता के विषय में लिखा है कि नैदानिक परीक्षणों को हमें यह बतलाना चाहिए कि बालक क्या कर सकता है और क्या नहीं कर सकता है क्योंकि जब हमें इस बात का ज्ञान हो जाएगा कि वे विषयों में उनकी रुचियाँ और अभियोग्यताएं हैं, तब हम उनके प्रति अपने कर्तव्य का पालन कर सकेगें।

10. निदान में जहॉ बच्चों की कठिनाइयों का पता लगाया जाता है वहीं उपचारात्मक शिक्षण में इन कठिनाइयों को दूर करते हुय शिक्षण किया जाता है।

11. वस्तुतः उपचारात्मक शिक्षण का मूल उद्देश्य है, छात्रों की त्रुटियों का निवारण।

12. उपचारात्मक शिक्षण की पद्धतियों को हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं, सामूहिक एवं व्यक्तिगत।

13. उद्देश्यों का निर्धारण, उपलब्धि परीक्षण की रचना का प्रथम चरण होता है।

14. उद्देश्यों, उपइकाइयों तथा प्रश्नों के प्रकारों के विभिन्न पक्षों हेतु अंक भार संबंधी किये गये निर्णयों को व्यावहारिक रुप में परिभाषित किया जाता है, जिसे आधार पत्रक कहते हैं।

15. ऐसे प्रश्न जो विद्यार्थियों की पहचानने की क्षमता का परीक्षण करते हैं, पहचान प्रश्न कहते है।

16. ऐसे प्रश्न जो विद्यार्थियों की प्रत्यास्मरण क्षमता का परीक्षण करते हैं, प्रत्यास्मरण प्रश्न कहते हैं।

17. परीक्षार्थियों के समूह का वह अनुपात जो किसी प्रश्न को शुद्ध रूप में हल करता है अथवा वास्तविक रूप में जानता है, उस प्रश्न का 'कठिनाई–स्तर' माना जाता है।

18. प्रश्नों के विभेदन क्षमता की सहायता से उच्च योग्यता एवं निम्न योग्यता वाले विद्यार्थियों में अन्तर किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ

- **एन.सी.ई.आर.टी. (2012).** *सोर्सबुक ऑन एसेसमेंट फॉर क्लासेस 6–8 साइंस,* नई दिल्लीः सी.बी.एस.ई.।

- **एन.सी.ई.आर.टी. (2013).** *पेडागॉजी ऑफ साइंस टेक्स्ट बुक फॉर बी.एड. पार्ट–2,* नई दिल्लीः सी.बी.एस.ई.।

- **कोहली, विजय कुमार (1998).** *विज्ञान कैसे पढ़ाएं,* विवेक पब्लिशर्ज, अमृतसर।

- **कुमार, दीपक, (2016).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* ओसीन पब्लिकेशन वाराणसी।

- **भौतिक विज्ञान का शिक्षणशास्त्र (2011).** शिक्षक–शिक्षा विभाग, शिक्षा विद्या शाखा, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी।

- **भार्गव, महेश (1990).** *आधुनिक मनोवैज्ञानिक एवं मापन,* कचहरी, आगरा।

- **श्रीवास्तव, पी.सी. (2018).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।

- **सी.बी.एस.ई. (2010).** *फॉरमेटिव एसेसमेंट मैनुअल फॉर टीचर्स क्लास –10 (साइंस),* नई दिल्लीः सी.बी.एस.ई.।

- **सी.बी.एस.ई. (2016).** *रिवाइज्ड फॉरमेटिव एसेसमेंट मैनुअल फॉर टीचर्स क्लास –9 (साइंस),* नई दिल्लीः सी.बी.एस.ई.।

- **सुन्द्रियाल, सुनीता (2019).** *टीचिंग ऑफ फिजिकल साइंस,* अग्रवाल पब्लिकेशन, कानपुर।

- **सूद, जे.के. (2017).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* अग्रवाल पब्लिकेशन, कानपुर।

- **नेगी, जे.एस. (2020).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* श्री विनोद पुस्तक मंदिर, वाराणसी।

- **अस्थाना, विपिन (1999).** *मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन,* श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

- **अग्रवाल, जे.सी. (2005).** *शिक्षा के सिद्धान्त तथा तकनीक,* आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली।

- **गुप्ता, रेनू, वर्मा, अवधेश कुमार एस. और कुमारी, विनोद (2016).** *अधिगम एवं शिक्षण,* ठाकुर पब्लिशर्स, लखनऊ।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

B.Ed.-E-42/B.Ed-SE-42
भौतिकीय विज्ञान का अध्यापन विज्ञान

खण्ड — 5

भौतिकीय विज्ञान में अधिगम संसाधन

इकाई — 13

अधिगम संसाधनः अर्थ, प्रकार, निर्माण और संसाधनों का उपयोग **187**

इकाई — 14

पाठ्य–पुस्तक, जर्नल, हस्तपुस्तिका एवं शिक्षार्थी कार्य पुस्तिका **203**

इकाई — 15

भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला, कक्षा में और कक्षा के बाहर भौतिकीय विज्ञान अधिगम **215**

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रोफेसर सीमा सिंह — उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज कुलपति

विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर पी० के० स्टालिन — निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय — प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर छत्रसाल सिंह — प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर के० एस० मिश्रा — पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर धनन्जय यादव — विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रोफेसर मीनाक्षी सिंह — आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

डॉ० जी० के० द्विवेदी — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ० दिनेश सिंह — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ० सुरेन्द्र कुमार — सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ० दिलीप कुमार सिंह — सहायक आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, सी0एम0पी0डिग्री कॉलेज, प्रयागराज (इकाई 1,2,3,4,5,6,7,8,9,10,11,12,13,14,15)

सम्पादक

प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय — प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परिमापक

प्रोफेसर नागेन्द्र कुमार — आचार्य, शिक्षा संकाय, बी0एच0यू0 वाराणसी

समन्वयक

डॉ० दिनेश सिंह — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ० सुरेन्द्र कुमार — सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक

कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

ISBN: 978-81-963573-2-0

Registrar, U. P. Rajarshi Tandon Open University, Prayagraj

©UPRTOU, 2023. Pedagogy of Biological Science is made available under a Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0

http://creativecommons.org/licences/by-sa/4.0

खण्ड परिचय

भौतिकीय विज्ञान में अधिगम संसाधन

प्रस्तुत खण्ड में भौतिकीय विज्ञान में अधिगम सामग्री की चर्चा करेगें। प्रस्तुत खण्ड में अधिगम सामग्री : आवश्यकता, कार्य एवं प्रकार, पाठ्य–पुस्तक, जर्नल, हस्तपुस्तिका एवं छात्र संदर्शिका, भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला, कक्षा में और कक्षा के बाहर भौतिकीय विज्ञान अधिगम का विवेचन करेगें। भौतिकीय विज्ञान में अधिगम सामग्री की चर्चा तीन इकाईयों में विभाजित कर करेगे, जिनका विवरण इस प्रकार है–

इकाई–13 : प्रस्तुत इकाई में अधिगम सामग्री : आवश्यकता, कार्य एवं प्रकार के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में अधिगम सामग्री, अधिगम सामग्री की आवश्यकता, अधिगम सामग्री के कार्य, अधिगम सामग्री के प्रकार, श्याम पट्ट, श्यामपट्ट के प्रकार, कागज, चार्ट, रबड़, पैंसिल, फ्लैनल बोर्ड, फ्लैनल बोर्ड का महत्व, बुलेटिन बोर्ड, बुलेटिन बोर्ड के लाभ, चित्र, अच्छे चित्रों के लाभ, चार्ट, चार्टों के प्रकार, पोस्टर, मॉडल, मॉडल का शैक्षिक महत्व, स्लाईड, स्लाईड का शैक्षिक महत्व, आडियो तथा वीडियो टेप, एक्वेरियम, कम्प्यूटर, रेडियो, काम्पेक्ट डिस्क, इन्टरनेट और भौतिकीय विज्ञान किट के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई–14 : प्रस्तुत इकाई में पाठ्य–पुस्तक, जर्नल, हस्तपुस्तिका एवं छात्र संदर्शिका के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में पाठ्य–पुस्तक का अर्थ एवं परिभाषा, पाठ्य–पुस्तकों की उपयोगिता, पाठ्य–पुस्तकों के प्रकार, पाठ्य–पुस्तकों की विशेषताएँ, पाठ्य–पुस्तकों के चयन के आधार, पाठ्य–पुस्तक के लेखन के अधिनियम, पाठ्य–पुस्तक के दोष, जर्नल एवं पीरियोडिकल्स, हस्तपुस्तिका, छात्र संदर्शिका या कार्य पुस्तिकाएं, छात्र संदर्शिका या कार्य पुस्तिका का निर्माण और भौतिकीय विज्ञान के छात्र तथा छात्र संदर्शिका या कार्य पुस्तिका के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई–15 : प्रस्तुत इकाई में भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला, कक्षा में और कक्षा के बाहर भौतिकीय विज्ञान अधिगम के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई में भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला, भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला की डिजाइन, भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला का ले–आउट, भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला में सुरक्षा उपाय, भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला में दुर्घटना और उनका उपचार, प्रभावी शिक्षण में भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला का उपयोग, भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला का महत्त्व, कक्षा में भौतिकीय विज्ञान अधिगम, कक्षा में

स्वतंत्रता, कक्षा में तथ्य एवं तकनीकों को सीखना, भौतिकीय विज्ञान शिक्षा के विविध पहलू, भौतिकीय विज्ञान कक्षा में शिक्षक की भूमिका, कक्षा का वातावरण, कक्षा में अधिगम सामग्री, कक्षा के बाहर भौतिकीय विज्ञान अधिगम, महासागर, तालाब, वन, संसाधन का महत्व और नदियों के बारे में विस्तार पूर्वक बताया गया है।

इकाई—13 अधिगम संसाधनः अर्थ, प्रकार, निर्माण और संसाधनों का उपयोग

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 अधिगम सामग्री

13.4 अधिगम सामग्री की आवश्यकता

13.5 अधिगम सामग्री के कार्य

13.6 अधिगम सामग्री के प्रकार

13.7 श्याम पट्ट

13.7.1 श्यामपट्ट के प्रकार

13.8 कागज

13.9 रबड़

13.10 पैंसिल

13.11 फ्लैनल बोर्ड

13.11.1फ्लैनल बोर्ड का महत्व

13.12 बुलेटिन बोर्ड

13.13 चित्र

13.13.1अच्छे चित्रों के लाभ

13.14 चार्ट द्वितीय

13.14.1चार्टों के प्रकार

13.15 पोस्टर

13.16 मॉडल

13.16.1मॉडल का शैक्षिक महत्व

13.17 स्लाईड

13.17.1स्लाईड का शैक्षिक महत्व

13.18 आडियो तथा वीडियो टेप

13.19 एक्वेरियम

13.20 कम्प्यूटर

13.21 रेडियो

13.22 काम्पेक्ट डिस्क

13.23 इन्टरनेट

13.24 भौतिकीय विज्ञान किट

13.25 सारांश

13.26 अभ्यास प्रश्न

13.27 चर्चा के बिन्दु

13.1 प्रस्तावना

अध्यापन के दौरान पाठ्य सामग्री को समझाते समय शिक्षक जिन–जिन सामग्रियों का प्रयोग करता है वह सहायक सामग्री कहलाती है। किन्तु आधुनिक शिक्षा प्रणाली में सहायक सामग्री के संबंध में कई नवाचार हुए है जिनकी सहायता से अध्ययन को रोचक व प्रभावपूर्ण बनाया जा सकता है। इन सामग्रियों द्वारा सीखा ज्ञान न केवल छात्रों में उत्साह जागृत करता है वरन् सीखे हुए ज्ञान को लंबे समय तक अपने स्मृति पटल में संजोए रख सकता है। दूसरी ओर शिक्षक भी अपने अध्यापन के प्रति उत्साहित रहता है। परिणाम स्वरूप कक्षा का वातावरण हमेशा सकारात्मक बना रहता है।

प्रस्तुत इकाई में हम अधिगम सामग्री, अधिगम सामग्री की आवश्यकता, अधिगम सामग्री के कार्य, अधिगम सामग्री के प्रकार, श्याम पट्ट, श्यामपट्ट के प्रकार, कागज, रबड़, पैंसिल, फ्लैनल बोर्ड, फ्लैनल बोर्ड का महत्व, बुलेटिन बोर्ड, बुलेटिन बोर्ड के लाभ, चित्र, अच्छे चित्रों के लाभ, चार्ट, चार्टों के प्रकार, पोस्टर, मॉडल, मॉडल का शैक्षिक महत्व, स्लाईड, स्लाईड का शैक्षिक महत्व, आडियो तथा विडियो टेप, एक्वेरियम, कम्प्यूटर, रेडियो, काम्पेक्ट डिस्क, इन्टरनेट और भौतिकीय विज्ञान किट के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको अधिगम सामग्री : आवश्यकता, कार्य एवं प्रकार को समझने में सुविधा होगी।

13.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

- अधिगम सामग्री का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
- अधिगम सामग्री को परिभाषित कर सकेंगे।
- अधिगम सामग्री की आवश्यकता को बता सकेंगे।
- अधिगम सामग्री के कार्यों का वर्णन कर सकेंगे।
- अधिगम सामग्री के विभिन्न प्रकारों का वर्गीकरण कर सकेंगे।
- अधिगम सामग्री के विभिन्न प्रकारों का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।

13.3 अधिगम सामग्री

अध्यापन के दौरान पाठ्य सामग्री को समझाते समय शिक्षक जिन–जिन सामग्रियों का प्रयोग करता है वह सहायक सामग्री कहलाती है। किन्तु आधुनिक शिक्षा प्रणाली में सहायक सामग्री के संबंध में कई नवाचार हुए है जिनकी सहायता से अध्ययन को रोचक व प्रभावपूर्ण बनाया जा सकता है। इन सामग्रियों द्वारा सीखा ज्ञान न केवल छात्रों में उत्साह जागृत करता है वरन् सीखे हुए ज्ञान को लंबे समय तक अपने स्मृति पटल में संजोए रख सकता है। दूसरी और शिक्षक भी अपने अध्यापन के प्रति उत्साहित रहता है। परिणाम स्वरूप कक्षा का वातावरण हमेशा सकारात्मक बना रहता है।

आज वही शिक्षक छात्रों के लिए आदर्श होता है, और उसी शिक्षक का शिक्षण आदर्श शिक्षण कहलाता है जो अपनी पाठ्य सामग्री को इन रोचक सहायक सामग्री के माध्यम से प्रस्तुत करता है। क्योंकि ये न केवल छात्रों का ध्यान केन्द्रित करती है बल्कि उन्हें उचित प्रेरणा भी देती है चाहे वह वास्तविक वस्तु हो, चित्र, चार्ट या कोई तकनीकी उपकरण सभी से छात्रों के मस्तिष्क में एक बिंब का निर्माण होता है। हम कह सकते है कि वर्तमान शिक्षण के अन्तर्गत अध्यापन में नवीनता लाने के लिए सहायक सामग्री का प्रयोग शिक्षक के लिए वांछनीय ही नहीं अनिवार्य है।

डेण्ड के अनुसार सहायक सामग्री वह सामग्री है जो कक्षा में या अन्य शिक्षण परिस्थितियों में लिखित या बोली गई पाठ्यसामग्री को समझने में सहायता प्रदान करती है।

कार्टर ए. गुड के अनुसार कोई भी ऐसी सामग्री जिसके माध्यम से शिक्षण प्रक्रिया को उद्दीप्त किया जा सके, अथवा इन्द्रिय संवेदनाओं के द्वारा आगे बढ़ाया जा सके वह सहायक सामग्री कहलाती है।

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि सहायक सामग्री वह सामग्री, उपकरण तथा युक्तियाँ हैं जिनके प्रयोग करने से विभिन्न शिक्षण परिस्थितियों में छात्रों और समूहों के मध्य प्रभावशाली ढंग से ज्ञान का संचार होता है।

13.4 अधिगम सामग्री की आवश्यकता

अधिगम सामग्री की शिक्षण अधिगम में आवश्यकता को निम्नलिखित रूप से स्पष्ट किया जा सकता है–

1. इसका प्रयोग करने से विद्यार्थियों में पाठ्यवस्तु के प्रति रूचि पैदा हो जाती है।
2. विद्यार्थियों का ध्यान पाठ्यवस्तु की तरफ केन्द्रित हो जाता है व एक आकर्षण सा बना रहता है।
3. इसके प्रयोग से नए ज्ञान को प्राप्त करने में सहायता मिलती है। इसका प्रयोग करने से विद्यार्थियों में जिज्ञासा बढ़ जाती है।
4. ऐतिहासिक घटनाओं को मॉडल, चित्र आदि के माध्यम से बालक को प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान किए जाते हैं जिनका उन पर स्पष्ट प्रभाव दिखाई पड़ता है।
5. विद्यार्थी किसी वस्तु को छूकर, देखकर, उसका प्रभाव स्वयं जानकर अधिक प्रभावित होते हैं। अतः शिक्षण सामग्री का प्रयोग करके विद्यार्थी अधिक रूचि से पाठ्यवस्तु को ग्रहण करते हैं।

6. यह मंदबुद्धि तथा पिछड़े बालकों के लिए अति उत्तम साधन है। इसका प्रयोग करने से ऐसे विद्यार्थियों की शिक्षण–अधिगम में रूचि पैदा होती है।

7. इससे शिक्षण प्रक्रिया को स्पष्ट रूप से व्यक्त किया जा सकता है। विद्यार्थियों को रटने से छुटकारा मिल जाता है।

8. रेखाचित्र की सहायता से विद्यार्थी शीघ्र सीख लेते हैं।

9. इसके द्वारा विभिन्न इन्द्रियों को सक्रिय किया जा सकता है जिससे विद्यार्थियों का ध्यान पाठ्यवस्तु की तरफ शीघ्र आकर्षित हो जाता है।

13.5 अधिगम सामग्री के कार्य

1. **ध्यान केन्द्रित करना**– अधिगम सामग्री के प्रयोग से विद्यार्थियों का मन कक्षा में लगाया जा सकता है। अतएव शिक्षण सामग्री छात्रों के मन और ध्यान को केन्द्रित करती है।

2. **प्रेरणा प्रदान करना**– कक्षा में विद्यार्थियों को पढ़ाने से पहले पढ़ने के लिए प्रेरित करना आवश्यक होता है। दृश्य–श्रव्य सामग्री विद्यार्थियों को अभिप्रेरणा प्रदान करती है।

3. **क्रिया का अवसर प्रदान करना**– सहायक सामग्री के प्रयोग से विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार की क्रियाएँ करने का अवसर प्राप्त होता है। टी.वी. तथा वीडियो टेप दिखाकर उस पर वाद–विवाद करवाया जा सकता है।

4. **स्पष्टता**– कभी–कभी कोई पाठ समझाने में कठिन होता है क्योंकि भाषण से उस सिद्धान्त या प्रत्यय को स्पष्ट करना कठिन होता है। इस कार्य में मॉडल, चित्र, चार्ट बहुत योगदान देते हैं।

5. **समय तथा शक्ति की बचत**– सहायक सामग्री, विद्यार्थी तथा अध्यापक के समय एवं शक्ति की बचत करती है।

6. **अनुशासन में सहायक**– सहायक सामग्री के प्रयोग द्वारा विद्यार्थियों की ऊर्जा को सकारात्मक कार्यों में लगाया जा सकता है। इससे कक्षा में अनुशासन बनाए रखने में सहायता मिलती है।

7. **वैज्ञानिक मनोवृत्ति का विकास**– कक्षा में हार्डवेयर के प्रयोग से तथा तकनीकी उपकरणों का प्रयोग करके विद्यार्थियों में वैज्ञानिक मनोवृत्ति का विकास होता है।

8. **शब्दावली में वृद्धि** – रेडियो, टेलीविजन तथा समाचार–पत्र विद्यार्थियों को शब्दावली विकसित करने में मदद करती है। टेलिविजन तथा रेडियों पर पाठों का प्रसारण नई–नई शब्दावली की जानकारी देता है।

9. **अधिगम के स्थानान्तरण में सहायक**– अर्जित किया गया ज्ञान अन्य परिस्थितियों में प्रयोग करने से ज्ञान स्थायी होता है। इससे अधिगम का स्थानान्तरण अधिक होता है।

10. **कक्षा अन्तःक्रिया को बढ़ावा**– सहायक सामग्री का प्रयोग शिक्षक छात्रों की कक्षा में अन्तक्रिया को अधिक प्रोत्साहित कर सकता है जैसे किसी मानचित्र को पूरा करना है तो सभी छात्र इसमें भाग ले सकते हैं।

13.6 अधिगम सामग्री के प्रकार

1. **श्रव्य साधन (Audio Aids)** – इसके अंतर्गत आने वाले साधन हमारी कानों को प्रभावित करते हैं। इसमें आकाशवाणी प्रसारण, टेपरिकार्डिंग, ग्रामोफोन, लिखाफोन और रिकार्डप्लेयर आदि श्रव्य साधन उल्लेखनीय हैं।

2. **दृश्य साधन (Visual Aids)** – इसके अंतर्गत आने वाले साधन हमारी आंखों को प्रभावित करते हैं। इन्हें देखकर विद्यार्थी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इसमे मॉडल, चार्ट, मानचित्र, चित्र, फिल्म–पट्टियाँ, चित्रदर्शक, मूक–चित्र, वास्तविक चित्र, श्यामपट्ट, ग्राफ बुलेटिन बोर्ड, फ्लेनल बोर्ड आदि यन्त्र आते हैं।

3. **दृश्य श्रव्य साधन (Audio-Visual Aids)** – इसके अंतर्गत आने वाले साधन हमारी चक्षु तथा श्रवण इन्द्रियों को प्रभावित करते हैं। इनके माध्यम से सुनकर व देखकर नई–नई चीजें अधिगम प्रदान करने में मदद करती हैं। इसमें दूरदर्शन, वी. सी.आर, ध्वनि वाले चलचित्र, कम्प्यूटर, एकांकी, ड्रामें व डॉक्यूमेंटरी फिल्में आदि उल्लेखनीय हैं।

4. **क्रियात्मक साधन (Activity Aids)** – इसके अंतर्गत आने वाले क्रियात्मक साधन हमें कुछ करके अधिगम करने में सहायता प्रदान करते हैं। इसमें अभिनय करना, प्रयोगशाला, नाट्यशाला में कार्य करना, मेलों और प्रदर्शनियों का आयोजन करना तथा भूमिका निभाना आदि उल्लेखनीय है।

13.7 श्याम पट्ट

श्यामपट्ट जैसा कि नाम से स्पष्ट है, एक ऐसी श्याम (काली) आयताकार आकृति जो लकड़ी, प्लाईवुड, गत्ते, सीमेन्ट अथवा धातु का टुकड़ा होता है जिस पर आवश्यकतानुसार लिखा व मिटाया जा सकता है। अध्यापक के लिए यह एक महत्वपूर्ण सामग्री है जिसकी सहायता से वह मौखिक वर्णन के साथ–साथ विषय–वस्तु से संबंधित लिखता या चित्र भी बनाता रहता है। श्यामपट्ट का उपयोग सभी विषयों, जैसे–गणित, भौतिकीय विज्ञान, सामाजिक अध्ययन, कला, वाणिज्य इत्यादि में पूरी तरह किया जाता है। भाषा शिक्षण में तो उचित पठन–पाठन एवं लेखन की शिक्षा देने में श्याम पट्ट पर किया गया कार्य विद्यार्थियों को प्रेरणा व भाषा का आदर्श प्रस्तुत करता है।

13.7.1 श्यामपट्ट के प्रकार

श्यामपट्ट निम्न प्रकार के होते हैं–

1. **दीवारी श्यामपट्ट (Wall Black-Board)–** यह श्यामपट्ट कक्षा–कक्ष की दीवार पर बना होता है। इसके निर्माण में प्रायः स्लेटी पत्थर एवं मसाले का प्रयोग किया जाता है और तैयार बोर्ड पर काला पेंट कर दिया जाता है। आमतौर पर इसका आकार 72' x 48' होता है।

2. **लकड़ी का श्यामपट्ट (Wooden Black-Board)–** यह एक लकड़ी का पट्टा होता है जिस पर काला रंग करके स्टैण्ड पर टांग दिया जाता है। इस स्टैण्ड को आवश्यकतानुसार ऊंचा–नीचा भी किया जा सकता है। इस प्रकार के बोर्डों का आकार छोटा होने के कारण गणित एवं भौतिकीय विज्ञान के विषयों के लिए ये उपयुक्त नहीं है।

3. **श्याम पट्टिकाएं (Roll Up Boards)–** श्यामपट्टिकाएं कपड़े के वे बोर्ड होते हैं जिन्हें लपेटा जा सकता है व दीवार पर टांगा जा सकता है। प्रशिक्षण महाविद्यालयों में बी. एड. के विद्यार्थियों की अधिक संख्या के कारण अध्यापन अभ्यास के लिए दीवार पर श्याम–पट्टिकाओं को लटका कर काम चलाया जाता है। इनको बाहर ले जाने में सुगमता रहती है।

4. **चुम्बकीय बोर्ड (Magnetic Board)–** यह श्यामपट्ट इस्पात का बना होता है जिसमें चॉक के स्थान पर चुम्बक लगाए जाते हैं। प्राथमिक कक्षाओं में रोचकता बनाये रखने के लिए ये बहुत उपयोगी हैं। पाठ को दोहराते समय विद्यार्थी अभ्यास के लिए चुम्बकीय श्यामपट्ट पर चीजों को चिपका देते हैं। यह बोर्ड अध्यापकों के लिए उपयोगी है, क्योंकि वे चुम्बकों की सहायता से इन पर चित्र, रेखाचित्र एवं चार्ट आदि अच्छे ढंग से लगा सकते हैं।

13.8 कागज

कागज कई प्रकार का होता है जैसे – सादा कागज, चार्ट कागज, हैंडमेड शीट, तैलीय पेपर, स्कालर पेपर आदि। दृश्य सामग्री बनाने के लिए इनमें से किसी भी माध्यम का प्रयोग किया जा सकता है। सादे कागज पर पैंसिल या स्केच पैन की मदद से चित्र बनाये जा सकते हैं। चार्ट पेपर सादे कागज से थोड़ा मोटा होता है। यह एक तरफ से चिकना तथा दूसरी तरफ से खुरदुरा होता है। इस पर रंगों तथा स्कैच पैन से चित्र बनाए जा सकते हैं। Hand made **s**heet मंहगा कागज है लेकिन पानी के रंगों का प्राकृतिक चित्र बनाने में प्रयोग करने के लिए अच्छा माध्यम है। तेलीय पेपर पर तैलीय रंगों का प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा काली शीट या चार्ट है जिन पर कुछ अन्य सामग्री लगाकर भी चित्र दिखाए जा सकते हैं।

बोध प्रश्न

प्रश्न 1: सहायक सामग्री किसे कहते है?

....

....

प्रश्न 2: सहायक सामग्री के सन्दर्भ में आदर्श शिक्षक कौन है?

....

....

प्रश्न 3: श्यामपट्ट किसे कहते है?

....

....

13.9 रबड़

रबड़ का शिक्षण–सामग्री में महत्वपूर्ण उपयोग है। चार्ट इत्यादि बनाने में इसका प्रयोग किया जाता है। यह कुछ भी गलत निशान या लिखे हुए को मिटाती है। रबड़ कई प्रकार की होती है। Dusted और Non-Dusted रबड़। रबड़ हमेशा Non-dust की होनी चाहिए। यह मेज या कागज को काला न करे। कोई भी निशान न छोड़े। रबड़ को कागज पर ज्यादा जोर से नहीं रगड़ना चाहिए क्योंकि इससे कागज फट सकता है।

13.10 पेंसिल

पेंसिल का उपयोग चार्ट, मॉडल में रेखाचित्र बनाने में किया जाता है। रेखाओं को बनाने के लिए पेंसिल का प्रयोग होता है। पैंसिल कई प्रकार की होती है। HB, 2B, 4B ये गहरी, कम गहरी, अधिक गहरी होती हैं। चार्ट बनाने के लिए किसी भी पैंसिल का प्रयोग कर सकते हैं। पैंसिल अच्छी क्वालिटी की होनी चाहिए। इसकी नोक जल्दी नहीं टूटना चाहिए। रंगीन पेंसिलों का भी यथासंभव उपयोग करना चाहिए।

13.11 फ्लैनल बोर्ड

फ्लैनल बोर्ड कक्षा शिक्षण में प्रयुक्त, लिखी हुई या चित्रात्मक सामग्री के तत्काल प्रदर्शन हेतु काम में लाये जाने वाला सबसे अच्छा साधन है। फ्लैनल बोर्ड का प्रदर्शन उन कार्यों में बहुत उपयोगी सिद्ध होता है जिनमें विद्यार्थियों से पहचान का कार्य करवाना हो। इस प्रकार के बोर्ड की विशेषता यह है कि इस पर किन्हीं शब्दों अथवा चित्रों को खींचने की आवश्यकता नहीं। पुनर्निमित सामग्री को इसके ऊपर टिकाया जा सकता है। जब कार्य समाप्त हो जाता है तो उसे वहां से हटाया जा सकता है। प्राथमिक कक्षा में विद्यार्थियों को विषय सामग्री सम्बन्धी वस्तुएं फ्लैनल बोर्ड पर जमाने के लिए दी जाती हैं ताकि उनकी रचनात्मक रूचि जागृत हो सके।

13.11.1 फ्लैनल बोर्ड का महत्व

फ्लैनल बोर्ड के महत्व निम्नलिखित हैं–

1. प्राथमिक कक्षाओं के बच्चे फ्लैनल बोर्ड की सहायता से मनोरंजक कहानियां अच्छे ढंग से समझ सकते हैं।
2. फ्लैनल बोर्ड कक्षा–कक्ष में विविधता लाता है।
3. इस सहायक सामग्री का प्रयोग छोटी कक्षाओं में भाषा, गणित, भौतिकीय विज्ञान, इतिहास, भूगोल इत्यादि के शिक्षण के लिए सुगमता से किया जा सकता है।
4. प्रदर्शित किए जाने वाले चित्र बढ़िया और बड़े आकार के होने चाहिए।
5. फ्लैनल का रंग गाढ़ा (Dark) होना चाहिए क्योंकि हल्के रंग जल्दी गन्दे हो जाते हैं।
6. कटिंग व चित्र पाठ्य–वस्तु से संबंधित होने चाहिए।
7. ऐसे रंगों को प्रयोग में लाना चाहिए जो वैष्मय (Contrast) उत्पन्न कर सकें।
8. फ्लैनल बोर्ड पर प्रदर्शित सामग्री को पुनः प्रयोग में लाते रहने की दृष्टि से उचित देखभाल एवं सुरक्षा भी आवश्यक है।

13.12 बुलेटिन बोर्ड

विद्यालयों में लेखन और चित्रात्मक दृश्य सामग्री का प्रदर्शन करने के लिए काम में लाया जाने वाला एक सुलभ साधन बुलेटिन बोर्ड है। यह एक प्रदर्शन पट्ट (Display Board) होता है जो मुख्यतयाः बुलेटिन, विज्ञप्तियों, समाचारों, विद्यालय की कक्षा शिक्षण तथा अन्य गतिविधियों की सूचना देने के लिए काम में लाया जाता है। अर्थाभाव के कारण भारत में अनेक विद्यालयों में बुलेटिन बोर्ड की सुविधा उपलब्ध नहीं है। बुलेटिन बोर्डों पर शिक्षक समाचार पत्र और पत्रिकाओं की कटिंग, मानचित्र, नवीन प्रकाशित पुस्तक का शीर्षक, पेज, पोस्टर इत्यादि को विद्यार्थियों के ज्ञान में वृद्धि करने के लिए टांग सकते हैं। सूचना पट्ट पर सामग्री का प्रदर्शन ड्राईंग पिनों से टांग कर किया जा सकता है। बुलेटिन बोर्ड को विद्यालय की निरंतर पत्रिका भी माना जा सकता है। यह पूर्ण रूप से विद्यार्थियों के रचनात्मक प्रयत्नों का परिणाम होता है।

13.12.1 बुलेटिन बोर्ड के लाभ

बुलेटिन बोर्ड के विद्यालय में निम्नलिखित लाभ हैं:

1. बुलेटिन बोर्ड पर लगे चित्रों को देखकर विद्यार्थियों में जिज्ञासा उत्पन्न होती है। जिससे उनमें स्वयं कुछ करने की इच्छा पैदा होती है।
2. यह विद्यार्थियों की प्रतिभा का विकास करने में सहायक है।
3. यह विद्यार्थियों के ज्ञान एवं बोध स्तर को ऊंचा उठाने में सहायक है।
4. बुलेटिन बोर्ड कक्षा–कक्ष व विद्यालय में उपयुक्त वातावरण पैदा करता है।
5. विद्यार्थियों के प्रोत्साहन के लिए पुरस्कृत विद्यार्थियों के फोटो लगाकर व सुन्दर प्रदर्शित सामग्री द्वारा इसे आकर्षक बनाया जा सकता है।
6. बुलेटिन बोर्ड के लिए विद्यार्थियों द्वारा बनाये गए चित्र अथवा लिखी गई कविता या लेख मौलिकता को मूर्त रूप प्रदान करते हैं।
7. कुछ विषय ऐसे होते हैं जिन्हें आसानी से कक्षा में नहीं लाया जा सकता, जैसे जनसंख्या वृद्धि इत्यादि। बुलेटिन बोर्ड के द्वारा अध्यापक इन विषयों को विद्यार्थियों को सरलता से समझा सकता है।
8. बुलेटिन बोर्ड पर ऐसे विचार जिनमें क्रम का महत्व हो, स्वाभाविकता से प्रदर्शित किये जा सकते हैं।
9. बुलेटिन बोर्ड की सामग्री को विद्यार्थी सामूहिक रूप से तैयार करते हैं जिससे सहयोग की भावना का विकास होता है।
10. बुलेटिन बोर्ड के माध्यम से विषय–वस्तु को शीघ्र समझाया जा सकता है जिससे समय की बचत होती है।
11. इससे विद्यार्थियों में रचनात्मक कार्य करने की प्रेरणा मिलती है।
12. बुलेटिन बोर्ड सूचनाएं, दत्तकार्य आदि को प्रदर्शित करने के उपयुक्त स्थान के रूप में कार्य करता है।
13. बुलेटिन बोर्ड द्वारा प्रदान किया गया ज्ञान भली प्रकार से समझ में आने वाला होता है।

13.13 चित्र

चित्रात्मक साधनों में सबसे सुलभ और बहुप्रचलित साधन चित्रों का प्रयोग है। इन्हें सभी प्रकार के विषय और विषय–वस्तुओं की शिक्षा के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। जिन चीजों को विद्यार्थी प्रत्यक्ष रूप से अनुभव नहीं कर सकते, चित्रों द्वारा उसे आसानी से समझा जा सकता है। एक बार देखना सौ बार सुनने से अधिक लाभदायक होता है। अध्यापक किसी क्षेत्र के बारे में कितना भी मौखिक वर्णन करता रहे पर बात नहीं बनती। यदि उस क्षेत्र से संबंधित चित्र दिखाया जाए तो विद्यार्थी अच्छे ढंग से सीख लेते हैं। इतिहास पढ़ाने में ऐतिहासिक हस्तियों जैसे अकबर, शिवाजी आदि को दिखाकर, उनकी वेषभूषा, व्यक्तित्व और कार्यों का चित्रण कर इतिहास का शिक्षण करने में बहुत सहायता मिल सकती है। ऐतिहासिक स्थलों व भवनों के चित्र दिखाकर उनसे संबंधित तथ्यों को अच्छी तरह से समझाया जा सकता है। भौतिकीय विज्ञान में विभिन्न पेड़–पौधे, पशु–पक्षी, कीड़े–मकोड़ों का ज्ञान, मानव शरीर की रचना एवं कार्य प्रणाली तथा ऐसी ही अनेक प्रकार की वैज्ञानिक जानकारी को ग्रहण करने में चित्रों से पूरा–पूरा लाभ उठाया जा सकता है।

13.13.1 अच्छे चित्रों के लाभ

1. चित्र प्रायः पदार्थों व नमूनों से सस्ते होते हैं तथा बाजार में आसानी से मिल सकते हैं इसलिए इनका उपयोग कक्षा में प्रभावशाली ढंग से किया जा सकता है।
2. स्थिर चित्रों से विद्यार्थी अच्छे ढंग से विवरण प्राप्त कर सकते हैं।
3. बच्चों को स्पष्ट व रोचक ज्ञान देने में चित्रों का विशेष महत्व है।
4. चित्रों का प्रयोग बालकों को वास्तविकता का ज्ञान देने व कल्पना शक्ति को बढ़ाने में सहायता करता है।
5. चित्रों द्वारा विद्यार्थियों के विचारों में शुद्धता, स्पष्टता और संगठन करने की शक्ति उत्पन्न की जा सकती है।

13.14 चार्ट

चार्ट तैयार करने के लिए कागज में साधारण चार्ट पेपर, कैन्ट शीट या Handmade चार्ट का प्रयोग किया जाता है। इसके बारे में निम्नलिखित बातें ध्यान रखनी चाहिए :

1. यदि तैयार चार्ट अगर उपलब्ध हो तो वह स्पष्ट होना चाहिए।
2. अधिक खर्चीला नहीं होना चाहिए।
3. इस पर लिखे शब्दों की मोटाई इतनी होनी चाहिए कि वह स्पष्ट नजर आए।
4. चार्ट की व्याख्या स्पष्ट होनी चाहिए।
5. चार्ट की मोटाई ज्यादा नहीं होनी चाहिए।
6. चार्ट पर रंगों का प्रयोग आवश्यकतानुसार हो।
7. चार्ट कई प्रकार के होते हैं जैसे चित्र सम्बन्धी चार्ट, धारा चार्ट, तालिका चार्ट, ग्राफिक चार्ट, चित्र–युक्त चार्ट आदि।

चित्रों या ग्राफों के रूप में जो कुछ अलग–अलग प्रदर्शित किया जा सकता है उस सभी को सुविधापूर्वक अलग–अलग या इकट्ठे रूप में प्रदर्शित करने का कार्य चार्टों द्वारा अच्छी तरह किया जा सकता है। डॉ. डेल के अनुसार "चार्ट एक दृश्य सामग्री चिन्ह है जो विषय–वस्तु के सार, तुलना या किसी दूसरी क्रिया की व्याख्या करने में सहायता देता है।"

कक्षा शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर चाहे वह पूर्व ज्ञान परीक्षा या प्रस्तावना से संबंधित हो या विषय–वस्तु के क्रमबद्ध प्रस्तुतीकरण, पुनरावृत्ति, अभ्यास अथवा गृहकार्य प्रदान करने से, चार्ट सभी स्तर पर एक अध्यापक को उसके कार्य में यथेष्ट सहायता प्रदान करते हैं। यही कारण है कि सभी विषयों से सम्बन्धित पाठ्य सामग्री के शिक्षण–अधिगम कार्यों में चार्टों से पूरी सहायता लेने का प्रयास किया जाता है। तथ्यों या विचारों को एक क्रमबद्ध लड़ी में प्रस्तुत करने के कार्य में चार्ट, फोटोग्राफ और आलेख से भी अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध होते हैं।

13.14.1 चार्टों के प्रकार

शैक्षिक कार्यों में बहुधा निम्न प्रकार के चार्टों का प्रयोग किया जाता है–

1. **वृक्ष की आकृति वाले चार्ट (Tree Chart)** – इन चार्टों में बनी आकृति वृक्ष जैसी होती है। वृक्ष का मूल या मुख्य तना जहां किसी संगठन या विकास के उद्भव को प्रकट करता है वहीं शाखायें, तने या पत्तियों द्वारा उनके बहुआयामी विकास को प्रदर्शित किया जाता है।

2. **तालिका चार्ट (Table Chart)–** इन चार्टों में तथ्य एवं सूचनाओं को तालिका के रूप में प्रदर्शित किया जाता है। तालिका चार्ट में कई प्रकार के विभाग बना कर विचारों, घटनाओं तथा विवरणों को क्रमानुसार व्यवस्थित किया जाता है। विद्यालय समय सारणी इसका सबसे अच्छा उदाहरण है।

3. **समय चार्ट (Time Chart)–** घटनाओं के कालक्रम को बताने के लिए इन चार्टों को काम में लाया जाता है। किसी भी राष्ट्र अथवा प्रक्रिया के विकास से सम्बन्धित महत्वपूर्ण घटनाओं को इनमें कालक्रम के आधार पर व्यवस्थित कर दिया जाता है। घटना चक्र या विकास क्रम का कौन सा दौर गुजरा, इसकी जानकारी सुगमता से इन चार्टों द्वारा प्राप्त होती है।

4. **प्रवाह चार्ट (Flow Chart)–** इन चार्टों द्वारा किसी भी आन्दोलन प्रक्रिया, विचारधारा संगठन आदि के क्रमिक विकास और प्रबन्ध को भली– भाँति दिखाया जा सकता है। इसे दिखाने के लिए प्रायः इनमें रेखाओं, तीरों, आयतों आदि का प्रयोग किया जाता है।

5. **समस्या चार्ट (Issue Charts)–** इन चार्टों का प्रयोग महत्वपूर्ण विषयों अथवा समस्याओं पर व्यक्ति विशेष या संगठनों के विचारों की तुलनात्मक जानकारी प्रदान करने के लिए किया जाता है।

6. **वृत्ताकार चार्ट (Circle Charts)–** इन चार्टों में वृत्त को आवश्यकतानुसार भागों में विभाजित किया जाता है। प्रत्येक वृत्त किसी प्रतिशत को व्यक्त करता है।

7. **चित्रात्मक चार्ट (Pictorial Charts)–** इन चार्टों में पढ़ाई जाने वाली विषय–वस्तु को ग्राफ, रेखाकृत्तियों, शब्दों तथा परम्परागत चित्रों के माध्यम से प्रदर्शित करने का प्रयत्न किया जाता है।

13.15 पोस्टर

पोस्टरों में चित्रात्मक अभिव्यक्ति चित्रों की तरह बिल्कुल स्पष्ट व प्रत्यक्ष ढंग से नहीं होती बल्कि एक खास अंदाज में अप्रत्यक्ष तथा संकेतात्मक रूप में की जाती है। पोस्टर द्वारा किसी एक विचार को ही केन्द्र बिन्दु बनाकर सशक्त संवेगात्मक अपील की जाती है कि जो भी विशेष संदेश या खास बात दर्शकों को प्रेषित करनी होती है, वह उनके दिल और दिमाग पर पूरी तरह छा जाती है। पोस्टर कक्षा शिक्षण में विद्यार्थियों को सीखने की दिशा में अभिप्रेरित करते हैं। किसी भी पाठ को प्रस्तावित करते समय उसके प्रति आकर्षित होकर विद्यार्थियों द्वारा उसे पढ़ने की आवश्यकता पोस्टरों द्वरा अच्छी तरह अनुभव कराई जा सकती है। पाठ्य वस्तु का दूसरे विषयों में समन्वय करने के उद्देश्य से भी अध्यापक पोस्टरों की मदद ले सकता है। पोस्टरों द्वारा विद्यार्थियों की बुरी आदतों को समाप्त कर अच्छी आदतें विकसित करने और अच्छे व्यवहार को प्रोत्साहित करने में भी सहायता ली जा सकती है।

13.16 मॉडल

मॉडल से तात्पर्य किसी वस्तु का ऐसा प्रतिरूप है जिसे देखकर उस वस्तु के बारे में अच्छी तरह जानकारी प्राप्त की जा सके। जब वास्तविक वस्तुएं उपलब्ध कराना कठिन या असम्भव हो (जैसे मानव की आँख की संरचना, ज्वालामुखी इत्यादि), तब उन्हें अप्रत्यक्ष रूप से मॉडल द्वारा प्रभावशाली ढंग से प्रदर्शित किया जा सकता है।

13.16.1 मॉडल का शैक्षिक महत्व

शैक्षिक उपयोगिता की दृष्टि से मॉडल के प्रयोग के निम्नलिखित लाभ हैं–

1. मॉडल विद्यार्थियों की सृजनात्मक शक्ति का विकास करने में सहायक होते हैं। मॉडल को देखकर उनके दिमाग में उस वस्तु की स्पष्ट आकृति बन जाती है।

2. मॉडल अधिगम प्रक्रिया को रोचक तथा सजीव बनाते हैं। फलस्वरूप विद्यार्थियों में पाठ के प्रति रूचि जागृत होती है।

3. विभिन्न विषयों में त्रिआयामी (Three dimensional) पदार्थों के बारे में ज्ञान प्रदान करने के लिए मॉडल का सहारा लेना पड़ता है। जैसे आंख की बनावट व कार्य प्रणाली का अध्ययन करना हो तो उपयुक्त मॉडल की सहायता ली जा सकती है।

4. मॉडल बड़ी वस्तुओं को छोटे रूप में व अत्यधिक छोटी वस्तुओं को बड़े रूप में दर्शाता है, जिससे समझने में आसानी रहती है। जैसे पृथ्वी के लिए छोटा प्रतिरूप ग्लोब का व अमीबा जैसे एक कोशकीय जीव के लिए बड़ा प्रतिरूप, मॉडल के रूप में लाया जाता है।

5. इन मॉडलों से वस्तुओं की प्रक्रियाओं के अध्ययन के लिए हमें बहुत सहायता मिलती है। इन मॉडलों में वस्तुओं के भागों को अलग–अलग खोलकर व जोड़कर दिखाया जा सकता है। भौतिक विज्ञान में परमाणु, नाभिकीय ऊर्जा सयंत्र आदि के कार्यशील भागों की रचना और कार्यप्रणाली को इस प्रकार के मॉडलों की सहायता से अच्छी तरह से समझाया जा सकता है।

13.17 स्लाईड

स्लाइड प्रक्षेपित दृश्य सामग्री के अंतर्गत आती है। इन्हें एपीडायस्कोप, मैजिक लैन्टर्न तथा प्रोजैक्टरों आदि दृश्य उपकरणों की सहायता से पर्दे पर प्रक्षेपित कर कक्षा शिक्षण में प्रयुक्त किया जा सकता है। स्लाईड किसी पारदर्शी तत्व जैसे घिसा हुआ शीशा या प्लास्टिक सेल्यूलोज, ऐसिटेट फिल्म तथा सिल्होइट आदि का ऐसा भाग है जो एक विशिष्ट आकार वाला होता है, जिस पर तस्वीरें या रेखाचित्र होते हैं। इन्हें प्रेषित प्रकाश के माध्यम से अच्छी प्रकार से देखा जा सकता है तथा प्रोजैक्टर आदि प्रक्षेपित उपकरणों द्वारा परदे पर बड़ा करके दिखाया जा सकता है।

13.17.1 स्लाईड का शैक्षिक महत्व

स्लाइड्स अपने में निहित विशेष गुणों के कारण शिक्षण प्रक्रिया में निम्नलिखित रूप से प्रभावशाली सिद्ध हो सकती है–

1. ये पाठ की प्रस्तावना और प्रस्तुतीकरण में सहायक है।
2. ये विद्यार्थियों का ध्यान आकर्षित करने में सहायक है।
3. पढ़ाई गई सामग्री में से विद्यार्थी कितना समझ सके, इसकी जांच में सहायक सिद्ध होती है।
4. ये रूचि उत्पन्न करने में सहायक है
5. ये विषयवस्तु को सरल, आकर्षक व स्पष्ट बनाती है।
6. पढ़ाई गई सामग्री के पुनः प्रस्तुतीकरण व अभ्यास (Revision) में सहायक हैं।
7. कक्षा के वातावरण को सरस, क्रियाशील बनाने में सहयोग देती है।
8. ये नीरसता को दूर करती है व रचनात्मक अनुशासन पैदा होता है।
9. ये एक साथ पूरी कक्षा के विद्यार्थियों के ज्ञानार्जन में सहायक होती है।
10. ये छात्रों को शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में सक्रिय साझीदार बनाने में सहायक होती है।

13.18 आडियो तथा वीडियो टेप

टेप आधुनिक युग की दृश्य–श्रव्य सहायक सामग्री के रूप में उभर कर सामने आई हैं। टेप दो प्रकार की होती हैं–

1. **आडियो टेप (Audio Tape)** पूर्व प्रसारित रेडियो प्रसारण तथा कोई विशेष वार्ता इत्यादि को ज्यों की त्यों ध्वनि उपकरण में भरकर शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में आवश्यकतानुसार प्रयुक्त किया जा सकता है। यह ध्वनि उपकरण आडियो टेप है। आडियो टेप से रिकार्ड की गई ध्वनि को सुनने में टेपरिकार्डर प्रभावपूर्ण सिद्ध होता है।
2. **विडियो टेप (Video Tape)** विडियो टेप के लिए विडियो कैसेट रिकॉर्डर की मदद लेनी पड़ती है। इसमें सभी संकेत चिन्ह जैसे Stop, Forward, Record,

Rewind आदि दिये जाते हैं। इसमें न केवल देखा जा सकता है बल्कि सुना भी जा सकता है। इस प्रकार विडियो टेप हमें दृश्य–श्रव्य फिल्मों को टेलीविजन पर एक साथ देखने व सुनने की सुविधा प्रदान करती है। इससे शिक्षण प्रक्रिया रोचक व प्रभावशाली हो जाती है।

13.19 एक्वेरियम

सामान्यतः एक्वेरियम एक काँच का बॉक्स नुमा जल से भरा पात्र होता है जो जलीय पौधों एवं जन्तुओं को पालने के लिए जलाशय का कार्य करता है। एक्वेरियम में इनके पोषण के लिए सभी व्यवस्था की जाती है। इसमें जलीय पौधे, जैसे हाइड्रिला, शैवाल आदि भी रखना आवश्यक हैं क्योंकि यह जन्तुओं को भी ऑक्सीजन प्रदान करते हैं। एक्वेरियम का रखरखाव करना भी आसान काम नहीं है। कई सावधानियाँ लेनी पड़ती है तथा उसे सही रखने के लिए हमेशा सतर्क रहना पड़ता है। भौतिकीय विज्ञान शिक्षक शिक्षण में इसे संसाधन के रूप में आवश्यकतानुसार उपयोग में ला सकता है। जन्तुओं की सुरक्षा, उनके खान–पान, उनके जीवन चक्र के कार्य आदि विद्यार्थी रूचिपूर्वक देखते हैं। इससे विद्यार्थियों की निरीक्षण शक्ति का विकास होता है, खाली समय का सदुपयोग तथा मनोरंजन होता है।

13.20 कम्प्यूटर

प्रारम्भ में कम्प्यूटर का उपयोग शिक्षा के क्षेत्र में शैक्षिक एवं अनुसंधान प्रयोजनों के लिए ही किया गया था। लेकिन धीरे–धीरे कम्प्यूटर ने शिक्षा की सभी श्रेणी में अपनी उपयोगिता साबित कर दी है। शैक्षिक, प्रशासन, परीक्षा विद्यार्थियों से सम्बन्धित अभिलेख हो, ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं प्रतीत होता जहाँ कम्प्यूटर ने अपना उपयोग न कराया हो।यह एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण शिक्षण तथा अनुदेशन का माध्यम है। भौतिकीय विज्ञान शिक्षक पाठ्य–वस्तु को सरल तथा प्रभावी बनाने में कम्प्यूटर का उपयोग करता है। कम्प्यूटर के तकनीकी विवरण से आप हम वाकिफ है। हम जानते है कि यह एक ऐसा यंत्र है जिसमें तीन भाग होते है – अदा इकाई, प्रदा इकाई ऐव केन्द्रीय प्रक्रिया इकाई होती है, उदाहरण के रूप में की–बोर्ड, माउस या अन्य अदा इकाईयों से कम्प्यूटर को अनुदेशन देने का काम किया जाता है। फिर केन्द्रीय प्रक्रिया जो कि ब्रेन की तरह प्रोसेसिंग कर प्रदा इकाई के माध्यम से हमें परिणाम प्रदर्शित करता है। आज विद्यालयों में कम्प्यूटर लेब होना अनिवार्य है और सरकार भी समय–समय पर शिक्षकां को प्रशिक्षण देने के प्रोग्रामों का आयोजन करती है।समाज के अन्य क्षेत्रों में तो इसका उपयोग रोजमर्रा के यंत्रों की तरह होने लगा है परंतु हमारे देश के ग्रामीण इलाकों के विद्यालयों की कक्षाओं में शिक्षण को प्रभावी बनाने के लिए अभी इसका उपयोग है।

13.21 रेडियो

यह मानव निर्मित संसाधन विकसित सम्प्रेषण तकनीकी का उदाहरण है। टेलीविजन, इन्टनेट के पहले से ही रेडियों ने अपनी उपयोगिता हमारे सामने सिद्ध की है और आज जब 21वीं सदी में इन्टरनेट दुनिया के हर घर और लगभग हर हाथों में पहुँच गया है तब भी इसकी महत्ता न कम हुई है न ही खत्म हुई है बल्कि यह एक सम्प्रेषण तकनीकी के सशक्त माध्यम के रूप में उभर कर आयी है। रेडियों जहाँ इन्टरनेट की पहुँच नहीं है, जहाँ लोगों को इन्टरनेट उपयोग करना नहीं आता, वहाँ रेडियों द्वारा उन्हें कई जानकारियाँ प्राप्त करने में समय नहीं लगता न ही कोई आर्थिक व्यय करना पड़ता है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 4: फ्लैनल बोर्ड का प्रयोग कहाँ उपयोगी होता है?

....

....

प्रश्न 5: चार्ट किसे कहते है?

....

....

प्रश्न 6: माडल से क्या तात्पर्य है?

....

....

भौतिकीय विज्ञान शिक्षकों को भी भौतिकीय विज्ञान के अधिगम में इसे संसाधन के रूप में अत्यधिक उपयोग करना चाहिए। कक्षा में या कक्षा से बाहर, अतिरिक्त समय में शैक्षिक कार्यक्रमों को विद्यार्थियों को सुनाया जा सकता है। शिक्षकों को रेडियों पर प्रसारित होने वाले विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रमों और गतिविधियों के शेड्यूल का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है।

जिस तरह टेलीविजन पर इग्नू और अन्य संस्थाएं शैक्षिक कार्यक्रम प्रसारित करती है, वैसे ही रेडियों पर नए प्रकरणों तथा अन्य शैक्षिक बिन्दुओं पर चर्चाएं होती रहती हैं। उन्हें शिक्षक संसाधन के रूप में उपयोग कर सकता है।

13.22 काम्पेक्ट डिस्क

यह ऐसी वस्तु है जिसमें कई सारी जानकारियों को संग्रहित कर लिया जाता है और फिर आवश्यकतानुसार उसे टेलीविजन, कम्प्यूटर, ओवरहेड प्रोजेक्टर या अन्य माध्यम के द्वारा अधिगमकर्त्ताओं को दिखाया या सुनाया जा सकता है। इसे जरूरत के हिसाब से बार–बार देखा जा सकता है। जटिल पाठ्य–वस्तुओं को सरल तरीके से प्रोग्राम बनाकर सी.डी. में संग्रहित कर सकते हैं। इस तरह विशेषज्ञों को बार–बार आने की आवश्यकता नहीं पड़ती। इसमें समय, धन और स्थान आदि की बचत होती है। अधिगमकर्ता अपनी गति से अधिगम कर सकता है। भौतिकीय विज्ञान शिक्षकों को भौतिकीय विज्ञान पाठ्य–वस्तु का शिक्षण करने हेतु सी.डी. को संसाधन के रूप में उपयोग करना चाहिए इससे शिक्षक को स्वयं अपना कार्य कुशल बनाने में सहायता प्राप्त होती है। आज बाजार में हर प्रकरण के ऊपर सी.डी. मिलती है उसे भलीभाँति मूल्यांकन कर शिक्षक को उपयोग में लेना चाहिए।

13.23 इन्टरनेट

आधुनिक युग में इन्टरनेट के महत्व से कौन परिचित नहीं है। रोज़मर्रा से जुड़ी आवश्यकताएं हो, रेलवे टिकट से सम्बन्धी, शॉपिंग सम्बन्धी, मेडिकल सम्बन्धी, बैंक सम्बन्धी, कृषि सम्बन्धी कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं बचा है जहाँ इन्टरनेट के उपयोग को नकारा जाये तो फिर शिक्षा का क्षेत्र कैसे अछुता रह सकता है। इन्टरनेट विभिन्न तकनीकी के संयुक्त

रूप के कार्य का उदाहरण है। इन्टरनेट का आधार राष्ट्रीय सूचना स्वरूप होता है, जहाँ विभिन्न सम्पर्क लाइनें, कम्प्यूटरों को जोड़ती है, जिन्हें होस्ट कम्प्यूटर कहते है। यह विश्वविद्यालयों तथा अन्य संस्थाओं से भी जुड़े रहते हैं। इन्टरनेट कनेक्शन द्वारा पर्सनल कम्प्यूटर या मोबाईल इन्टरनेट से जुड़ जाता है।

इन्टरनेट एक दुनिया की सम्पूर्ण लाइब्रेरी की तरह होता है, जहाँ एक क्लिक मात्र से हम किसी भी विषय के किसी भी प्रकरण पर सम्पूर्ण जानकारी हासिल कर सकते हैं। यह सैद्धान्तिक तथा प्रायोगिक ज्ञान दोनों के लिए उपयोगी है। बस आवश्यकता इतनी है कि विद्यार्थियों को इन्टरनेट का सद्उपयोग करना आ जाए। किस तरह से अध्ययन सामाग्री को ढूंढा जाए, कैसे सही जानकारी प्राप्त की जाए इत्यादि का शिक्षकों को विद्यार्थियों को प्रशिक्षण देना चाहिए। आज नई–नई शैक्षिक वेबसाइट्स इन्टरनेट पर आती है जिनका हमारे शिक्षकों और विद्यार्थियों को ज्ञान नहीं होता। विद्यार्थी इनका सर्वश्रेष्ठ लाभ अपने अध्ययन में ले सकते हैं, भौतिकीय विज्ञान शिक्षकों को स्वयं भी और उनके विद्यार्थियों को इन्टरनेट फ्रेण्डली करने पर बल देना अत्यन्त जरूरी है। आज हर जानकारी चाहे वह पाठ्य वस्तु की हो, शैक्षिक संस्थानों की हो, नए–नए शोध की हो, सब इन्टरनेट पर मौजूद है।

13.24 भौतिकीय विज्ञान किट

प्रयोगशाला कार्य में अनावश्यक खर्चें एवं उनकी उपलब्धता से बचने के लिए भौतिकीय विज्ञान किट एवं चलती–फिरती प्रयोगशालाओं का सम्प्रत्यय सामने आया। भौतिकीय विज्ञान किट से तात्पर्य उस बक्से या बॉक्स से है जिसमें भौतिकीय विज्ञान विषय के विभिन्न प्रकरणों के अधिगम के लिए आवश्यक उपकरणों, जो बहुत ही साधारण सामग्री से बनते है, रखे होते है।

एन.सी.ई.आर.टी. की केन्द्रीय वैज्ञानिक यन्त्र निर्माणशाला ने विभिन्न कक्षाओं में भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के लिए ऐसे कई किट तैयार किए है तथा उनके प्रयोग के लिए आवश्यक निर्देशन पुस्तिकाएं भी तैयार की है। प्रदर्शन के काम आने वाली किटें ऐसी बनाई गयी है जिनके द्वारा भौतिकीय विज्ञान शिक्षक आसानी से प्रयोग एवं परीक्षणों का प्रदर्शन कर सकता है। भौतिकीय विज्ञान किट का पूर्ण ज्ञान तथा उनको संसाधन के रूप में उपयोग करने की क्षमता शिक्षकों में होना अत्यन्त आवश्यक है। भौतिकीय विज्ञान किट को संसाधन की तरह इस्तेमाल करने के लाभ निम्नलिखित है–

1. प्रयोगशाला में प्रयोग करने के लिए तैयारी की आवश्यकता होती है, इसमें धन, समय, सामग्री, साधन एवं अन्य समस्याएं आती है, जो भौतिकीय विज्ञान किट के उपयोग से कम हो जाती है।
2. प्रायोगिक ज्ञान देने में सक्षम होती है।
3. पाठ्य–वस्तु को कक्षा में पढ़ाते वक्त इनका उपयोग भौतिकीय विज्ञान शिक्षक कर सकते हैं, जिससे अधिगम को सरल एवं प्रभावी बनाया जाता है।
4. भौतिकीय विज्ञान उपकरण किट के प्रयोग से शिक्षक को अन्य सुविधाएं जैसे नल, बिजली, गैस आदि पर निर्भर नहीं होना पढ़ता।
5. विद्यार्थियों को अपनी अन्वेषणात्मक तथा रचनात्मक प्रवृत्तियों को विकसित करने के सुअवसर प्राप्त होते है।
6. विद्यार्थियों में वैज्ञानिक रूचिकर क्रियाओं को करने की प्रवृत्ति जन्म लेती है।

13.25 सारांश

सहायक सामग्री वह सामग्री है जो कक्षा में या अन्य शिक्षण परिस्थितियों में लिखित या बोली गई पाठ्यसामग्री को समझने में सहायता प्रदान करती है। विद्यार्थी किसी वस्तु को छूकर, देखकर, उसका प्रभाव स्वयं जानकर अधिक प्रभावित होते हैं। अतः शिक्षण सामग्री का प्रयोग करके विद्यार्थी अधिक रूचि से पाठ्यवस्तु को ग्रहण करते हैं। कक्षा में विद्यार्थियों को पढ़ाने से पहले पढ़ने के लिए प्रेरित करना आवश्यक होता है। दृश्य–श्रव्य सामग्री विद्यार्थियों को अभिप्रेरणा प्रदान करती है। अधिगम सामग्री कई प्रकार होते है जैसे कागज, चार्ट, रबड़, पैंसिल, फ्लैनल बोर्ड, फ्लैनल बोर्ड का महत्व, बुलेटिन बोर्ड, बुलेटिन बोर्ड के लाभ, चित्र, अच्छे चित्रों के लाभ, चार्ट, चार्टों के प्रकार, पोस्टर, मॉडल, मॉडल का शैक्षिक महत्व, स्लाईड, स्लाईड का शैक्षिक महत्व, आडियो तथा विडियो टेप, एक्वेरियम, कम्प्यूटर, रेडियो, काम्पेक्ट डिस्क, इन्टरनेट और भौतिकीय विज्ञान किट।

13.26 अभ्यास प्रश्न

1. अधिगम सामग्री के अर्थ को स्पष्ट कीजिए?
2. अधिगम सामग्री को परिभाषित कीजिए?
3. अधिगम सामग्री की आवश्यकता के महत्व को निर्धारित कीजिए?
4. अधिगम सामग्री के कार्यों का वर्णन कीजिए?
5. अधिगम सामग्री के विभिन्न प्रकारों का वर्गीकरण कीजिए?
6. अधिगम सामग्री के विभिन्न प्रकारों का विस्तार से वर्णन कीजिए?

13.27 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में अधिगम सामग्री पर चर्चा करेगें।
2. छात्राध्यापक आपस में अधिगम सामग्री के कार्यों पर चर्चा करेंगें।
3. छात्राध्यापक आपस में अधिगम सामग्री के विभिन्न प्रकारों पर चर्चा करेंगें।

इकाई—14 पाठ्य—पुस्तक, जर्नल, हस्तपुस्तिका एवं शिक्षार्थी कार्य पुस्तिका

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 पाठ्य—पुस्तिका का अर्थ एवं परिभाषा

14.3.1 पाठ्य—पुस्तकों की उपयोगिता

14.3.2 पाठ्य—पुस्तकों के प्रकार

14.3.3 पाठ्य—पुस्तकों की विशेषताएँ

14.3.4 पाठ्य—पुस्तकों के चयन के आधार

14.3.5 पाठ्य—पुस्तकों के लेखर के अधिनियम

14.3.6 पाठ्य—पुस्तक के दोष

14.4 जर्नल एवं पीरियोडिकल्स

14.5 हस्तपुस्तिका

14.6 शिक्षार्थी कार्य पुस्तिका या कार्य पुस्तिकाएं

14.6.1 शिक्षार्थी कार्य पुस्तिका, कार्य पुस्तिका का निर्माण

14.6.2 भौतिकीय विज्ञान के छात्र तथा शिक्षार्थी कार्य पुस्तिका या कार्य पुस्तिका

14.7 सारांश

14.8 अभ्यास प्रश्न

14.9 चर्चा के बिन्दु

14.1 प्रस्तावना

पाठ्य—पुस्तक शिक्षण क्रियाओं एवं अभिप्रायों के लिए सुव्यवस्थित चिन्तन एवं ज्ञान का लिखित रूप है। पाठ्य पुस्तकें वे पुस्तकें हैं जो किसी स्तर के बच्चों की पाठ्यचर्यानुसार तैयार की जाती है। इनमें वे तथ्य एवं सूचानाएं संकलित होती हैं, जिनका ज्ञान उस स्तर के बच्चों को देना चाहते हैं। आज की सम्पूर्ण शिक्षा ही पाठय—पुस्तकों पर ही आधारित हैं। आज ये पाठ्यपुस्तकें शिक्षा के मुख्य साधन के रूप में प्रयोग की जाती हैं। अतः वर्तमान में पाठ्यपुस्तकों का अत्यधिक महत्व है। सभी कक्षाओं के लिए पाठ्यपुस्तकों का होना अनिवार्य है। पाठय—पुस्तकें शिक्षक के कार्य की परिपूरक होती हैं। पाठ्यपुस्तकें अध्यापकों को स्व—शिक्षित करने का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्रोत हैं। शैक्षिक विकास एवं पाठ्यचर्या विकास में पाठ्यपुस्तक चयन एवं लेखन शामिल रहता है।

प्रस्तुत इकाई में हम पाठ्य–पुस्तक का अर्थ एवं परिभाषा, पाठ्य–पुस्तकों की उपयोगिता, पाठ्य–पुस्तकों के प्रकार, पाठ्य–पुस्तकों की विशेषताएँ, पाठ्य–पुस्तकों के चयन के आधार, पाठ्य–पुस्तक के लेखन के अधिनियम, पाठ्य–पुस्तक के दोष, जर्नल एवं पीरियोडिकल्स, हस्तपुस्तिका, छात्र संदर्शिका या कार्य पुस्तिकाएं, छात्र संदर्शिका या कार्य पुस्तिका का निर्माण और भौतिकीय विज्ञान के छात्र तथा छात्र संदर्शिका या कार्य पुस्तिका के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको पाठ्य–पुस्तक, जर्नल, हस्तपुस्तिका एवं छात्र संदर्शिका को समझने में सुविधा होगी।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेगें कि–

- पाठ्य–पुस्तक का अर्थ को जान सकेंगे।
- पाठ्य–पुस्तक को परिभाषित कर सकेंगे।
- पाठ्य–पुस्तकों की उपयोगिता बता सकेंगे।
- पाठ्य–पुस्तकों के प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे।
- पाठ्य–पुस्तकों की विशेषताएँ समझ सकेंगे।
- जर्नल एवं पीरियोडिकल्स का महत्व बता सकेंगे।
- हस्तपुस्तिका को परिभाषित कर सकेंगे।
- छात्र संदर्शिका या कार्य पुस्तिकाएं का वर्णन कर सकेंगे।

14.3 पाठ्य–पुस्तक का अर्थ एवं परिभाषा

पाठ्य–पुस्तक मानव की एक महत्वपूर्ण रचना है। मनुष्य अपने अनुभवों विचारों एवं अनुभूतियों का पुस्तक के रूप में संचय करता है। पाठ्य–पुस्तक ज्ञान संचय का मुख्य साधन रहा है जिसका लाभ नई पीढ़ी को होता है। पुस्तकों के माध्यम से संचित ज्ञान को शिक्षक अपने छात्रों को प्रदान करता है। मानवीय ज्ञान संचय एवं संचार का साधन पुस्तक है। आज के तकनीकी एवं कम्प्यूटर युग में पुस्तकों के अतिरिक्त आधुनिक साधनों एवं माध्यमों का विकास हो रहा है। टेप रिकॉर्ड, विडियों टेप, फ्लोपी, माइक्रो फिल्म आदि का विकास हुआ है। जिसमें महापुरूषों को देखने एवं सुनने का अवसर भी मिलता है जबकि पुस्तक के माध्यम से पढ़ने को मिलता है। यहाँ पर पाठ्य–पुस्तक की परिभाषाओं को दिया गया है। पाठ्य–पुस्तक अनुदेशन को प्रारूप है।

हैरोलिकर के अनुसार–'' पाठ्य–पुस्तक ज्ञान, अनुभवों, भावनाओं, विचारों तथा प्रवृत्तियों व मूल्यों का संचय का साधन का है।

हॉलक्वेस्ट के अनुसार– पाठ्य–पुस्तक शिक्षण क्रियाओं एवं अभिप्रायों के लिए सुव्यवस्थित चिन्तन एवं ज्ञान का लिखित रूप है।

हर्ल आर० डगलस के अनुसार–''अध्यापकों के अनुभवों एवं विश्लेषण के अनुसार पाठ्य–पुस्तक पढ़ने का महत्वपूर्ण आधार है।

प्रभावशाली शिक्षक एवं शिक्षण के लिए पाठ्य–पुस्तक की अहम् भूमिका होती है। शिक्षकों को आधुनिकतम ज्ञान पुस्तकों के माध्यम से ही प्राप्त होता है।

14.3.1 पाठ्य–पुस्तकों की उपयोगिता

पाठ्य–पुस्तक की परिभाषाओं में भी इनकी उपयोगिता का उल्लेख किया गया है। एक अध्यापक के शिक्षण के नियोजन, तथा व्यवस्था के लिए पाठ्य–पुस्तके मुख्य साधन होती हैं। पाठ्य–पुस्तकें शिक्षण की पूरक तथा सहायक होती है।

बी०एस०ब्लूम के अनुसार–''सीखने अनुभवों के लिए समुचित परिस्थितियाँ पाठ्य–पुस्तकों से ही उत्पन्न की जाती है और शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है। शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए पाठ्य–पुस्तकों की अधिक उपयोगिता है। यहाँ पर पाठ्य–पुस्तकों की विशेषताओं व उपयोगिता का विवेचन किया गया है।

1. पाठ्य–पुस्तकें शिक्षण प्रकरणों की सीमा को निर्धारित करती है तथा शिक्षण का मार्ग दर्शन करती है।

2. पाठ्य–पुस्तकों में तथ्यों, प्रत्ययों एवं सूचनाओं को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करती हैं जिससे छात्रों के सीखने में सुविधा एवं सरलता होती है।

3. कक्षा–शिक्षण के प्रकरणों को अध्ययन करने तथा अभ्यास के लिए अवसर मिलता है। पुस्तकें परिपाक का साधन है।

4. शिक्षण के शाब्दिक सम्प्रेषण से जो सुनने व समझने का अवसर मिला, उसको अपने ढंग से पढ़ने और समझने का समुचित अवसर पुस्तकों से मिलता है।

5. पाठ्य–पुस्तकें अध्यापक को कक्षा में जाने से पूर्व पाठ की तैयारी करने का अवसर प्रदान करती है।

6. पाठ्य–पुस्तकें अध्यापक तथा छात्रों दोनों का समय बचाती है। मितव्ययी होती है। इनसे अध्ययन की आदतों का विकास होता है।

7. छात्रों को कम मूल्य पर समस्त आवश्यक तथा महत्वपूर्ण तथ्य तथा सूचनाएँ एक पुस्तक में ही एकत्रित मिल जाती है। जिससे उन्हें इधर–उधर भटकने की आवश्यकता नहीं होती है।

8. पाठ्य–पुस्तकों के लिखित माध्यम से छात्र भी अध्ययन कर सकते हैं तथा गृहकार्य करने में भी वे सहायता प्राप्त कर सकते हैं। अध्यापक को गृहकार्य प्रदान करने में पुस्तकें पर्याप्त सहायक हो सकती है।

9. पाठ्य–पुस्तकों की सहायता से एक साथ सभी छात्रों को पढ़ाया जा सकता है। सामूहिक अध्ययन में सहायता मिलती है।

10. छात्रों को निर्धारित पाठ्यक्रम का ज्ञान पाठ्य–पुस्तकों से ही होता है। वे ज्ञात कर सकते हैं कि वर्ष भर में उन्हें कितना पढ़ना है तथा कितना वे पढ़ चुके हैं।

11. मौन अध्ययन का अभ्यास पाठ्य–पुस्तकों के द्वारा ही कराया जा सकता है। मौन अध्ययन छात्रों को स्वाध्याय की प्रेरणा देता है।

12. प्रत्येक अध्यापक मौखिक शिक्षण में निपुण नहीं हो सकता। सामान्य बुद्धि के अध्यापक के लिए पाठ्य–पुस्तकों का सहयोग आवश्यक हो जाता है।

13. शिक्षा की डाल्टन पद्धति एवं योजना प्रणाली में पाठ्य–पुस्तकों की परम आवश्यकता होती है। बालक अपनी रूचि के अनुसार अध्ययन करते हैं।

14. पाठ को दोहराने का कार्य पाठ्य–पुस्तकों के बिना सम्भव नहीं है। अध्यापक द्वारा बताई गई अनेक बातें छात्र कक्षा में भूल जाते हैं, उनकी स्मरण शक्ति इतनी तीव्र नहीं होती कि वे एक बार बात सुनकर याद कर लें। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि कक्षा में बताई गई बात को घर पर जाकर पुनः दोहरा लें।

15. अतीत के ज्ञान का संचय पाठ्य–पुस्तकों द्वारा ही सम्भव है।

16. पाठ्य–पुस्तक के द्वारा शिक्षकों एवं छात्रों को उपयोगी एवं बहुमूल्य अनुभव प्राप्त होते हैं।

17. पाठ्य–पुस्तक में छात्रों को विषय सामग्री के सन्दर्भ में पूर्ण निर्देशन प्राप्त होते हैं।

18. पाठ्य–पुस्तक में ज्ञान को क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

19. पाठ्य–पुस्तकें परीक्षा के समय छात्रों को सहायक होती है।

14.3.2पाठ्य–पुस्तकों के प्रकार

आधुनिक विचार यह है कि पाठ्य–पुस्तकें शिक्षक का स्थान ले सकती हैं। अभिक्रमित अनुदेशन इसका प्रमुख उदाहरण है। इस प्रकार की पाठ्य–पुस्तकों से छात्र स्वतः भी सीख सकता है। उत्तम प्रकार की पाठ्य–पुस्तकें शिक्षक तथा छात्रों को निर्देशन करती हैं और अध्ययन और अध्यापक की क्रियाओं में सहायक होती है। पाठ्य–पुस्तकें निम्नलिखित प्रकार की होती है।

1. **प्रचलित पाठ्य–पुस्तकें**– इन पुस्तकों में पाठ्यवस्तु से सम्बन्धित प्रकरणों को एक व्यवस्थित क्रम में प्रस्तुत किया जाता है। ये उदाहरण तथा अन्य साधनों से भी परिपूर्ण होती हैं। सन्दर्भ–पुस्तकों की सूची भी दी जाती है। इसमें सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु को दिया जाता है। छात्रों को अध्ययन के बाद ऐसा लगता है कि इससे परे कुछ भी ज्ञान शेष नहीं है। पाठ्यवस्तु को तार्किक क्रम में व्यवस्थित किया जाता है। छात्रों के सीखने की दृष्टि से उपयुक्त हो भी सकती है तथा नहीं भी हो सकती है। छात्रों की व्यक्तिगत भिन्नता को ध्यान में नहीं रखा जाता है।

2. **अनुभवों पर आधारित पाठ्य–पुस्तकें**– इसमें अनुभवों पर आधारित पाठ्य–पुस्तकों का निर्माण किया जाता है इन पाठ्य–पुस्तकों में व्यक्तिगत तथा सामूहिक शोधकार्यो को विशेष महत्व दिया जाता है। प्रत्येक अध्याय में शिक्षण बिन्दुओं को एक क्रम में किया जाता है। जिसका तार्किक क्रम न होकर मनोवैज्ञानिक क्रम होता है जो छात्रों को सीखने में सहायक होता है। प्रकरणों से सम्बन्धित आकृतियाँ, व चित्र भी दिए जाते हैं। उदाहरण, छात्रों के जीवन से सम्बन्धित ही दिए जाते हैं। छात्रों को अभ्यास के लिए अवसर भी दिया जाता है। सीखने के अनुभव संश्लेषण विधि से प्रस्तुत किए जाते हैं। मूर्त चिन्तन को ही महत्व दिया जाता है। इसमें अमूर्त चिन्तन को अवसर नहीं देते हैं इसलिए प्रतिभाशाली छात्रों के लिए यह पाठ्य–पुस्तकें अधिक उपयोगी नहीं होती हैं।

3. **प्रचलित तथा अनुभवों पर आधारित पाठ्य–पुस्तकें**– इस प्रकार की पाठ्य–पुस्तकों में उपरोक्त दोनों प्रकार की पाठ्यपुस्तकों की विशेषताओं का सम्मिलित किया जाता है। प्रत्येक अध्याय को दो खण्डों में बाँटा जाता है प्रथम खण्ड में पाठ्यवस्तु को वर्णक के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। द्वितीय खण्ड में अभ्यास के लिए प्रश्न तथा समस्याएँ दी जाती हैं। जिन्हें छात्र गृह कार्य के रूप में करते हैं पाठ्यवस्तु सम्बन्धी चित्र तथा आकृतियाँ भी दी जाती है। छात्रों के मौलिक चिन्तन तथा सामान्यीकरण के लिए भी अवसर मिलता है। इस प्रकार की पाठ्य–पुस्तकों का आकार बड़ा तथा मोटा हो जाता है तथा उनका मूल्य भी अधिक हो जाता है। इस प्रकार की पाठ्य–पुस्तकों को प्राथमिकता स्तर पर अधिक प्रयोग करते हैं।

4. **अभिक्रमित अनुदेशन पाठ्य–पुस्तकें**– प्रचलित तथा अनुभवों पर आधारित पाठ्य–पुस्तकों की सीमाएँ हैं जिनका विश्लेषण किया गया ओर बी०एफ० स्किनर ने शिक्षण प्रक्रिया में भी इनका उल्लेख किया। इनका प्रमुख दोष तथा सीमाएँ अधोलिखित हैं–

   1. पाठ्य–पुस्तकों के अध्ययन के समय ध्यान एकाग्रचित करने के लिए किसी प्रविधि का प्रयोग नहीं किया जाता है। छात्र स्वयं ध्यान से पढ़ना चाहे तो वह अपना ध्यान केन्द्रित कर सकता है।

   2. पाठ्य–पुस्तकों से पाठ्यवस्तु या निहित प्रत्यय यदि छात्र को स्पष्ट नहीं हो सका उसके लिए सुधारात्मक अनुदेशन की व्यवस्था नहीं है।

   3. पाठ्य–पुस्तकों में छात्रों की व्यक्तिगत भिन्नता तथा अभिरुचियों के लिए कोई व्यवस्था नहीं की जाती है।

   4. पाठ्य–पुस्तकों में प्रकरणों और उनके तत्वों की व्यवस्था तार्किक क्रम में की जाती है जबकि मनोवैज्ञानिक क्रम अधिक उपयोगी तथा प्रभावशाली होता है तथा छात्रों को सीखने में सुगमता प्रदान करता है।

   5. इस तरह की पाठ्य–पुस्तकों की रचना में पाठ्यवस्तु के स्वरूप, उसकी गहनता और व्यापकता पर अधिक ध्यान दिया जाता है।

   6. पाठ्य–पुस्तकों के अध्ययन का कोई छात्र आलेख नहीं रखता कि छात्र ने कितना अध्ययन किया है। प्रत्ययों को पूर्णरूप में प्रस्तुत किया जाता है।

14.3.3 पाठ्य–पुस्तकों की विशेषताएँ

उत्तम पाठ्य–पुस्तकों की विशेषताएँ अधोलिखित हैं–

1. **अनुभवों का उपयोग**– पाठ्य–पुस्तकें एक ऐसा माध्यम रही है जिनके द्वारा महापुरूषों के विचारों तथा विद्वानों के शोध कार्यो के निष्कर्षो का प्रचार एवं प्रसार किया जाता है। शिक्षक तथा छात्र इन अनुभवों का पर्याप्त लाभ उठाते हैं। मानव के अतीत के अनुभवों तथा ज्ञान का संचय पुस्तकों के माध्यम से किया जाता है और भावी नागरिकों को प्रदान किया जाता है। किसी विषय का अनुभवी शिक्षक यदि पुस्तक लिखता है तो वह दो प्रकार के अनुभवों को सम्मिलित करता है। पाठ्यवस्तु का प्रारूप उस स्तर के लिए कितना उपयुक्त है और उसे किस रूप में प्रस्तुत किया जाएँ जिससे छात्र सुगमता से बोधगम्य कर सकें। ऐसी पुस्तकें उत्तम प्रकार की मानी जाती है।

2. **समय की बचत या मितव्ययिता**– मानव का जीवन–काल सीमित हैं और समय तीव्रता से व्यतीत एवं परिवर्तित होता है। अतः ज्ञान प्राप्त करने की क्रियायें सरल एवं सुगम बनाने के लिए पाठ्य–पुस्तकें महत्पूर्ण स्थान रखती हैं। उत्तम प्रकार की पाठ्य–पुस्तकों से समय की बचत होती है, मानवीय अनुभव तथा ज्ञान राशि क्रमबद्ध तथा व्यवस्थित रूप में पुस्तकों में मिल जाती है उनके अध्ययन से कम समय में अधिक ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

3. **सुनिश्चित**– पाठ्य–पुस्तकों का निर्माण विभिन्न स्तरों के लिए किया जाता है किस स्तर पर कितना ज्ञान अथवा जानकारी छात्रों को प्रदान की जाए इसका बोध पाठ्य–पुस्तकों से होता हैं। शिक्षक अपने शिक्षण की क्रियाओं का नियोजन करके उनका सम्पादन करता है। छात्रों के समुचित अधिगम परिस्थिति उत्पन्न करके अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन करता है।

4. **सुगमता**–शिक्षण अधिगम–क्रियाओं को व्यवस्थित करने और उनका संचालन करना सुगम हो इसके लिए पाठ्य–पुस्तकों का विशेष महत्व होता है। प्रकरण के तत्वों को बढ़ते क्रम में व्यवस्थित किया जाता है जिससे शिक्षक को व्यवस्था की दृष्टि से और छात्रों को सीखने की दृष्टि से सुगम हो। गेने की अधिगम–परिस्थितियों के चढ़ाव के क्रम और उद्देश्यों के चढ़ाव के क्रम को ध्यान रखकर पाठ्य–पुस्तकों का निर्माण किया गया हो।

बोध प्रश्न

प्रश्न 7: पाठ्य पुस्तक को परिभाषित कीजिये?

....

....

प्रश्न 8: मौन अध्ययन और स्वाध्याय की प्रेरणा किससे मिलती है?

....

....

प्रश्न 9: पाठ्य पुस्तक के कौन–कौन से प्रकार है?

....

....

14.3.4 पाठ्य–पुस्तकों के चयन के आधार

पाठ्य–पुस्तकों के चयन के लिए अधोलिखित मानदण्डों का प्रयोग करना चाहिए तभी उत्तम प्रकार की पाठ्य–पुस्तकों का चयन करना सम्भव होता है–

1. **पाठ्य–पुस्तक लेखक**–प्रथम मानदण्ड यह है कि पाठ्य–पुस्तक लेखक की शैक्षिक योग्यता, उपाधियाँ, किस पद पर कार्य कर रहे है उसके शिक्षण तथा शोध कार्य आदि का कितना अनुभव या योगदान रहा है। विषय का अनुभवी शिक्षक एक उत्तम प्रकार की पुस्तक लिख सकता है। आम पुस्तक लिखना एक व्यवसाय हो गया है तथा धन कमाने का साधन हो गया है। इसलिए लेखक की विद्वता को ध्यान में रखना चाहिए।

2. **पाठ्यवस्तु का प्रस्तुतीकरण**— पाठ्यवस्तु के प्रकरणों को पाठ्यक्रम के सन्दर्भ में देखना चाहिए उसके बाद प्रकरणों के स्वरूप की गहनता और वास्तविकता की जाँच कर लेनी चाहिए। आज परीक्षा—केन्द्रित शिक्षा है इसलिए परीक्षा की दृष्टि से भी पाठ्यवस्तु का अवलोकन करना आवश्यक होता है। परीक्षा की दृष्टि से भी पाठ्यवस्तु उपयुक्त होनी चाहिए।

3. **पाठ्यवस्तु का प्रस्तुतीकरण**—पाठ्य—पुस्तकों में प्रत्यय तथा तथ्यों को आवश्यक आकृतियों, चित्रों तथा मानचित्रों आदि से प्रस्तुत किया गया है जिससे उन्हें समझना सुगम होता है। प्रकरणों की व्यवस्था समुचित ढंग से की गई, अभ्यास के प्रश्न तथा अन्य सन्दर्भ पुस्तकों को दिया गया है।

4. **पाठ्यवस्तु की शुद्धता तथा वैधता**—प्रत्येक विषय को शब्दावली से प्रस्तुत किया जाता है। पाठ्यवस्तु का स्वरूप के सम्प्रेषण में भाषा ही प्रमुख माध्यम होता है। भाषा की कठिनाई विषय—वस्तु को समझने में बाधक नहीं होनी चाहिए। तकनीकी शब्दों के साथ—साथ अंग्रेजी शब्दों को भी दिया जा सकता है। विषय वास्तु त्रुटि रहित होनी चाहिए साथ ही साथ पाठ्यवस्तु सर्व स्वीकार होना चाहिए।

5. **पाठ्यवस्तु के प्रस्तुतीकरण की भाषा**—किसी विषय की पाठ्यवस्तु के सम्प्रेषण में भाषा ही प्रमुख माध्यम होता है। भाषा सरल एवं सुगम होनी चाहिए जिसे छात्र बोधगम्य कर सके। भाषा की कठिनाई विषय—वस्तु के समझने में बाधक नहीं होनी चाहिए। तकनीकी शब्दों को साथ—साथ अंग्रेजी शब्दों को भी दिया जा सकता है।

6. **छात्रों की दृष्टि से उपयुक्तता**—बालक के मानसिक, सामाजिक, भावात्मक तथा शारीरिक विकास का एक क्रम होता है और हर अवस्था की अपनी आवश्यकता एवं अभिरूचियाँ होती हैं। भाषा शैली, शब्दावली की अनुकूलता होती है। उसी के अनुरूप पाठ्यवस्तु का स्वरूप होना चाहिए उनकी रुचियों के अनुसार उदाहरण तथा पाठ्य—सामग्री का प्रस्तुतीकरण होना आवश्यक होता है। इस सम्बन्ध में मनोवैज्ञानिक, शिक्षा शास्त्रियों, निर्देशकों, शिक्षकों और परामर्शदाताओं के विचारों को जानना भी आवश्यक होता है। इनके सुझावों के अनुरूप ही पाठ्य—वस्तुओं का चुनाव किया जाना चाहिए।

7. **सामाजिक तथा राष्ट्रीय आवश्यकताओं की दृष्टि से**—सामाजिक मूल्यों, मान्यताओं, संस्कृति के विकास की दृष्टि से समुचित होनी चाहिए। छात्रों में जीविकोपार्जन के कौशल एवं क्षमताओं के विकास में सहायक होनी चाहिए। प्राकृतिक साधनों एवं स्रोतों की जानकारी एवं उनके उपयोग की क्षमता का विकास किया जा सके। समस्याओं के समाधान की उचित साधनों तथा विधियों की जानकारी दी जा सके। छात्रों में राष्ट्रीयता की भावना का विकास किया जा सके। जिससे राष्ट्रीय एकता और अखण्डता की भावना का विकास किया जा सके। बन्धुत्व, अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना और मानवता का भाव छात्रों में जागृत किया जा सके।

14.3.5 पाठ्य—पुस्तक के लेखन के अधिनियम

पुस्तकों का लिखना एक रचनात्मक तथा सर्जनात्मक कार्य माना जाता है। पुस्तकों के लिखने पर पारितोषिक दिये जाते हैं तथा सामाजिक योगदान माना जाता है। मौलिक पुस्तक का लिखना कठिन कार्य हैं परन्तु पाठ्य—पुस्तकों का लिखना राष्ट्रीय तथा शैक्षिक योगदान माना जाता है। पाठ्य—पुस्तकों में राष्ट्रीयता की चर्चा रहती है। राष्ट्रीय अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् में पाठ्य—पुस्तकों का एक विभाग है जो पुस्तकों को लिखने का कार्य

करती है। इसके अतिरिक्त 'हिन्दी ऐकेडमी' भी पुस्तकों का प्रकाशन कार्य करती है। पाठ्य–पुस्तकों का लिखना एक व्यवसाय भी हो गया है। कोई संस्थान इस कार्य को करे इसका उद्देश्य उत्तम प्रकार की पुस्तकों का प्रकाशन किया जाना होना चाहिए। पुस्तकों की रचना एवं प्रकाशन में अधोलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

1. पाठ्य–पुस्तकों का प्रारूप विशिष्ट होता है जिस स्तर के छात्रों के लिए पुस्तक लिखी जाए उनके मानसिक विकास के अनुरूप होनी चाहिए।

2. पाठ्य–पुस्तकों की रचना में शिक्षा और पाठ्यक्रम के उद्देश्यों को भी ध्यान में रखना चाहिए। प्राथमिक स्तर पर ज्ञान, स्मृति तथा कौशल के विकास उद्देश्यों को माध्यमिक स्तर पर बोध, ज्ञान प्रयोग तथा अभिरूचियों के विकास को तथा उच्च स्तर पर विश्लेशण मूल्यांकन तथा सौन्दर्यानुभूति उद्देश्यों को महत्व दिया जाता है।

3. पाठ्य–पुस्तकों में पाठ्यवस्तु तथा प्रकरणों के तत्वों को चढ़ाव के क्रम में व्यवस्थित करना चाहिए। सरल से कठिन की ओर, ज्ञात से अज्ञात की ओर आदि नियमों का अनुसरण करना चाहिए। पाठ्यवस्तु की व्यवस्था तार्किक क्रम में तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टि से वैध होनी चाहिए।

4. पाठ्यवस्तु के लिए छोटे–छोटे वाक्य तथा पैराग्राफ भी छोटे हों जिन्हें छात्र सुगमता से समझ सकें।

5. पाठ्य–पुस्तकों की विषय–वस्तु शुद्ध रूप में लिखी जाए तथा उसी के अनुरूप चित्र, मानचित्र, आकृतियाँ तथा रेखाचित्र आदि दिए जाए जिसे छात्रों को समझने में सरलता हो।

6. पाठ्य–पुस्तकों की भाषा शैली तथा शब्दावली ऐसे होनी चाहिए जिससे छात्रों को कठिनाई न हो। कठिन शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। तकनीकी शब्दों की अंग्रेजी में साथ ही दे देनी चाहिए। वाक्यों का आकार छात्रों के अनुकूल होना चाहिए।

7. पाठ्य–पुस्तकों का मुद्रण तथा प्रकाशन स्वच्छ, शुद्ध तथा स्पष्ट होना चाहिए। उत्तम प्रकार के कागज का प्रयोग करना चाहिए।

8. पाठ्यवस्तु की व्यवस्था मनोविज्ञान के नियमों तथा सिद्धान्तों के आधार पर होनी चाहिए। कठिन प्रत्ययों को सरल ढंग से उदाहरणों की सहायता से प्रस्तुत करना चाहिए। उदाहरण उनके वास्तविक जीवन से सम्बन्धित होना चाहिए।

9. पाठ्य–पुस्तकों के अध्यायों का आकार भी बालकों के मानसिक स्तर के अनुकूल होना चाहिए। छोटे बालकों के लिए अध्याय छोटे तथा बड़े छात्रों के लिए अध्याय का आकार बड़ा होना चाहिए।

10. प्रत्येक अध्याय के आरम्भ में उद्देश्यों को लिखना चाहिए और अन्त में सीखने के अभ्यास के लिए प्रश्न भी दिए जाने चाहिए जिनसे उद्देश्यों की प्राप्ति का मूल्यांकन किया जा सके। प्रश्न पाठ्यवस्तु पर आधारित होने चाहिए।

11. पाठ्यवस्तु का मुख–पृष्ठ सचित्र और आकर्षक होना चाहिए। मुख–पृष्ठ से विषय–वस्तु का भाव भी प्रकट होना चाहिए। जिससे पुस्तक की उद्देश्य–वैधता अधिक हो जाती है और यह छात्रों को आकर्षित भी करती हैं।

12. पाठ्य–पुस्तक के सन्दर्भ, तथा पाठ्यवस्तु के स्रोत विश्वसनीय होने चाहिए। पुस्तक में अवतरण, कथन, परिभाषाएँ आदि शुद्ध रूप में दी जानी चाहिए।

14.3.6 पाठ्य–पुस्तक के दोष

1. इनके तैयार करने में लेखक और प्रकाशक का उद्देश्य धनोपार्जन करना होता है। अतः वे पुस्तकें छात्रों के विभिन्न स्तरों के अनुरूप उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तैयार नहीं करते हैं।
2. प्रायः रद्दी कागज, अनाकर्षक छपाई, कच्ची बँधाई और अनुपयुक्त जिल्द का उपयोग किया जाता है। उनकी साज–सज्जा छात्रों को आकर्षित नहीं कर पाती है।
3. ये ज्ञान को जीवन से सम्बन्धित करके प्रस्तुत नहीं करती हैं। अतः बालकों के लिए वे जीवनोपयोगी सिद्ध नहीं होती।
4. पुस्तक–लेखन से पूर्व लेखक छात्रों की सामान्य क्षमताओं और आवश्यकताओं पर ध्यान नहीं देते। अतः पुस्तकें बालकों के लिए अनुपयोगी सिद्ध होती हैं।
5. पुस्तकों में राष्ट्रीय एकता की भावना और अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव का पूर्ण अभाव रहता है।
6. पुस्तकें तैयार करते समय शिक्षण–विधियों को आधार नहीं बनाया जाता है। अतः अध्यापक उनसे लाभ नहीं उठा पाते।
7. इसमें उपयुक्त दृष्टान्तों, चित्रों, मानचित्रों, रेखा–चित्रों और उदाहरणों का अभाव रहता है।
8. पाठ्य–पुस्तकों में मुद्रण सम्बन्धी और भाषा सम्बन्धी अक्षम्य दोष पाए जाते हैं। इसका कारण उन्हें शीघ्रता में तैयार करना ही है।

14.4 जर्नल एवं पीरियोडिकल्स

जर्नल एवं पीरियोडिकल्स सम्प्रेषण तकनीक के मुद्रित (प्रिन्ट) माध्यम है। तकनीकी सम्प्रेषण के माध्यम में कितने भी अविष्कार कर लें, परंतु प्रिन्ट माध्यम का शैक्षिक उपयोग में सम्प्रेषण की उपयोगिता को कम नहीं किया जा सकता। भौतिकीय विज्ञान शिक्षकों को विज्ञान अधिगम के लिए जर्नल एवं पीरियोडिकल्स को संसाधन के रूप में उपयोग करना चाहिए। उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों को तो नियमित रूप से इनके अध्ययन के लिए प्रेरित करना चाहिए एवं समय–सारणी में इस तरह के अधिगम के लिए समय निश्चित कर उन्हें औपचारिक स्तर पर पीरियड लगाना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों को निम्नलिखित लाभ होंगे –

1. नए–नए अनुसंधान की जानकारी प्राप्त होगी।
2. भाषा में प्रवीणता आएगी।
3. आलोचनात्मक चिन्तन की प्रवृत्ती बढ़ेगी।
4. तर्क करने की क्षमता बढ़ेगी।
5. समस्यागत समाधान करने की प्रवृत्ती जागेगी।
6. आत्मविश्वास की भावना आएगी।
7. अपनी स्वयं की अधिगम को प्रस्तुत करना आएगा।
8. पाठ्य वस्तु या विषय सामग्री को अध्ययन करने का अवसर प्राप्त होगा।

9. अन्य विशेषज्ञों के विचारों से अवगत होंगे।

10. एक स्थान पर बैठकर पढ़ने से ध्यान केंद्रित करने की प्रवृत्ति बढ़ेगी।

14.5 हस्तपुस्तिका

हस्तपुस्तिका सन्दर्भ कार्य, अनुदेशन के अन्य संग्रह का एक प्रकार है जो उचित सन्दर्भ प्रदान करता है। पुस्तिका किसी विशेष विषय पर एक ग्रन्थ है। आजकल यह अत्यन्त साधारण तथा सर्वसम्मत है कि सूचनाओं को संक्षिप्त तथा पर्याप्त छोटे रूप में हाथों तक पहुंचाया जा रहा है।

हस्तपुस्तिका को कभी–कभी वाडे मैक्यूम (लैटिन शब्द जिसका अर्थ है मेरे साथ जाना) या पॉकेट सन्दर्भ के रूप में उल्लिखित किया जाता है। जो हर समय साथ रहती है। हस्तपुस्तिका किसी प्रकरण से संबंधित होती है तथा सामान्यः किसी विशेष क्षेत्र या तकनीकी की सूचनाओं के सारांश के रूप में होती है। वे किसी निश्चित क्षेत्र आसानी से परामर्श देने एवं शीघ्र उत्तर देने हेतु निर्मित होती है। उदाहरणार्थ शोध पत्र लेखको हेतु एम०एल०ए० पुस्तिका यह सन्दर्भित करती है कि कैसे कोई दृष्टान्त दूसरी चीजों के बीच एम०एल०ए० शैली में कार्य करता है।

हस्तपुस्तिका कभी–कभी किसी संगठन के अन्तर्गत दस्तावेज के रूप में निर्मित होती है जो प्रकाशन हेतु निर्मित नहीं होती है जैसे मानव संसाधन हेतु किसी कम्पनी की हस्तपुस्तिका। इस सन्दर्भ में हस्तपुस्तिका हेतु 'मैनुअल' शब्द का प्रयोग पर्यायवाची के रूप में किया जाता है।

हस्तपुस्तिका का प्रयोग कभी–कभी सन्दर्भ कार्य जो पॉकेट आकार के नहीं होते लेकिन तैयार सन्दर्भ प्रदान करते हैं के रूप में किया जाता है। जैसे कुछ अभियांत्रिकी हस्तपुस्तिका जैसे पेरी की रसायन अभियांत्रिकी पुस्तिका मार्क की यांत्रिक अभियांत्रिकी की मानक पुस्तिका और सी०आर०सी० रसायन एवं भौतिकी पुस्तिका। विज्ञान के क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के आकड़ो के त्वरित सन्दर्भ के रूप में पुस्तिका बहुतायत से प्रयोग किया जाता है

बोध प्रश्न

प्रश्न 10: अभिक्रमित अनुदेशन पाठ्य पुस्तक का प्रतिपादन किसने किया?

....

....

प्रश्न 11: हस्त पुस्तिका लेखन का मूल सिद्धांत क्या है?

....

....

प्रश्न 12: छात्र संदर्शिका को परिभाषित कीजिये?

....

....

14.6 शिक्षार्थी कार्य पुस्तिका या कार्य पुस्तिकाएं

भौतिकीय विज्ञान में वर्तमान समय में हस्त पुस्तिका का भी उपयोग होता है। इसे छात्र स्वयं अपने दैनिक उपयोग के लिए तैयार करते हैं। इसमें विद्यालय के निर्देश, समय–सारणी, अवकाश, गृहकार्य सम्बन्धी निर्देश आदि का विवरण रहता है। अपनी स्वयं की प्रतिदिन की तैयारी हेतु मार्गदर्शिका के रूप में छात्र इनका उपयोग करते हैं। इससे वे अपने विद्यालय जीवन के लिए अधिक शीघ्रता एवं तत्परता से कार्य करने हेतु अभ्यस्त हो जाते हैं। शिक्षा–शब्दकोश में हैण्डबुक के अर्थ को इस प्रकार स्पष्ट किया गया है, ''हस्त पुस्तिका सामान्यतया छात्रों द्वारा तैयार किया गया प्रकाशन है, जो विद्यालय अथवा कालेज जीवन के लिए अधिक शीघ्रता से स्वयं को समायोजित करने में छात्र की सहायता के लिए उद्दिष्ट आवश्यक तथ्यों से उद्यत संदर्भ प्रस्तुत करती है।''

14.6.1 शिक्षार्थी कार्य पुस्तिका या कार्य पुतिका का निर्माण

इसका निर्माण मुख्यतः दूरस्थ शिक्षा के लिए किया जाता है। पाठ्यक्रम संदर्शिका के निर्माण हेतु निम्नलिखित तथ्यों की जानकारी आवश्यक है–

1. विषय से सभी संदर्भ पुस्तकों की जानकारी आवश्यक है।
2. विषय से सम्बन्धित तथ्य जैसे कितने पेपर पढ़ाते है, कितने अध्याय इसके अन्तर्गत किन–किन तथ्यों को रखा जाए इसकी जानकारी आवश्यक है।
3. संदर्शिका निर्माण के समय यह बात ध्यान देने योग्य है कि रखे गये तथ्यों में अन्तर्निहित सम्बन्ध होना चाहिए।
4. संदर्शिका निर्माण के समय प्रयुक्त होने वाली सहायक सामग्रियों की जानकारी आवश्यक है।
5. संदर्शिका ऐसी हो जो पाठ्यक्रम को पूरा करने में सहयोग करें। संदर्शिका या हस्त पुस्तिकाओं का प्रयोग

14.6.2 भौतिकीय विज्ञान के छात्र तथा शिक्षार्थी कार्य पुस्तिका

भौतिकीय विज्ञान के छात्र हस्त पुस्तिकाओं का प्रयोग निम्नलिखित रूप में करते हैं–

1. इनमें विषय–पाठ्यक्रम एवं पाठ्यवस्तु एवं अधिगम अनुभवों से सम्बन्धित दैनिक, मासिक एवं सत्रीय कार्य का विवरण अंकित करते हैं।
2. इसमें शिक्षक द्वारा सम्पादित प्रयोग प्रदर्शन, प्रयोशाला–कार्य से सम्बन्धित आवश्यक एवं उपयोगी विवरण लिखते हैं।
3. इसमें छात्रों द्वारा सम्पन्न किए जाने वाले प्रायोगिक एवं प्रोजेक्ट कार्यों का विवरण लिखते हैं।
4. इसमें शिक्षकों द्वारा दत्त कार्य एवं गृहकार्य अंकित किया जाता है।
5. इसमें छात्र अपनी अधिगम कठिनाइयों को भी अंकित करते हैं।

14.7 सारांश

पाठ्य–पुस्तक शिक्षण क्रियाओं एवं अभिप्रायों के लिए सुव्यवस्थित चिन्तन एवं ज्ञान का लिखित रूप है। शिक्षण के शाब्दिक सम्प्रेषण से जो सुनने व समझने का अवसर मिला, उसको अपने ढंग से पढ़ने और समझने का समुचित अवसर पुस्तकों से मिलता है। पाठ्य–पुस्तकों में शिक्षा और पाठ्यक्रम के उद्देश्यों को भी ध्यान में रखना चाहिए। प्राथमिक स्तर पर ज्ञान, स्मृति तथा कौशल के विकास उद्देश्यों को माध्यमिक स्तर पर बोध, ज्ञान प्रयोग तथा अभिरूचियों के विकास को तथा उच्च स्तर पर विश्लेषण मूल्यांकन तथा सौन्दर्यानुभूति उद्देश्यों को महत्व दिया जाता है। भौतिकीय विज्ञान शिक्षकों को विज्ञान अधिगम के लिए जर्नल एवं पीरियोडिकल्स को संसाधन के रूप में उपयोग करना चाहिए। हस्तपुस्तिका किसी संगठन के अन्तर्गत दस्तावेज के रूप में निर्मित होती है जो प्रकाशन हेतु निर्मित नहीं होती है जैसे मानव संसाधन हेतु किसी कम्पनी की हस्तपुस्तिका। हस्त पुस्तिका सामान्यतया छात्रों द्वारा तैयार किया गया प्रकाशन है, जो विद्यालय अथवा कालेज जीवन के लिए अधिक शीघ्रता से स्वयं को समायोजित करने में छात्र की सहायता के लिए उद्दिष्ट अनावश्यक तथ्यों से उद्यत संदर्भ प्रस्तुत करती है।

14.8 अभ्यास प्रश्न

1. पाठ्य–पुस्तक का अर्थ स्पष्ट कीजिए?
2. पाठ्य–पुस्तक को परिभाषित कीजिए?
3. पाठ्य–पुस्तकों की उपयोगिता का वर्णन कीजिए?
4. पाठ्य–पुस्तकों के प्रकारों का वर्णन कीजिए?
5. पाठ्य–पुस्तकों की विशेषताओं का वर्णन कीजिए?
6. जर्नल एवं पीरियोडिकल्स का महत्व स्पष्ट कीजिए?
7. हस्तपुस्तिका को परिभाषित कीजिए?
8. छात्र संदर्शिका या कार्य पुस्तिकाओं का वर्णन कीजिए?

14.9 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में पाठ्य–पुस्तक पर चर्चा करेगें।
2. छात्राध्यापक आपस में पाठ्य–पुस्तकों की उपयोगिता पर चर्चा करेंगें।

इकाई–15 भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला, कक्षा में और कक्षा के बाहर भौतिकीय विज्ञान अधिगम

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना

15.2 उद्देश्य

15.3 भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला

15.3.1 भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला की डिजाइन

15.3.2 भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला का ले–आउट

15.3.3 भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला में सुरक्षा उपाय

15.3.4 भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला में दुर्घटना अैर उनका उपचार

15.3.5 प्रभावी शिक्षण में भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला का उपयोग

15.3.6 भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला का महत्व

15.4 कक्षा में भौतिकीय विज्ञान अधिगम

15.4.1 कक्षा में स्वतंत्रता

15.4.2 कक्षा में तथ्य एवं तकनीकों को सीखना

15.4.3 भौतिकीय विज्ञान शिक्षा के विविध पहलू

15.4.4 भौतिकीय विज्ञान कक्षा में शिक्षक की भूमिका

15.4.5 कक्षा का वातावरण

15.4.6 कक्षा में अधिगम सामग्री

15.5 कक्षा के बाहर भौतिकीय विज्ञान अधिगम

15.5.1 महासागर

15.5.2 तालाब

15.5.3 वन

15.5.4 वन संसाधन का महत्व

15.5.5 नदियाँ

15.6 सारांश

15.7 अभ्यास प्रश्न

15.8 चर्चा के बिन्दु

15.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.1 प्रस्तावना

विज्ञान की शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया केवल व्याख्यात्मक रूप से नहीं हो सकती है। विज्ञान की शिक्षा के लिए आवश्यक है कि विज्ञान शिक्षा का पठन–पाठन क्रिया प्रयोगात्मक कार्य रूप में हो। प्रयोगशाला एक ऐसा स्थान है, जहाँ पर छात्र, विज्ञान नियमों एवं सिद्धांतों के सन्दर्भ में विभिन्न प्रकार के प्रयोग करते है। एक भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला में, विभिन्न प्रकार के वैज्ञानिक उपकरण एवं रसायन सुरक्षित एवं सुव्यवस्थित रखे जाते है। इसके बिना कोई भी प्रायोगिक कार्य नहीं हो सकते है। प्रयोगशाला की सहायता से विज्ञान शिक्षक छात्रों के अन्दर वैज्ञानिक अभिवृति का विकास करता है। प्रयोगशाला में छात्र वैज्ञानिक सिद्धांतो एवं नियमों को करके सीखते है। प्रयोगशाला में छात्रों के अन्दर नए–नए विचार आते है जिसका परीक्षण वह प्रयोग के माध्यम से कर सकते है। प्रयोगशाला में प्रयोग करते समय छात्रों के अन्दर मानवीय गुणों जैसे– सत्य, तर्क शक्ति, विचार शक्ति, कल्पना शक्ति आदि का विकास होता है।

प्रस्तुत इकाई में हम भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला, भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला की डिजाइन, भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला का ले–आउट, भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला में सुरक्षा उपाय, भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला में दुर्घटना और उनका उपचार, प्रभावी शिक्षण में भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला का उपयोग, भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला का महत्त्व, कक्षा में भौतिकीय विज्ञान अधिगम, कक्षा में स्वतंत्रता, कक्षा में तथ्य एवं तकनीकों को सीखना, भौतिकीय विज्ञान शिक्षा के विविध पहलू, भौतिकीय विज्ञान कक्षा में शिक्षक की भूमिका, कक्षा का वातावरण, कक्षा में अधिगम सामग्री, कक्षा के बाहर भौतिकीय विज्ञान अधिगम, महासागर, तालाब, वन, वन संसाधन का महत्व और नदियों के बारे में विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला, कक्षा में और कक्षा के बाहर भौतिकीय विज्ञान अधिगम को समझने में सुविधा होगी।

15.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जायेगें कि–

- भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला की डिजाइन तैयार कर सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला में सुरक्षा के उपायों के बारें में बता सकेंगे।
- भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला के महत्व का निर्धारण कर सकेंगे।
- कक्षा में भौतिकीय विज्ञान अधिगम को समझ सकेंगे।
- कक्षा के बाहर भौतिकीय विज्ञान अधिगम का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।

15.3 भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला

किसी भी भौतिकीय विज्ञान के शिक्षण एवं अधिगम में प्रयोगशाला केन्द्र बिन्दु है। यह सत्य है कि भौतिकीय विज्ञान विषय केवल पढ़कर नहीं सीखा जाता बल्कि विद्यार्थियों द्वारा निरिक्षण एवं प्रयोग द्वारा ही अधिगम होता है। सैद्धान्तिक के साथ–साथ प्रयोग और परीक्षण करना भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का अभिन्न अंग है। पुस्तकों से पढ़े हुए नियमों तथा सिद्धान्तों की जाँच शिक्षक, प्रयोग द्वारा स्वयं नहीं कर लेता, उसे समझने में वह असमर्थ रहता है। प्रयोगात्मक कार्यों से ही विद्यार्थी की रचनात्मक कार्य करने की शक्ति का विकास होता है जो भौतिकीय विज्ञान विषय शिक्षण के मुख्य उद्देश्यों में से एक हैं। इन्हीं से उसका बौद्धिक विकास भी सम्भव हो पाता है तथा कल्पना शक्ति, निरीक्षण शक्ति, तर्क शक्ति तथा निर्णय शक्ति का विकास होता है। इस प्रकार भौतिकीय विज्ञान विषय का ज्ञान, अवबोध एवं कौशल सीखने के लिए विद्यार्थियों को प्रयोगशालाओं का प्रयोग करना अत्यन्त आवश्यक है।

सिर्फ नियम, सिद्धान्तों का सत्यापन ही प्रयोगशाला में नहीं होता बल्कि प्रयोगशाला में कार्य करने से वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है। निष्कर्ष निकालने, उनका विश्लेषण करने का कौशल का भी विकास होता है। इसलिए भौतिकीय विज्ञान शिक्षण में प्रयोगशाला एक अभिन्न अंग है।

15.3.1 भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला की डिजाइन

भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला की डिजाइन, भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के शिक्षकों, वैज्ञानिक अनुसंधानकर्ताओं, विषय विशेषज्ञों, विद्यालयी प्रशासनिक अधिकारियों एवं आर्किटेक्ट का संयोजित रूप से किए गये कार्य का प्रतिफल है। सेवेज ने छः कारकों को महत्वपूर्ण बताया जब भी प्रयोगशाला का ले–आउट की योजना बनाई जाए।

1. **रेखीय बेन्च स्थान** : ऐलीमेन्टरी प्रयोगशाला में छात्र के लिए 1 मीटर बेन्च का स्थान का प्रावधान तथा सिक्सथ फार्म प्रयोगशाला में छात्र के लिए 1.3 स्का.मी. बेन्च का स्थान का प्रावधान है।
2. **सरकूलेशन स्पेस** : 1.7 मी. का स्पेस बेन्चों के सिरे से और दीवारों से है।
3. **संग्रहन (स्टोरेज)** : सभी के उपयोग के लिए आलमारियाँ हो जहाँ उपकरणों एवं अन्य सामग्रीयों को रखा जा सकें।
4. **स्थायी उपकरण** : जो उपकरण हिलाए नहीं जा सकते, जिन्हें स्थिर रखना आवश्यक है, उनके लिए स्थायी जगह का निर्धारण किया जाए। उदाहरण : भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला में वजन करने के बैलेन्स, इलेक्ट्रिक से चलने वाले उपकरण आदि।
5. **वॉल स्पेस** : उन उपकरणों के लिए स्थान जिन्हें प्रयोगशाला में वर्टीकल प्लेन पर फिक्सड करके उपयोग करा जाए।
6. **प्रदर्शन बेंच** : प्रयोगशाला में प्रदर्शन बेंच का होना विद्यार्थियों के शिक्षण एवं व्यक्तिगत प्रयोगिक कार्य दोनों के लिए उपयोगी है।

स्थिर बेन्चेस से प्रयोगशाला में लचीलापन लाना मुश्किल है और इस तरह आधुनिक पाठ्यक्रम की डिमाण्ड्स को पूरा करने में दिक्कते आती है। इसलिए प्रयोगशाला निर्माण की योजना में लचीलेपन के सिद्धान्त को ध्यान में रखना आवश्यक है। प्रयोगशाला

में चलती–फिरती टेबल, बेन्चेस, ट्रॉली का इस्तेमाल अधिक उपयोगी है। भविष्य में जो सुविधाएं काम आ सकें ऐसे प्रावधानों पर कार्य करना चाहिए। आधुनिकता के चलते प्रत्येक उम्र के विद्यार्थियों के लिए प्रयोगशाला में कार्य करना अनिवार्य है।

15.3.3 भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला का ले–आउट

विद्यालय के अन्तर्गत, प्रयोगशाला की स्थिति (लोकेशन) के लिए कोई नियम प्रस्तावित नहीं है, क्योंकि कोई भी दो स्कूल आवश्यकता और पर्यावरणी हालात में एक जैसे नहीं है। फिर भी प्रयोगशाला के ले–आउट में निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान रखना चाहिए।

1. **भौतिकीय विज्ञान ब्लॉक** : भौतिकीय विज्ञान ब्लॉक बनाकर कई प्रयोगशालाएं आस–पास होने से कई लाभ होते है जैसे स्टाफ तथा उपकरणों का आवागमन कम हो जाता है, टेक्निकल सहायता के अवसर बढ़ जाते है, इन्टरडीसिप्लनेरी प्रकृति के कार्य आसानी से कर लिए जाते है, आर्थिक रूप से खर्चे कम हो जाते है, बिजली, पानी, गैस आदि सुविधाएं एक साथ पूरी हो जाती है।

2. **प्रायोगिक विंग** : भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला एवं भौतिक शास्त्र/रसायन शास्त्र/जीव भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला के स्थान को सावधानीपूर्वक चयनित करना चाहिए। इस तरह उन्हें स्थापित किया जाए कि विद्यार्थी के लिए व्याख्यान कक्ष, सहायता, परियोजना गतिविधियों में अन्य प्रयोगशालाओं से सहायता प्राप्त करने में आसानी हो।

3. **पर्यावरणीय स्थितियों के प्रति निर्धारण** : जहाँ से सूर्य का प्रकाश सीधा आता हो वहाँ बुन्सन बर्नर या रसायन नहीं रखना चाहिए जो ज्वलनशील एवं खतरनाक है। खिड़कियों और दरवाजों के आसपास श्यामपट्ट या ओवहरहेड प्रोजेक्टर स्क्रीन को नहीं लगाना चाहिए। प्रयोगशाला की स्थिति को अंतिम रूप देने से पहले भौतिक वातावरण का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करना अत्यन्त आवश्यक है। धूप की दिशा, हवा, पानी, गर्म, ठण्डा आदि को प्रयोगशाला स्थापित करते वक्त ध्यान में रखना चाहिए ताकि बाद में प्रयोगिक अध्ययन में कोई परेशानी न हो।

15.3.3 भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला में सुरक्षा उपाय

जैसे–जैसे भौतिकीय विज्ञान तरक्की कर रहा है, उससे जुड़े नुकसान भी बढ़ रहे है। यदि नुकसान होने से पहले सावधानियों को हम ध्यान में ले लें तो ये सावधानी दुर्घटना को टाल देती है। यह सच है कि आधी दुर्घटनाएं तो अनजाने में होती है। भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला भी ऐसा ही स्थान है जहाँ दुर्घटना होने के अवसर होते हैं। विद्यार्थियों को शिक्षकों द्वारा सावधानी बरतने के लिए पूर्ण प्रशिक्षण देने की आवश्यकता होती है। सुरक्षा उपायों की पूर्ण जानकारी भौतिकीय विज्ञान शिक्षकों को होना अत्यन्त आवश्यक है। प्रयोगशाला में अनुशासनहीनता का पाठ पढ़ाने से ज्यादा उन्हें सुरक्षा उपायों एवं दुर्घटनाओं से अवगत करना चाहिए, उनके अन्दर जागरूकता को पैदा करना चाहिए, उन्हें नियमानुसार और सावधानीपूर्वक व विवेक से कार्य करने के लिए प्रेरित करना चाहिए। यहाँ कुछ सुरक्षा उपाय दिए जा रहे है जिन्हें प्रयोगशाला के उपयोग में लाना अत्यन्त आवश्यक है–

1. प्रत्येक प्रयोगशाला में प्राथमिक उपचार पेटी होनी चाहिए तथा उसमें निम्नलिखित सामग्री होना चाहिए जैसे, कई प्रकार की छोटी–बड़ी पट्टियाँ, कीटाणु रहित रूई,

जोड़ने वाला प्लास्टर, आँख साफ करने का उपकरण, आँख में डालने के लिए पेनिसिलिन और लौकूला आदि दवाईयाँ, छोटी–बड़ी कैंचियाँ, शल्य चिकित्सा सम्बन्धी चिमटियाँ, शल्य चिकित्सा सम्बन्धी पट्टी बाँधने का मुलायम कपड़ा, आसुत जल, सरसों का तेल, नारियल का तेल, अरण्डी का तेल, ग्लिसरिन, टैनिक एसिड, बोरिक एसिड, ऐसिटिक एसिड, सिल्वर नाइट्रेट का घोल, मिल्क ऑफ मैग्नेशियम, टिंक्चर आयोडीन, डिटोल, फिटकरी, लाल दवा, चूने का पानी, सोडियम–बाई–कार्बोनेट।

2. प्रयोगशाला में जहरीली गैसों को परीक्षणों की समाप्ति पर उपयुक्त अवशोषकों द्वारा नष्ट कर देना चाहिए।
3. बिजली, गैस, मैनटेप आदि प्रयोगशाला बन्द करते समय जाँच कर बन्द कर देना चाहिए।
4. अग्निशामकों की सदा जाँच करते रहना चाहिए।
5. जलती हुई चीजों को डस्टबिन में डालने से पूर्व बुझा लेना चाहिए।
6. अभिकर्मकों की बोतलों को सदा डाट से बन्द रखना चाहिए।
7. परीक्षण नली का मुँह हमेशा स्वयं दूर रखना चाहिए।
8. विस्फोटकों के सम्बन्ध में विशेष सावधानी बरतनी चाहिए।

15.3.4 भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला में दुर्घटना और उनका उपचार

प्रयोगशाला में कुछ सम्भव आम दुर्घटनाएँ और उनके लिए प्राथमिक उपचार :–

1. जलने पर :

(a) अम्ल से जलने पर उस स्थान को तुरन्त बहुत अधिक पानी से धो देना चाहिए और फिर उसे सोडियम–बाई–कार्बोनेट या बोरेक्स के घोल से धोकर दूसरी बार पानी से धो देना चाहिए जिससे अम्ल का प्रभाव जाता रहे। इसके पश्चात् कोई वैसलीन लगा देनी चाहिए।

(b) क्षार से जल जाने पर भी जले स्थान को तुरन्त बहुत अधिक पानी से धो देना चाहिए और फिर उसे 1 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल या नींबू के रस से धो देना चाहिए।

(c) फास्फोरस से जलने पर जले हुए स्थान को पानी डालकर अच्छी तरह धो लेना चाहिएं इसके बाद उस स्थान पर मुलायम कीटाणु रहित रूइ सिल्वर नाइट्रेट के हल्के घोल में डुबोकर पट्टी बाँध देनी चाहिए।

(d) स्टोव, हीटर, बर्नर इत्यादि से जलने पर जले हुए स्थान को गीला करके अगर उस पर साधारण नमक बहुत मात्रा में लगा दिया जाए तो इससे फफोले पड़ने की सम्भावना बहुत कम हो जाती है। फफोले पड़ने पर नारियल के तेल को चूने के पानी में फेंटकर जले हुए स्थान पर लगाना चाहिए।

2. कटने पर : मामूली कटने पर टिंक्चर आयोडिन तथा डिटोल आदि में भिगोई हुई रूई रखकर पट्टी बाँध देनी चाहिए। यदि कोई प्रमुख धमनी कट जाए तो डॉक्टर को तुरन्त सूचना देनी चाहिए।

3. विषाक्त होने पर :ऐसी अवस्था में तुरन्त डॉक्टर को बुलाना चाहिए। डॉक्टर के आने से पहले प्राथमिक उपचार के तौर पर साधन अपनाए जा सकते हैं – अगर

किसी विषैले पदार्थ को मुँह में रख लिया गया हो, परन्तु निगला नहीं गया हो तो तुरन्त थूक देना चाहिए। इसके बाद मुँह को एकदम साफ पानी से अच्छी तरह साफ कर लेना चाहिए। विषैले पदार्थ को निगल जाने की स्थिति में निम्न उपाय करने चाहिए –

(a) क्षयकारी पदार्थ, जैसे–अम्ल, क्षार और जिंक के यौगिकों आदि के निगलने पर उल्टी नहीं करानी चाहिए।

(b) अम्ल पीने पर पानी पिलाना चाहिए और उसके बाद चूने का पानी पिलाना चाहिए।

(c) क्षार पीने पर पानी पिलाना चाहिए और उसके बाद ऐसीटिक एसिड का 1 प्रतिशत घोल या नींबू का रस पिलाना चाहिए। इसके पश्चात् रोगी को अण्डी की सफेदी या चावल का पानी पिलाकर आराम करने देना चाहिए।

(d) अगर निगला हुआ पदार्थ क्षयकारी नहीं है तो उसे तुरन्त उल्टी करानी चाहिए।

4. **आँख पर आघात पहुँचने पर** : आँखों में कुछ पड़ जाने पर सावधानीपूर्वक निम्न उपचार किया जा सकता है –

(a) अम्ल पड़ जाने पर उसे पानी में बार–बार खोलकर तथा बंद कर खूब धोना चाहिए।

(b) क्षार पड़ जाने पर उसे इसी तरह शुद्ध पानी में खूब धोना चाहिए।

(c) कोई ठोस वस्तु गिर जाने पर दियासलाई की एक तीली पर धीरे से पलक को खोलकर ग्लीसरीन में मुलायम बालों का ब्रुश डुबोकर धीरे से गिरी हुई वस्तु को निकालना चाहिए।

5. **विद्युत आघात पर** : बच्चों को स्पष्ट निर्देश दे देने चाहिए कि वे जिसे विद्युत करण्ट लगे, पकड़ कर न खींचे। इससे वे स्वयं भी उसके शिकार हो सकते हैं। इस स्थिति में स्विच को फौरन बन्द करना चाहिए। डॉक्टर को खबर कर देनी चाहिए। इस बीच दुर्घटनाग्रस्त व्यक्ति को खुली हवा में कमर के बल लिटा देना चाहिए तथा अगर कुछ पी सके तो चाय, कॉफी या ब्राण्डी देनी चाहिए। यदि स्थिति अच्छी न हो तो साँस देने का भी प्रयत्न करना चाहिए।

6. **विषैली गैस का प्रभाव** : अगर किसी छात्र ने कोई विषैली गैस सूँघ ली हो तो उसे तुरन्त ही स्वच्छ एवं ताजी हवा में ले आना चाहिए। उसके कपड़ों को ढीला कर देना चाहिए। अगर उसे कुछ बेहोशी हो तो उसे इन प्रकार से बिठाना चाहिए कि उसका सिर घुटनों के बीच में रहे तथा उसे नौसादर आदि पदार्थ सूँघाने चाहिए। साथ ही उसे उत्तेजक पदार्थ चाय, कॉफी, ब्राण्डी देनी चाहिए। अधिक बेहोशी की हालत में कृत्रिम साँस देने तथा ऑक्सीजन देने का उपाय भी करना चाहिए तथा रोगी को हर तरह से गर्म रखने का प्रयत्न करना चाहिए।

15.3.5 प्रभावी शिक्षण में भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला का उपयोग

भौतिकीय विज्ञान शिक्षक को प्रयोगशाला का उपयोग प्रभावी शिक्षण के लिए करना अत्यन्त आवश्यक है। प्रयोगशाला द्वारा विद्यार्थियों को ज्ञान 'करके सीखने' के सिद्धान्त पर बल दिया जाता है। प्रयोगशाला द्वारा प्रेक्षण लेने, विश्लेषण करने व निष्कर्ष निकालने से उसमें सोचने–विचारने, निरीक्षण करने, निर्णय लेने और व्यवस्था करने की क्षमता का

विकास होता है। जिन पाठ्य–वस्तुओं को शिक्षकों को सैद्धान्तिक रूप से छात्रों को समझाने में दिक्कत आती है उन्हें प्रायोगिक रूप से प्रयोगशाला में कराने पर शिक्षण प्रभावी होता है तथा विद्यार्थियों को हमेशा याद भी रहता है। प्रयोग कार्य और सैद्धान्तिक कार्य साथ–साथ चलाने चाहिए। यदि प्रकाश के सिद्धान्त कक्षा में बताए जा रहे है तो उससे सम्बन्धित प्रयोग प्रयोगशाला में उसी समय करवाना चाहिए।

विद्यार्थियों को व्यक्तिगत रूप से प्रयोग करने के अवसर प्रदान करना चाहिए। ग्रुप में यदि विद्यार्थी कार्य करते है तो, अन्तर्मुखी छात्रों का नुकसान होता है। कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या अधिक है तो समूहों का निर्माण कर एक बार में एक समूह को प्रयोग करने ले जाए। प्रयोग करने से पहले सभी निर्देश एवं सावधानियों से बच्चों को अवगत कराए। भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के लिए प्रयोगशाला एक बहुमूल्य संसाधन है।

15.3.6 भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला का महत्व

भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के लिए भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला अति आवश्यक है। इसके निम्नलिखित महत्त्व है–

1. एक प्रयोगशाला में, विभिन्न प्रकार के वैज्ञानिक उपकरण एवं रसायन सुरक्षित एवं सुव्यवस्थित रख सकते है। इसके बिना कोई भी प्रायोगिक कार्य नहीं हो सकते है।
2. यही विद्यालय में प्रयोगशाला सही ढंग से सुव्यवस्थित है तो छात्रों के अन्दर एक प्रेरणा जागेगी जिससे वह विभिन्न प्रकार के प्रयोग कर सकते है।
3. प्रयोगशाला की सहायता से भौतिकीय विज्ञान शिक्षक छात्रों के अन्दर वैज्ञानिक अभिवृत्ति का विकास कर सकेगें।
4. प्रयोगशाला में छात्र वैज्ञानिक सिद्धांतो एवं नियमों को करके सीखते है।
5. प्रयोगशाला में छात्रों के अन्दर नए–2 विचार आते है जिसका परिक्षण वह प्रयोग के माध्यम से कर सकते है।
6. प्रयोगशाला में प्रयोग करते समय छात्रों के अन्दर मानवीय गुणों का विकास होता है। जैसे– सत्य, तर्क शक्ति, विचार शक्ति, कल्पना शक्ति आदि।

15.4 कक्षा में भौतिकीय विज्ञान अधिगम

हाल के दिनों में बच्चों के सीखने की प्रक्रिया के बारे में विमर्श इस बात की तरफ मुड़ा है कि सीखना पुराने ज्ञान व समझ के आधार पर ही हो सकता है। यह बात भी मानी जा रही है कि कक्षा में बच्चों को सोचने व अपने विचार व्यक्त करने का मौका होना चाहिए। यह आवश्यक है कि सिखाने की प्रक्रिया में गहराई से सोचने, विश्लेषण करने, अपना मत बनाने व विचारों को अपने शब्दों में व्यक्त करने के लिए पर्याप्त मौके हों और इन सभी पहलुओं में उसकी क्षमता में उत्तरोत्तर वृद्धि हो। इसके पीछे धारणा यह है कि शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य इंसान का विकास एक लगातार सीखने व स्वतंत्र रूप से सोचने वाले संवेदनशील व सचेत व्यक्तित्व के रूप में करना है। वह न सिर्फ तार्किक व क्रमबद्ध रूप से सोच पाए बल्कि अपने अनुभवों, संवेदनाओं और तर्कों के बीच एक सम्बन्ध का विकास भी कर पाए।

एक और महत्वपूर्ण पहलू है हमारी भौतिकीय विज्ञान की समझ और इसका भौतिकीय विज्ञान शिक्षण की समझ के लिए निहितार्थ। भौतिकीय विज्ञान स्थिर व बना हुआ

ज्ञान नहीं है, वह लगातार परिवर्तित होने वाली समझ है जो हमें अपने आसपास हो रहे परिवर्तनों व प्रक्रियाओं को समझने में मदद करता है। जहाँ एक ओर भौतिकीय विज्ञान में मान्य तथ्य काफी ठोक–बजाकर जाँचे जाते हैं और इसलिए उनको काटना व गलत सिद्ध करना सरल नहीं होता है, वहीं दूसरी ओर कोई भी ऐसा तथ्य नहीं है जिस पर पुनर्विचार नहीं किया जा सके। लेकिन पुनर्विचार करने के लिए पर्याप्त प्रमाण व तर्क होना आवश्यक है यानी भौतिकीय विज्ञान का ज्ञान परिवर्तनीय तो है लेकिन ऐसा नहीं कि किसी इंसान की व्यक्तिगत मान्यताओं पर आधारित हो।

बोध प्रश्न

प्रश्न 13: भौतिक विज्ञान में प्रयोगशाला क्यों आवश्यक है?

....

....

प्रश्न 14: प्रयोगशाला निर्माण में कितने कारकों का ध्यान रखना चाहिए?

....

....

प्रश्न 15: प्रयोगशाला में आग से जलने पर क्या करना चाहिए?

....

....

इन सब कथनों में कई गहरे विमर्श, द्वन्द्व व मतभेद छिपे हैं और हम यहाँ पर भौतिकीय विज्ञान की प्रकृति के बारे में कुछ सरलीकृत समझ लेकर भौतिकीय विज्ञान शिक्षा की बात कर रहे हैं। वैसे तो भौतिक जगत व उसके सार्वभौमिक नियम, वस्तुपरकता, व्यक्तिगत दृष्टि आदि ऐसे मसले हैं जो भौतिकीय विज्ञान की समझ, उसके तरीके व उसके निष्कर्षों से गहरे रूप से जुड़े हैं। यह भी विचारणीय है कि क्या आज का भौतिकीय विज्ञान कुछ खास किस्म के लोगों की विचारधारा व जीवनशैली के आधार पर रचा गया है? क्या उसमें बहुत से विविध दबे हुए समूहों की भावनाओं व मान्यताओं के लिए जगह नहीं है? यह बात कहना इसलिए जरूरी है क्योंकि भौतिकीय विज्ञान शिक्षण और भौतिकीय विज्ञान की अच्छी कक्षा के बारे में हम जो विमर्श करने जा रहे हैं, उसमें इन सब सवालों को अनदेखा करके कुछ बातों को मान लिया गया है।

15.4.1 कक्षा में स्वतंत्रता

एक तरफ तो हम यह चाहते हैं कि कक्षा में खुले संवाद, नए प्रयोगों, नए विश्लेषण व स्वतंत्र खोजबीन की जगह हो और दूसरी तरफ हम यह भी चाहते हैं कि यह सब किसी हद तक नियंत्रित हो। इसमें पहले से उपस्थित ज्ञान व समझ और सोच के ढाँचे की पर्याप्त उपयुक्त जगह हो।

भौतिकीय विज्ञान की कक्षा का निर्माण इन दोनों को ध्यान में रखते हुए किया जाना उचित होगा। एक कक्षा जिसमें शिक्षक बच्चों को कुछ उपकरण दे और उनसे कहे कि इन उपकरणों से आसपास जो भी दिख रहा है उसके साथ वे जो करना चाहें करें और जिन सवालों पर वे खोज करना चाहें वह करें, व्यवस्थित विमर्श का आधार नहीं बन सकती। उदाहरण के लिए अगर हम सीखने वालों को कुछ छड़ें दे दें जिनमें कुछ चुम्बक हों, कुछ चुम्बक न हों और उनसे कहें कि इनसे वे जो मर्जी चाहें करें तो यह आवश्यक नहीं है कि बच्चे उन छड़ों और छड़ चुम्बकों का चुम्बक के रूप में इस्तेमाल करने का

प्रयास करेंगे। यह सम्भावना अधिक है कि अलग–अलग बच्चे अलग–अलग तरह से सामग्री का इस्तेमाल कर अपने मन से प्रश्नों का निर्माण करेंगे व उन्हें खोजने की कोशिश करेंगे। यह स्वाभाविक प्रक्रिया है। इस खुले माहौल में सीखने वाले एक–दूसरे को देखते भी हैं और समझने का प्रयास करते हैं। दूसरा व्यक्ति क्या कर रहा है कैसे कर रहा है, कर पा रहा है या नहीं आदि हमारी स्पष्टता को बढ़ाने में मदद करेंगे। ऐसी स्वतंत्रता युक्त प्रक्रिया के आधार पर सभी के बीच किसी मसले पर ठोस विमर्श हो पाना मुश्किल है। हर सीखने वाला अपने सवालों व अपने अनुभवों को ज्यादा तूल देगा और उन्हीं के इर्द–गिर्द चर्चा को केन्द्रित करने का प्रयास करेगा। हम कक्षा में यह प्रयास कर सकते हैं कि बच्चों को बगैर बहुत कुछ बताए उन्हें कुछ सामग्री दे दें और उन्हें स्वतंत्र रूप से वे जो चाहें खोजने व जाँचने के लिए मुक्त छोड़ दें।

दूसरे छोर पर यह विकल्प है कि हम बच्चों को सामग्री दें और उनसे कहें कि अमुक प्रयोग ही करो। प्रयोग भी इसी प्रक्रिया से करो और अगर आप यह करोगे तो इसमें यह देखोगे और उसके बाद यह भी बताएँ कि जो वे देखेंगे उसका क्या कारण है? इस विकल्प में बच्चों के लिए स्वयं करने की, ध्यान से अवलोकन करने व सोचने की न तो कोई जगह है और न ही कोई आवश्यकता है। उनके ज्ञान व समझ के साथ नए अवलोकन को जोड़ने की कोई जरूरत नहीं है और उनके दिमाग में जो भी गलतफहमियाँ हैं उनके ऊपर नए अवलोकनों व नए अनुभवों का कोई असर नहीं हो सकता है। महत्वपूर्ण यह है कि उन्हें वही अवलोकन उभारना आ जाए जो कि किताब में लिखे गए हैं और उनके लिए उन निष्कर्षों को बता पाना सम्भव हो जो कि किताब में लिखे गए हैं।

अभी के प्रयोग आधारित भौतिकीय विज्ञान शिक्षण का विमर्श इन दोनों छोरों के बीच झूल रहा है। बातचीत करते समय लोग एक पक्ष व दूसरे पक्ष के बीच की खाई को बगैर पहचाने दोनों पहलुओं के पक्ष में तर्क देते हैं। इसके पीछे कारण तो यह है कि हम इस बात का अहसास नहीं कर पाते कि सीखने में जिज्ञासा व विभिन्न तरह के मौकों के उपलब्ध होने का क्या असर पड़ सकता है।

15.4.2 कक्षा में तथ्य एवं तकनीकों को सीखना

हम लोग यह भी पचा नहीं पाते कि बहुत सारी बातें जो हमें पता हैं और जो हम बच्चों को स्कूल में बताना चाहते हैं वे हमारे ज्ञान के रूप में उपयोगी तो हैं, किन्तु वे तभी तक उपयोगी हैं जब हम अलग–अलग परिस्थितियों में उसके आधार पर कुछ निर्णय ले पाएँ। भौतिकीय विज्ञान में बहुत से तकनीकी शब्द व जानकारियाँ हैं। नित नई चीजें बन रही हैं व नए–नए शब्दों को ईजाद किया जा रहा है। भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के सन्दर्भ में इन शब्दों में से किनको बच्चों को समझना है और अपना बनाना है यह सवाल बहुत महत्वपूर्ण है। हर विषय विशेषज्ञता की तरफ बढ़ते समय कई धाराओं में बँट जाता है। इनमें से अधिकांश धाराएँ महत्वपूर्ण होते हुए भी शुरुआती समझ के लिए अनिवार्य नहीं होतीं। भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के सन्दर्भ में यह भी सोचना आवश्यक है कि आसपास की परिस्थितियों से जोड़ने व विषय के ढाँचे की बुनियादी पायदानों से शुरू करने के बीच कैसे सन्तुलन किया जाए।

भौतिकीय विज्ञान की कई अवधारणाएँ ऐसी प्रतीत होती हैं जो सामान्य प्राकृतिक अवलोकनों व स्वतःजनित समझ से मेल नहीं खातीं। इनमें से कुछ के उदाहरण हैं–

1. भारी और हल्की चीज में से कौन सी चीज पहले नीचे गिरेगी।
2. किसी भी चीज को गति में रखने के लिए बल की आवश्यकता होगी अथवा नहीं।
3. क्या चुम्बक चुम्बकीय पदार्थों को अपनी ओर खींचता है।

4. गन्दे सिर में स्वतः जुएँ उत्पन्न हो जाती हैं, आदि।

ये सब स्वाभाविक अनुभवों के आधार पर उभरे मुद्दे हैं। इन सवालों से जूझना सरल नहीं है क्योंकि रोजमर्रा के अनुभव व सामान्य ढंग से उनके विश्लेषण से यह पुख्ता ही होते हैं।

यह भी कहा जाता है कि बच्चों की सोच समग्र होती है और वे हर चीज को उसकी सम्पूर्णता में देखते हैं। भौतिकीय विज्ञान खास तौर पर ज्ञान को विशेष परिस्थितियों व विशिष्ट सन्दर्भ में परिभाषित करने का प्रयास करता है, जिससे कि भ्रम की स्थिति पैदा न हो। यह सटीक स्पष्टता स्वाभाविक परिस्थितियों में उभरी हमारी समझ से भी मेल नहीं खाती। भौतिकीय विज्ञान के बारे में नैसर्गिक मान्यताओं व वैज्ञानिक अवधारणाओं के बीच खाई के कारण बच्चों को अपने अनुभवों व मान्यताओं को खंगालने के अवसर देना आवश्यक हो जाता है। इसके लिए जाहिर है बच्चे को अपनी अभी की मान्यताओं को व्यक्त करने व जाँचने के मौके मिलने की आवश्यकता है। चूँकि वैज्ञानिक शब्दावली सीखना व उसका इस्तेमाल लिखने, समझने और पढ़ने में करना आगे भौतिकीय विज्ञान सीखने के लिए आवश्यक है इसलिए यह महत्त्वपूर्ण है कि इसके लिए भी कुछ जगह हो। लेकिन यह सोचना भी जरूरी है कि कितने ऐसे शब्द बच्चों के जेहन में हों और उनके उपयोग के प्रति उनमें कितना आत्मविश्वास हो।

15.4.3 भौतिकीय विज्ञान शिक्षा के विविध पहलू

भौतिकीय विज्ञान शिक्षा के विमर्श में इन सब पहलुओं पर कोई भी एक रुख लेना सम्भव नहीं है। न तो हम बच्चों के प्रयोग करने, अपने अनुभवों का विश्लेषण करने व सीखने, तकनीकी भाषा से बचकर अपने शब्दों में अपनी समझ को व्यक्त करने आदि पहलुओं को खारिज कर सकते हैं और न ही हम यह खारिज कर सकते हैं कि भौतिकीय विज्ञान के सन्दर्भ में कुछ तय ज्ञान है और यह ज्ञान अभी मान्य है। इस ज्ञान में कुछ तकनीकी शब्द भी हैं और कुछ भाषाई संरचनाएँ व शब्दावलियाँ भी हैं। भौतिकीय विज्ञान विषय के विमर्श में शामिल होने व आगे बढ़ने के लिए इनको दरकिनार करना सम्भव नहीं है। भौतिकीय विज्ञान की शिक्षा, पाठ्यचर्या व कक्षा के स्वरूप के बारे में बात करते समय इन सब पहलुओं को ध्यान में रखने की आवश्यकता है। यह भी आवश्यक है कि न सिर्फ पाठ्यचर्या निर्माता, पाठ्यपुस्तक लेखक को इसकी समझ हो बल्कि शिक्षक भी इससे परिचित हो व इन अन्तर्विरोधों के बीच अपना रास्ता तय कर पाए। भौतिकीय विज्ञान शिक्षा और सच कहें तो पूर्ण शिक्षा के लिए शिक्षक की इस अहम भूमिका को कम करके नहीं आंका जा सकता है।

हाल के कुछ वर्षों में कई नई तरह की शब्दावलियों को तूल दिया जाने लगा है। शिक्षा के पाठ्यक्रमों में इन शब्दों को व्याख्यायित करने व याद करने पर काफी जोर दिया जाने लगा है। यह भी लगता है कि भौतिकीय विज्ञान की शिक्षा को शिक्षण के कुछ मॉडल व पद्धतियों के सन्दर्भ में ही समझा जाने लगा है। शिक्षक प्रशिक्षण के पाठ्यक्रमों में भी खोज पद्धति, करके सीखो पद्धति, आगमन विधि अथवा पद्धति, निगमन पद्धति, प्रोजेक्ट पद्धति, थीम पद्धति जैसे अनेक शब्द इस्तेमाल होने लगे हैं। कई शब्द ऐसे भी हैं जो न सिर्फ भौतिकीय विज्ञान बल्कि सभी विषयों की शिक्षा के बारे में इस्तेमाल होते हैं, जैसे– बाल केन्द्रित शिक्षा, गतिविधि आधारित शिक्षा आदि आदि। इन सब शब्दावलियों का व्यवहार में क्या उपयोग है और कक्षा के लिए इनके क्या निहितार्थ हैं इसके बारे में कोई स्वाभाविक उदाहरण नहीं हैं। इनकी व्याख्या करते समय उदाहरण दिए जाते हैं वे अक्सर इस प्रकार के होते हैं जो वास्तविक कक्षा में नहीं इस्तेमाल हो सकते। यदि यदा–कदा ये कभी कक्षा में हो भी जाएँ तो भी ये रोज की प्रक्रिया नहीं बन सकते।

15.4.4 भौतिकीय विज्ञान कक्षा में शिक्षक की भूमिका

भौतिकीय विज्ञान की ऐसी कक्षा की रचना, जिसमें बच्चे स्वयं कुछ प्रयोग करें, आँकड़े इकठ्ठे करें, उनका विश्लेषण करें, अपनी राय बनाएँ और उन सबकी राय पर विमर्श हो, कर पाने के लिए कई बातों को ध्यान में रखने की आवश्यकता है। यह भी कि इस तरह की प्रक्रिया के लिए कक्षा का वातावरण, उसमें शिक्षक की भूमिका, बच्चों की कक्षा में भागीदारी, सामग्री की उपलब्धता व उसके उपयोग के नियम आदि पहलू महत्वपूर्ण हो जाते हैं। भौतिकीय विज्ञान सीखने के लिए व अपने मतों को जाँचने के लिए न सिर्फ बच्चों के पास किताबें होनी चाहिए वरन शिक्षकों के पास भी ऐसी किताबें होनी चाहिए जो कक्षा में उठी परिस्थितियों के बारे में सोचने में उनकी मदद कर सकें। अक्सर जब हम कहते हैं कि बच्चों को करके सीखना पद्धति से सिखाना है तो हमारे दिमाग में कुछ निश्चित अवधारणाएँ और निश्चित प्रयोग होते हैं। इन प्रयोगों व धारणाओं का पहले से ही निर्धारण होता है। यह सरल है कि हम ऐसे प्रयोग चुनें जिनके लिए सामग्री एक जैसी हो और जिनके अवलोकनों में विविधता की सम्भावना न हो। किन्तु यह स्पष्ट है कि इस तरह के प्रयोग करना भौतिकीय विज्ञान सीखना नहीं है।

शिक्षक के लिए यह सम्भव नहीं है कि बच्चों के स्वाभाविक अवलोकनों को इन पूर्व निर्धारित प्रयोगों के साथ जोड़ सके। हमारे भौतिकीय विज्ञान शिक्षा के कार्यक्रमों में सामग्री की कल्पना इस प्रकार नहीं होती है कि शिक्षक के लिए नए प्रयोग सोचने की गुंजाइश हो। हमारी यह तैयारी भी नहीं होती कि एक ही सामग्री को कई तरह से इस्तेमाल कर सकें और हर सामग्री का विकल्प सोच पाएँ। कक्षा के संचालन में सामग्री का वितरण व रखरखाव भी एक प्रमुख बाधा बन जाता है। शिक्षक और बच्चों के बीच काम करने का ढंग इस प्रकार का नहीं होता जिसमें कि बच्चे शिक्षक की इस सबमें मदद कर पाएँ। कक्षा का ढाँचा व स्कूल का व्यवहार इस तरह का है जो बच्चों को हमेशा नष्ट करने को आतुर व अनुशासन में बाँधने योग्य मानता है। भौतिकीय विज्ञान की कोई भी कक्षा जिसमें बच्चों को प्रयोग करना है एवं चर्चा करनी है इन मान्यताओं के आधार पर नहीं रची जा सकती।

15.4.5 कक्षा का वातावरण

कक्षा में प्रयोग करते समय, ध्यान से अवलोकन करते समय व उन अवलोकनों को समझते समय यह आवश्यक होता है कि बच्चा अपनी अभिकल्पनाओं को जान सके। अगर वह अवलोकनों को समझ नहीं पा रहा है तो उसको कुछ मदद मिले जिससे कि वह आगे बढ़ पाए। यह अनिवार्य है कि उसे साथियों से चर्चा का मौका हो और कक्षा में बच्चे साथ काम कर पाएँ, यह सब भी सामान्य तौर पर स्कूल के अनुशासन व प्रक्रिया के खिलाफ हो। कोई भी कक्षा जिसमें बच्चे एक साथ बैठकर काम व आपस में चर्चा कर रहे हों, क्रमबद्ध कतारों में पूर्ण शान्ति के साथ संचालित नहीं हो सकती। यह अनिवार्य है कि बच्चों को हिलने–डुलने, आपस में बातचीत करने व एक–दूसरे से सीखने की इजाजत हो। वे प्रश्नों पर बहस कर सकें और अपनी मान्यताओं को स्थापित करने के लिए तर्क कर सकें।

बच्चों में स्वतंत्र रूप से अपने तर्क निर्मित कर पाने की क्षमता के विकास के लिए यह आवश्यक है कि उनकी परिकल्पनाओं व तर्कों का मजाक न उड़ाया जाए। उनके सभी विचारों व विवेचनों को ध्यान से सुना जाए व उन पर धैर्य से चर्चा की जाए। अक्सर कक्षाओं में एक ही सही उत्तर आने की कल्पना होती है और वह सही उत्तर शिक्षक की समझ से निर्धारित होता है। यदि हमें सुनिश्चित करना है कि बच्चे भौतिकीय विज्ञान सीखें तो यह आवश्यक है कि कक्षा का स्वरूप ऐसा न हो। कई सम्भव उत्तरों व बच्चों के तर्क के महत्व से उभरी समझ व प्रक्रियाएँ कक्षा के माहौल में प्रतिबिम्बित हों। हर प्रश्न के कई

तरह के हल हो सकते हैं, यह भी स्पष्ट है कि अलग–अलग दिशा में सोचने पर विषय की समझ व अवधारणा की गहनता बढ़ती ही है।

15.4.6 कक्षा में अधिगम सामग्री

हमने सामग्री के बारे में भी कुछ बात की है और सामान्य सिद्धान्त भी रखे हैं। उदाहरण के लिए रसायनों के लिए रसोईघर व प्राकृतिक रूप से उपलब्ध सामग्री जैसे– हल्दी, चूना, नींबू, इमली आदि का रस। इसके अलावा यह भी सम्भव है कि हम हल्दी के अलावा फूलों के रस का उपयोग एक सूचक की तरह करें। इंजेक्शन की खाली शीशी परखनली का कार्य कर सकती है और दवाई के ड्रॉपर मापन का। यह स्पष्ट है कि इनमें यह उपकरण उस तरह की बारीक गणनाएँ नहीं कर सकते जो प्रयोगशाला में उपलब्ध पिपेट, ब्युरेट आदि से हो सकती है। किन्तु यह हमें मोटे तौर पर सही दिशा दिखा सकते हैं। यदि बच्चों को अवलोकन का व मापन का अर्थ समझ में आ जाए तो वह आगे चलकर ज्यादा बारीकी से प्रयोग करने की आवश्यकता व कौशल सीख सकते हैं। इस तरह की सामग्री के उपयोग के अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं और हर परिस्थिति में ऐसे और भी उदाहरण सोचे जा सकते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि सामग्री अथवा प्रयोगशाला का अभाव भौतिकीय विज्ञान शिक्षा में प्रयोगों के रास्ते में रोड़ा नहीं है। प्रयोगशाला होना अच्छी बात है और वह स्कूलों में होनी भी चाहिए किन्तु सामान्य कक्षाओं में थोड़े से किन्तु ठीक से चुने उपकरणों के साथ बहुत सारे सरल व बच्चों के अनुभवों व समझ को खंगालने व उकसाने के लिए उपयोगी प्रयोग किए जा सकते हैं।

15.5 कक्षा के बाहर भौतिकीय विज्ञान अधिगम

कक्षा के बाहर भौतिकीय विज्ञान का अधिगम हम प्राकृतिक संसाधनों से कर सकते है। यह वह संसाधन है जो हमें प्रकृति ने उपहार के रूप में दिए हैं, इनके बनने में या विद्यमान होने में मानव का कोई हाथ नहीं है। इन्हें हम भौतिक संसाधन भी कहते हैं। भौतिक या प्राकृतिक संसाधनों के अन्तर्गत धरातल, मिट्टी, जलवायु, जलीय क्षेत्र, नदियाँ, सागर, पोखर, महासागर, जंगल, अभ्यारण, शक्ति के साधन (कोयला, पेट्रोलियम, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जल विद्युत), प्राकृतिक वनस्पति (वन, चारागाह) पशु संसाधन इत्यादि सम्मिलित हैं। यह संसाधन प्रकृति द्वारा हमारी पृथ्वी पर विद्यमान है। इनके अलावा हम सौर ऊर्जा, गुरूत्वाकर्षण शक्ति बल, भूमि, खनिज को प्राकृतिक संसाधन की श्रेणी में लाते हैं। उपरोक्त सभी संसाधनों को प्रकृति के साथ–साथ पर्यावरणीय संसाधन भी कहते हैं

प्राकृतिक संसाधन का किसी न किसी रूप में हम उपयोग करते हैं। आज जब तकनीकी के युग में हमारी दिनचर्या इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों, विद्युत उपकरणों, सुख–सुविधाओं से प्रारंभ होती है, वह सब भी इन्हीं प्राकृतिक संसाधनों का मानव द्वारा उपयोगी परिवर्तित रूप है। प्राकृतिक संसाधन के बिना या उनकी अनुपस्थिति में मनुष्य मानव निर्मित संसाधनों का उपयोग सदैव नहीं कर सकता।

ऐसा सम्भव है कि पूर्व में वस्तु का कोई उपयोग न हो परन्तु तकनीकी ज्ञान और अनुभव के चलते उस वस्तु या पदार्थ का उपयोग विद्यार्थियों में ज्ञान का स्तर एवं अनुभव बढ़ाने के लिए हो सकता है अर्थात् अब वह वस्तु भौतिकीय विज्ञान शिक्षण के लिए संसाधन का कार्य करेगी। पहले जो नदियाँ बाढ़ लाती थी, आज उन पर बाँध बना दिए गए है तो यह संसाधन की श्रेणी में आ गई है। इसी तरह कपास से कपड़े बनाने का कार्य घरों में होता था परन्तु नई तकनीकी विकसित हो जाने से उद्योग का रूप लेकर संसाधन की तरह उपयोग हो रहा है।

15.5.1 महासागर

महासागर जल संसाधन है। यह भौतिकीय विज्ञान को सर्वाधिक सस्ते परिवहन के साधन उपलब्ध कराते है। समस्त पारिस्थितिकी तंत्र को आगे बढ़ाते है। पूरे ब्रम्हाण्ड की जलवायु को नियंत्रित रखते है। पर्यावरण में अतिरिक्त कार्बन–डाई–ऑक्साइड को अवशोषित कर पृथ्वी का तापमान संतुलित करते है। महासागर मछली, खनिज तेल, विभिन्न खनिज पदार्थों आदि का संग्रह स्थल भी है। प्रशान्त, अटलांटिक, हिन्द एवं आर्कटिक महासागर विश्व के प्रमुख महासागर है।

15.5.1 तालाब

पोखर जहाँ पानी बहता नहीं है, स्थिर रहता है। यह प्राकृतिक रूप से बनते हैं। इनके अंदर पानी में जलीय पौधे और जानवर रहते हैं। कुछ जन्तु तो इस जल में अपना घर बनाकर रहते हैं। पोखर का वातावरण कई कारकों से प्रभावित होता है। जैसे उसकी गहराई, पोषण तत्व, पेड़ों की छाया की उपस्थिति और गैर–उपस्थिति आदि। पोखर को भौतिकीय विज्ञान शिक्षक संसाधन के रूप में उपयोग कर सकता है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 16: प्रयोगशाला में क्षार से जलने पर क्या करना चाहिए?

....

....

प्रश्न 17: प्रयोगशाला में कटने पर क्या करना चाहिए?

....

....

प्रश्न 18: प्रयोगशाला में विषाक्त होने पर क्या करना चाहिए?

....

....

15.5.3 वन

वनों में विविध प्रकार के वृक्ष पाये जाते है। पेड़–पौधे, लताएं, झाड़ियां, घासें तथा विविध जीव–जन्तु अर्थात् जैव विविधता की दृष्टि से वन प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध होते हैं। भौतिकीय विज्ञान शिक्षण अधिगम में वन भी संसाधन की तरह उपयोग में लाए जाते हैं। वन कई प्रकार के होते हैं, जैसे जलवायु के आधार पर, पर्ण आकृति के आधार पर, पर्ण हरीतिमा के आधार पर एवं स्थिति के आधार पर। भौतिकीय विज्ञान शिक्षक को वन से सम्बन्धित निम्नलिखित बातों को विद्यार्थियों तक पहुँचाना चाहिए तथा यह सब बातें भौतिकीय विज्ञान विषय शिक्षण के उद्देश्य मे सम्मिलित है। इन कारकों के प्रति विद्यार्थियों को जागरूक होना चाहिए जिससे वह पर्यावरण संरक्षण में योगदान दे सकें।

1. वनों की अनियन्त्रित कटाई।

2. वनों में आग लगना।
3. वृक्षारोपण एवं वृक्ष कटाई का अनुपात अव्यवस्थित होना।
4. अत्यधिक पशुचारण।
5. वृक्षों में फैलने वाली बीमारी।
6. वन्य उत्पादों का अधिकतम उपयोग।

वन संसाधन का महत्व :

1. वन में लगे वृक्षों के द्वारा वायु में नमी पैदा होती है जो वर्षा में भी सहायक होती है।
2. वनों से भी पर्यावरण संतुलन बना रहता है।
3. वनों पर कई उद्योग निर्भर रहते है।
4. वनों द्वारा उस क्षेत्र की जलवायु का निर्धारण होता है।
5. वन से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कई पदार्थों का निर्माण होता है।

वनों के संरक्षण, पर्यावरणीय महत्व, आर्थित महत्व से परिचित कराकर वनों की उपयोगिता को विद्यार्थियों तक पहुँचाया जाया जा सकता है और भौतिकीय विज्ञान विषय की पाठ्य–वस्तु के अधिगम में भी आवश्यकतानुसार संसाधन के रूप में इस्तेमाल कर सकते है। जिस स्थान पर विद्यालय उपस्थित है, उस स्थान की जलवायु, आसपास के पर्यावरणीय वातावरण, जंगलों का ज्ञान, जीव–जन्तु का ज्ञान तथा अन्य संसाधन जो लोकल पर्यावरण के हैं, उन्हें शिक्षण में पहचानना तथा उपयोग में लाना भौतिकीय विज्ञान शिक्षक को आना चाहिए।

15.5.4 नदियां

''जल बिन सब सूना'' यह चार शब्द जल की महत्वता को समझाने के लिए उपयुक्त है। मतलब जल नहीं तो कुछ नहीं। जल श्रेष्ठतम आर्थिक सम्पदा अथवा संसाधन है। जल संसाधन की दृष्टि से पृथ्वी के 71.6 प्रतिशत (लगभग 3/4 भाग) पर जल है। इसलिए इसे नीला ग्रह भी कहते है। समस्त सतही जल का 97 प्रतिशत समुद्र है जो अत्यधिक लवण युक्त है। 2.08 प्रतिशत जल की मात्रा ठोस ध्रुवीय बर्फ के रूप में है तथा 0.09 प्रतिशत वायुमण्डल में जलवायु के रूप में है। विश्व की वर्षा समस्त वर्षा का बहुत थोड़ा भाग झीलों, तालाबों, नदी–नालों में मिल पाता है। 8 प्रतिशत जल प्रत्यक्षतः समुद्रों में बरसता है। विश्व की समस्त नदियां मात्र 0.00008 प्रतिशत जल ही प्राप्त कर पाती है। कुल जल का 0.6 प्रतिशत सतही जल स्त्रोतों के रूप में मिल पाता है। झीलों और नदियों में कुल ताजे जल का 0.035 प्रतिशत है। इस प्रकार जल संसाधनों को वितरण की दृष्टि से तीन प्रकार से बाँट सकते है :–

1. स्थलीय जल संसाधन
2. मद्यसागरीय जल संसाधन
3. भूमिगत जल संसाधन

नदियां स्थलीय जल संसाधन के वर्ग में आती है। पशुपालन, कृषि, उद्योग, व्यापार, वाणिज्य, भोजन, आवास और स्वच्छता के लिए अपरिहार्य संसाधन है। भौतिकीय विज्ञान विषय पढ़ने वालों को इनकी प्रकृति तथा इनके संरक्षण का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। पाठ्य–वस्तु से जोड़कर इन संसाधनों को अधिगम के लिए उपयोग में लाना चाहिए।

15.6 सारांश

प्रयोगात्मक कार्यों से ही विद्यार्थी की रचनात्मक कार्य करने की शक्ति का विकास होता है जो भौतिकीय विज्ञान विषय शिक्षण के मुख्य उद्देश्यों में से हैं। भौतिकीय विज्ञान विषय का ज्ञान, अवबोध एवं कौशल सीखने के लिए विद्यार्थियों को प्रयोगशालाओं का प्रयोग करना अत्यन्त आवश्यक है। प्रयोगशाला द्वारा प्रेक्षण लेने, विश्लेषण करने व निष्कर्ष निकालने से उसमें सोचने–विचारने, निरीक्षण करने, निर्णय लेने और व्यवस्था करने की क्षमता का विकास होता है। जिन पाठ्य–वस्तुओं को शिक्षकों द्वारा सैद्धान्तिक रूप से छात्रों को समझाने में दिक्कत आती है उन्हें प्रायोगिक रूप से प्रयोगशाला में कराने पर शिक्षण प्रभावी भी होता है तथा विद्यार्थियों को हमेशा याद भी रहता है। भौतिकीय विज्ञान के सन्दर्भ में कुछ तय ज्ञान है और यह ज्ञान अभी मान्य है। इस ज्ञान में कुछ तकनीकी शब्द भी हैं और कुछ भाषाई संरचनाएँ व शब्दावलियाँ भी हैं। भौतिकीय विज्ञान विषय के विमर्श में शामिल होने व आगे बढ़ने के लिए इनको दरकिनार करना सम्भव नहीं है। कक्षा के बाहर भौतिकीय विज्ञान का अधिगम हम प्राकृतिक संसाधनों से कर सकते है। यह वह संसाधन है जो हमें प्रकृति ने उपहार के रूप में दिए हैं, इनके बनने में या विद्यमान होने में मानव का कोई हाथ नहीं है। इन्हें हम भौतिक संसाधन भी कहते हैं।

15.7 अभ्यास प्रश्न

1. भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला को परिभाषित कीजिए?
2. भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला की डिजाइन तैयार कीजिए?
3. भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला में सुरक्षा के उपायों का वर्णन कीजिए?
4. भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला के महत्व का निर्धारण कीजिए?
5. कक्षा में भौतिकीय विज्ञान अधिगम के अर्थ को स्पष्ट कीजिए?
6. कक्षा के बाहर भौतिकीय विज्ञान अधिगम का विस्तार से वर्णन कीजिए?

15.8 चर्चा के बिन्दु

1. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला पर चर्चा करेगें।
2. छात्राध्यापक आपस में भौतिकीय विज्ञान प्रयोगशाला की डिजाइन पर चर्चा करेंगें।
3. छात्राध्यापक आपस में कक्षा के बाहर भौतिकीय विज्ञान अधिगम पर चर्चा करेंगें।

15.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. अध्यापन के दौरान पाठ्य सामाग्री को समझाते समय शिक्षक जिन–जिन सामाग्रियों का प्रयोग करता है वह सहायक सामाग्री कहलाती है।
2. आज वही शिक्षक छात्रों के लिए आदर्श होता है, और उसी शिक्षक का शिक्षण आदर्श शिक्षण कहलाता है जो अपनी पाठ्य सामग्री को इन रोचक सहायक सामग्री के माध्यम से प्रस्तुत करता है।
3. श्यामपट्ट जैसा कि नाम से स्पष्ट है, एक ऐसी श्याम (काली) आयताकार आकृति जो लकड़ी, प्लाईवुड, गत्ते, सीमेन्ट अथवा धातु का टुकड़ा है जिस पर आवश्यकतानुसार लिखा व मिटाया जा सकता है। प्रश्न

4. फ्लैनल बोर्ड का प्रदर्शन उन कार्यों में बहुत उपयोगी सिद्ध होता है जिनमें विद्यार्थियों से पहचान का कार्य करवाना हो।
5. चार्ट एक दृश्य सामग्री चिन्ह है जो विषय–वस्तु के सार, तुलना या किसी दूसरी क्रिया की व्याख्या करने में सहायता देता है।
6. मॉडल से तात्पर्य किसी वस्तु का ऐसा प्रतिरूप है जिसे देखकर उस वस्तु के बारे में अच्छी तरह जानकारी प्राप्त की जा सके।
7. पाठ्य–पुस्तक शिक्षण क्रियाओं एवं अभिप्रायों के लिए सुव्यवस्थित चिन्तन एवं ज्ञान का लिखित रूप है।
8. मौन अध्ययन और स्वाध्याय की प्रेरणा पाठ्य पुस्तक मिलती है।
9. पाठ्य पुस्तक के 4 प्रकार, प्रचलित पाठ्य–पुस्तकें, अनुभवों पर आधारित पाठ्य–पुस्तकें, प्रचलित तथा अनुभवों पर आधारित पाठ्य–पुस्तकें, अभिक्रमित अनुदेशन पाठ्य–पुस्तकें है।
10. अभिक्रमित अनुदेशन पाठ्य पुस्तक का प्रतिपादन बी०एफ० स्किनर ने किया।
11. हस्त पुस्तिका लेखन का मूल सिद्धांत सूचनाओं को संक्षिप्त तथा पर्याप्त छोटे रूप में हाथों तक पहुंचाया जाय, है।
12. हस्त पुस्तिका सामान्यतया छात्रों द्वारा तैयार किया गया प्रकाशन है, जो विद्यालय अथवा कालेज जीवन के लिए अधिक शीघ्रता से स्वयं को समायोजित करने में छात्र की सहायता के लिए उद्दिष्ट अनावश्यक तथ्यों से उद्यत संदर्भ प्रस्तुत करती है।
13. प्रयोगात्मक कार्यों से ही विद्यार्थी की रचनात्मक कार्य करने की शक्ति का विकास होता है जो भौतिकीय विज्ञान विषय शिक्षण के मुख्य उद्देश्यों में से हैं। इन्हीं से उसका बौद्धिक विकास भी सम्भव हो पाता है तथा कल्पना शक्ति, निरीक्षण शक्ति, तर्क शक्ति तथा निर्णय शक्ति का विकास होता है।
14. प्रयोगशाला निर्माण में 6 कारकों रेखीय बेन्च स्थान ए सरकूलेशन स्पेस, संग्रहन (स्टोरेज), स्थायी उपकरण, वॉल स्पेस, प्रदर्शन बेंच का ध्यान रखना चाहिए।
15. प्रयोगशाला में आग से जलने पर जले हुए स्थान को गीला करके अगर उस पर साधारण नमक बहुत मात्रा में लगा दिया जाए तो इससे फफोले पड़ने की सम्भावना बहुत कम हो जाती है। फफोले पड़ने पर नारियल के तेल को चूने के पानी में फेंटकर जले हुए स्थान पर लगाना चाहिए।
16. क्षार से जल जाने पर जले स्थान को तुरन्त बहुत अधिक पानी से धो देना चाहिए और फिर उसे 1 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल या नींबू के रस से धो देना चाहिए।
17. मामूली कटने पर टिंक्चर आयोडिन तथा डिटोल आदि में भिगोई हुई रूई रखकर पट्टी बाँध देनी चाहिए। यदि कोई प्रमुख धमनी कट जाए तो डॉक्टर को तुरन्त सूचना देनी चाहिए।
18. ऐसी अवस्था में तुरन्त डॉक्टर को बुलाना चाहिए। डॉक्टर के आने से पहले प्राथमिक उपचार के तौर पर साधन अपनाए जा सकते हैं – अगर किसी विषैले पदार्थ को मुँह में रख लिया गया हो, परन्तु निगला नहीं गया हो तो तुरन्त थूक देना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ

- **एन.सी.ई.आर.टी. (2012).** *सोर्सबुक ऑन एसेसमेंट फॉर क्लासेस 6–8 साइंस,* नई दिल्लीः सी.बी.एस.ई.।

- **एन.सी.ई.आर.टी. (2013).** *पेडागॉजी ऑफ साइंस टेक्स्ट बुक फॉर बी.एड. पार्ट–2,* नई दिल्लीः सी.बी.एस.ई.।
- **कोहली, विजय कुमार (1998).** *विज्ञान कैसे पढ़ाएं,* विवेक पब्लिशर्ज, अमृतसर।
- **कुमार, दीपक, (2016).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* ओसीन पब्लिकेशन वाराणसी।
- **मंगल, एस. के.(2008).** *शिक्षा मनोविज्ञान,* प्रिंटिग हॉल ऑफ इंडिया, नई दिल्ली।
- **भौतिक विज्ञान का शिक्षणशास्त्र (2011).** शिक्षक–शिक्षा विभाग, शिक्षा विद्या शाखा, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी।
- **भार्गव, महेश (1990).** *आधुनिक मनोवैज्ञानिक एवं मापन,* कचहरी, आगरा।
- **श्रीवास्तव, पी.सी. (2018).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
- **शर्मा, एस.एन. एवं शर्मा अंजना (2003).** *आधुनिक मनोविज्ञान के आधार,* एच. पी. भार्गव, बुक हाउस, आगरा।
- **शर्मा, एस.एन. (2007).** *शिक्षा में मनोविज्ञान,* एच. पी. भार्गव, बुक हाउस, आगरा।
- **शर्मा, रवीन्द्र कुमार (2001).** *शिक्षण–अधिगम के मूल तत्व,* श्री राम पब्लिकेशन, भिवानी।
- **शर्मा, आर.ए. (2008).** *शिक्षण–अधिगम के मूल तत्व,* लायल बुक डिपो, मेरठ।
- **शर्मा, आर.ए. (2011).** *छात्र का विकास एवं शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया,* आर लाल बुक डिपो, मेरठ।
- **सी.बी.एस.ई. (2010).** *फॉरमेटिव एसेसमेंट मैनुअल फॉर टीचर्स क्लास –10 (साइंस),* नई दिल्लीः सी.बी.एस.ई.।
- **सी.बी.एस.ई. (2016).** *रिवाइज्ड फॉरमेटिव एसेसमेंट मैनुअल फॉर टीचर्स क्लास –9 (साइंस),* नई दिल्लीः सी.बी.एस.ई.।
- **सुन्द्रियाल, सुनीता (2019).** *टीचिंग ऑफ फिजिकल साइंस,* अग्रवाल पब्लिकेशन, कानपुर।
- **सूद, जे.के. (2017).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* अग्रवाल पब्लिकेशन, कानपुर।
- **नेगी, जे.एस. (2020).** *भौतिक विज्ञान शिक्षण,* श्री विनोद पुस्तक मंदिर, वाराणसी।
- **ओबराय, एस.सी. (2006).** *शिक्षण–अधिगम के मूल तत्व,* शोभित प्रकाशन, भिवानी।

- **अस्थाना, विपिन (1999).** *मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन,* श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

- **अग्रवाल, जे.सी. (2005).** *शिक्षा के सिद्धान्त तथा तकनीक,* आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली।

- **गुप्ता, रेनू, वर्मा, अवधेश कुमार एस. और कुमारी, विनोद (2016).** *अधिगम एवं शिक्षण,* ठाकुर पब्लिशर्स, लखनऊ।